श्री रामकृष्णसहस्रनामस्तोत्तम्

(सहस्रनामार्चनासहितम्)

[अन्वय, शब्दार्थ, आशय-अनुवाद और टीका सहित]

लेखक—अध्यापक भण्डारकर, उपनामक श्री त्र्यम्बक शर्मा
साहित्याचार्य, एम० ए० (डबल स्वर्ण-पदक प्राप्त)

तथा

अध्यापक श्री पाँचुगोपाल वन्द्योपाध्याय एम० ए०
(डबल गोलकचन्द्र घोष गोल्डमैड्लिस्ट)
चतुष्तीर्थ, काव्यविशारद।

सम्पादक—आचार्य श्री आनन्द झा, न्यायाचार्य, वेदान्त-वागीश, साहित्यालंकार, कवितार्किक-चक्रवर्ती, प्रधान, प्राच्य संस्कृत विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय।

अन्वय, शब्दार्थ और आशय-अनुवादक—
अध्यापक श्रीपाँचुगोपाल वन्द्योपाध्याय, एम० ए०
(डबल) चतुष्तीर्थ, काव्यविशारद।

रामकृष्ण-शिवानन्द आश्रम,

बारासत, २४ परगना

प्रकाशक :—

सम्पादक, रामकृष्ण शिवानन्द आश्रम
पोस्ट—बारासत, जिला—२४ परगना

उपस्थापक—स्वामी अपूर्वानन्द

इस ग्रन्थ का समस्त लभ्यांश बारासत के रामकृष्ण-शिवानन्द आश्रम में श्री श्री ठाकुर जी की सेवा में समर्पित होगा ।

प्रथम संस्करण—जनवरी, १६७५

मुद्रक —श्री विश्वनाथ दत्त,
दी इउरेका प्रिंटिंग वर्क्स (प्राइवेट) लिमिटेड,
गोदौलिया, वाराणसी ।

मुखपृष्ठ —दी इउरेका प्रिंटिंग वर्क्स (प्राइवेट) लिमिटेड,
गोदौलिया, वाराणसी ।

मूल्य—साधारण ८·५० रु०, लिम्प १० रु०

प्रकाशक का निवेदन

युगावतार श्रीश्रीरामकृष्ण देव की असीम अनुकम्पा से दीर्घदिन-वांछित 'श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्रम् (सहस्रनामार्चनासहितम्) ग्रन्थ अन्वय, शब्दार्थ, आशय-अनुवाद तथा कुछ टीका समेत प्रकाशित हुआ।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन में हमें अनेकों की अकुण्ठ सहायता और सहयोगिता मिली है। इसके लिए हम उनके आभारी हैं। इस ग्रन्थ की रचना दो विशिष्ट पण्डितों ने की है। ग्रन्थ के प्रथमांश के रचयिता हैं महाराष्ट्र देशीय पण्डित अध्यापक टी. ए. भण्डारकर, सहित्याचार्य, एम. ए. (डबल) स्वर्णपदक प्राप्त महोदय और ग्रन्थ के शेषांश तथा 'श्रीरामकृष्णसहस्रनामार्चना' के रचयिता हैं पण्डित प्रवर अध्यापक पाँचुगोपालवन्द्योपाध्याय, एम. ए. (डबल, स्वर्णपदक प्राप्त) चतुष्तीर्थं महोदय। उन्होंने ही समस्त ग्रन्थ का अन्वय, शब्दार्थ इत्यादि के साथ सम्पादन कर ग्रन्थ को सबके लिए बोधगम्य और सर्वाङ्गसुन्दर बनाया है।

अध्यापक पण्डित भण्डारकर महोदय ने 'श्रीरामकृष्णोपदेशद्विशती.' 'स्वामीविवेकानन्दोपदेशद्विशती' प्रभृति निबन्ध तथा श्रीश्रीरामकृष्ण देव, श्रीश्रीशारदादेवी और स्वामी विवेकानन्दजी के सम्बन्ध में १५-१६ स्तोत्रों की रचना करके श्रीरामकृष्ण-अद्वैताश्रम, वाराणसी के अध्यक्ष के हाथ में प्रकाशन के लिए दिया है। उन संस्कृत रचनाओं को भविष्य में पृथक् ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित करने का विचार है।

आचार्य श्रीआनन्द झा, न्यायाचार्य, वेदान्तवागीश, साहित्यालंकार, कवितार्किक, चक्रवर्ती प्रधान, संस्कृत विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय के महोदय ने इस ग्रन्थ का सम्पादन कर और एक सुचिन्तित सम्पादकीय

निबन्ध की रचना द्वारा ग्रन्थ को समृद्ध बनाया है और हमें कृतज्ञता-पाश में आबद्ध किया है। उनके लिए भी हमारा आन्तरिक धन्यवाद है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन के लिए हम लोग कलकत्ते में रहने वाली श्रीमती हेम नलिनी माड़िक महोदया के प्रति बहुत आभारी हैं तथा श्रीश्री रामकृष्णदेव के चरण-कमलों में उनकी कल्याण-कामना करते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक लोगों से भी हमें सहायता मिली है, इसलिए हम उन सभी की कल्याण-कामना श्रीभगवान् के चरण-कमलों में करते हैं।

पूजा, अर्चना और होमादि करने की सुविधा के लिए इस ग्रन्थ के अन्त में काशी निवासी दशकर्मवित् पण्डित श्रीविश्वेश्वर भट्टाचार्य, एम. ए., काव्यव्याकरणतीर्थ, भागवताचार्य महोदय के द्वारा रचित संक्षिप्त "नित्यपूजा-अर्चना-होमपद्धति" को संयोजित किया गया है। इस पूजा-पद्धति के रचयिता पण्डित-प्रवर को भी हमारा हार्दिक धन्यवाद है।

स्वामी अपूर्वानन्द महाराज ने इस ग्रन्थ को बारासत के रामकृष्ण शिवानन्द आश्रम की देव-सेवा में उत्सर्ग कर हमें विशेष रूप से उपकृत किया है।

विभिन्न कारणों से इस ग्रन्थ की छपाई में कुछ मुद्रण की अशुद्धियाँ तथा अन्य प्रकार की त्रुटियाँ भी रह गई हैं, इसलिए मैं बहुत दुःखी हूँ। परवर्ती संस्करण में इन सब गलतियों को दूर करते हुए एक बिशद टीका सहित इस ग्रन्थ को प्रकाशित करने की तीव्र इच्छा है।

सैकड़ों बाधा-विघ्नों का अतिक्रमणकर इस ग्रन्थ का आत्मप्रकाश करने में सफलता मिली है, इस कारण हम लोग भगवान् श्रीरामकृष्ण-देव के चरणों में कृतज्ञतापूर्ण प्रणाम करते हैं। जो लोग भक्तिपूर्ण हृदय से इस ग्रन्थ का अति सामान्य अंश भी रोज नियमपूर्वक पाठ करेंगे उनका कल्याण अवश्य होगा, इसमें थोड़ा भी सन्देह नहीं है।

श्रीश्रीरामकृष्णदेव के चरणों में यही करबद्ध प्रार्थना है कि जो लोग इस ग्रन्थ का नित्य पाठ करेंगे उन पर उनकी कृपा वर्षित हो ।

इस ग्रन्थ के पाठ से यदि एक भी व्यक्ति के हृदय में श्रीश्रीरामकृष्ण देव के प्रति यथार्थ भक्ति का उद्रेक होगा तो हमलोग अपने को धन्य समझेंगे । इति

प्रकाशक

ग्रन्थ का पूर्वाभास

स्वामिविवेकानन्द महाराज की शतवार्षिकी के अवसर पर स्वामी जी रचित स्तोत्र आदि से श्रीश्रीरामकृष्णदेव के १०८ नामों का संग्रह कर उन नामों की सहायता से एक स्तोत्र की रचना का अनुरोध हमलोगों ने प्रो०टी०ए० भण्डारकर महोदय से किया था और उन्होंने भी थोड़े दिनों में "श्रीरामकृष्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम्" नाम से एक सुललित स्तोत्र की रचना की है। उस स्तोत्र का अनुवाद एक पुस्तिका के रूप में होने पर वह सब लोगों के लिए बहुत आदरणीय हुआ। वस्तुतः उस स्तोत्र ने हमें दीर्घकालवांछित 'श्रीश्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्रम् (अर्चना-सहितम्)' ग्रन्थ का उपादान संग्रह करने की प्रेरणा दी और हमें आशान्वित भी किया। इसके फलस्वरूप 'श्रीरामकृष्णसाहित्य', "स्तोत्र" आदि तथा "गीतावली" से श्रीश्रीरामकृष्णदेव के जीवन का धारावाहिक इतिहास इतिवृत्त के रूप में और गुण-कर्म-दिव्यलीला-महिमावाचक प्रायः डेढ़ हजार नामों का संग्रह किया गया। इन नामों के आधार पर पण्डित प्रो० टी० ए० भण्डारकर, एम० ए० (डबल-स्वर्णपदक-प्राप्त), साहित्याचार्य तथा पण्डित प्रो० पाँचुगोपाल वन्द्योपाध्याय, एम० ए० (डबल-स्वर्णपदक-प्राप्त), चतुष्तीर्थ, काव्य-विशारद इन दोनों पण्डितों ने दो सौ संस्कृत श्लोकों के रूप में "श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्रम्" की रचना की और समग्र ग्रन्थ का अन्वय, शब्दार्थ, आशय-अनुवाद तथा 'श्रीरामकृष्णसहस्रनामार्चना' की रचना की है प्रो० पाँचु गोपाल ने। इन दोनों पण्डितों की निःस्वार्थ सेवा और सश्रद्ध कार्य के लिए हमलोग उनके बहुत आभारी हैं।

महाभारत में वर्णित श्रीविष्णुदेव-कथित अनुपम तथा आनन्दप्रद 'विष्णुसहस्रनाम' अति प्राचीन और प्रसिद्ध रचना है। (उसके पहले

और भी कुछ सहस्रनाम-स्तोत्र रचित हुए या नहीं इसका ठीक प्रमाण नहीं मिलता)। आदि शङ्कराचार्यजी ने उस 'विष्णुसहस्रनाम' की भाष्य-रचना की थी। उसके फलस्वरूप 'विष्णुसहस्रनाम' विशेष रूप से प्रसिद्ध हुआ, ऐसा पण्डितों का मत है। उसके पहले यह विष्णुसहस्रनाम' महाभारत के एक अंश के रूप में गृहीत होता था। उसके बाद भारत के विभिन्न प्रान्तों में शिव-सहस्रनाम, ललिता-सहस्रनाम प्रभृति का बहुल रूप से प्रचार हुआ।

पुरुषोत्तम श्री भगवान् के विराट् रूप का वर्णन उनके सहस्रसिर, सहस्रचक्षु, सहस्रबाहु, सहस्रपद इत्यादि के रूप में हुआ है। अतः उनके सहस्र नामों की परिकल्पना भी स्वाभाविक है, परन्तु प्रचलित सहस्र नामों में प्रयुक्त अधिकांश नाम ही प्रतिपाद्य देवताओं के गुण और महिमाव्यंजक हैं परन्तु आलोच्य श्रीरामकृष्ण 'सहस्रनामस्तोत्रम्' का अपना स्वतन्त्र वैशिष्टय यह है कि इसके अधिकांश नाम ही तत्त्वात्मक और लीलावाचक हैं। इसके फलस्वरूप इससे श्रीरामकृष्णदेव के दिव्य जन्म से लेकर महापरिनिर्वाण पर्यंत अलौकिक लीला की अन्तर्भुक्त प्रधान घटनाओं का विवरण मिलता है। उनके आविर्भाव का प्रयोजन, उनकी साधना और सिद्धि का असाधारण वैशिष्टय, उनका अभिनव युग-भावादर्श सब कुछ इस सहस्रनामरूप में निर्वाचित शब्दों की सहायता से वर्णित हुए हैं। फलतः इस 'सहस्रनामस्तोत्रम्' को भाष्यप्रतिम श्रीरामकृष्ण साहित्य का सुललित, सार्थक, छन्दोबद्ध, सूत्रग्रन्थ निःसन्देह रूप से कहा जा सकता है। संस्कृत भाषा में रचित छन्दोबद्ध इस सूत्रात्मक ग्रन्थ का पाठ करने से थोड़े ही समय में श्रीरामकृष्णदेव की दिव्यजीवनलीलामाधुरी का अनुध्यान करने में सहायता मिलेगी और साथ ही साथ भगवान् के दिव्य आविर्भाव की महिमा भी कथंचित हृदयंगम करने की सुविधा होगी।

नित्य पूजा के साथ अर्चना करना भी सम्भव हो उसके लिए ग्रन्थ के परिशिष्ट में (क) श्रीरामकृष्णाष्टोत्तरसत्यनामार्चना, (ख) सामान्य

संकल्प-प्रकरण, (ग) विशेष-संकल्प-प्रकरण तथा (घ) संक्षिप्त शुद्धिपत्र संयोजित कर दिये गये हैं। पूजादि के लिए जो लोग अधिक समय नहीं लगा सकते वे यदि केवल इस अर्चना का प्रतिदिन अनुष्ठान करें तो उनका अन्तर एक दिव्य आध्यात्मिक सौरभ से आमोदित होता रहेगा।

पाठकों से बिनीत अनुरोध यह है कि यदि अपने ग्रन्थ का शुद्धिपत्र की सहायता से संशोधन कर लें तो वे विशुद्ध रूपसे पाठ करने का आनन्द प्राप्त कर सकेंगे।

जो भक्त श्रद्धालु होकर इस 'सहस्रनामस्तोत्रम्' और 'सहस्रनामार्चना' के अति अल्प अंश का भी नित्य पाठ या आवृत्ति करेंगे तो वे श्रीश्रीराम-कृष्ण और श्रीश्री शारदा देवी के विपुल आशीर्वाद के अधिकारी होंगे।

इति

जनवरी, १९७५ — उपस्थापक

सम्पादकीय

स्तोत्र-रचना की परम्परा सुदीर्घकालीन है। वेद एवं विशाल पुराण-साहित्य स्तोत्रों से भरा पड़ा है। इसका कारण यह है कि स्तोत्र जहाँ भक्तों के भावुक हृदय को भक्ति-गंगाजल से सींचता है वहाँ वह उनके हृदय में तत्त्वज्ञान रूपी सूर्य के प्रतिबिम्ब की भी सृष्टि करता है।

स्तोत्रों की एक विस्तृत शाखा है नाम-स्तोत्र-शाखा, जिसके अन्दर दशनाम स्तोत्र से प्रारंभ कर सहस्र-नाम-स्तोत्र तक अन्तर्भुक्त होते हैं। सहस्रनाम-स्तोत्र की भी संख्या सुविस्तृत है, जिसके अन्दर विष्णुसहस्रनाम, शिवसहस्रनाम, दुर्गासहस्रनाम, ललितासहस्रनाम, आदि कुछ सहस्रनाम स्तोत्र अति प्रसिद्ध हैं। श्रीविष्णुसहस्रनाम पर तो आद्य शंकराचार्य ने अपना भाष्य तक लिख डाला। उसी प्रकार ललितासहस्रनाम पर भी श्रीभास्कर राय ने भाष्य रचा।

प्रकृत श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्र भी उसी परम्परागत सहस्रनाम स्तोत्र की कड़ी में एक नवीन सहस्रनाम-स्तोत्र है। इसके रचयिता हैं प्रो० टी० ए० भण्डारकर, दो विषय में एम० ए०, साहित्याचार्य (प्राप्तस्वर्णपदक), तथा प्रो० पी० जी० बनर्जी, दो विषय में एम० ए०, (प्राप्तस्वर्णपदक) और चतुष्तीर्थ, काव्यविशारद। श्रीरामकृष्ण साहित्य से अपेक्षित उपादान का संग्रह स्वामी अपूर्वानन्दजी ने किया, जिन्होंने श्रीरामकृष्णसाहित्य के संस्कृतीकरण का व्रत-सा ले रखा है।

अन्य सहस्रनामों के अन्दर ऐसे भी कुछ नाम पाये जाते हैं जो केवल संख्यापूरक से प्रतीत होते हैं और अधिकतर सहस्र-नाम उन नामों के नामी देवी-देवताओं के गुणों के ही व्यापक पाये

जाते हैं और उनकी प्रशंसा करते हैं। इस श्रीरामकृष्णसहस्रनाम-स्तोत्र की विशेषता यह दृष्टिगोचर है कि इसके अन्दर आने वाले अधिकतर नाम पूज्यनामी की प्रशस्त-क्रियाओं के ख्यापनार्थ प्रयुक्त हुए हैं।

सारांश यह है कि इस श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्र में आनेवाले नाम परमहंस श्रीरामकृष्णदेवजी की विभिन्न सत्य और स्फूर्तिप्रद जीवन-घटनाओं की याद दिलाते हैं, जिसके फलस्वरूप सारा रामकृष्ण-साहित्य इस सहस्रनाम स्तोत्र के भाष्य का स्थान ग्रहण करता है और यह सहस्रनाम स्तोत्र उक्त विस्तृत साहित्य रूपी भाष्य के सूत्र का स्थान लेता है कुछ घटनाएँ नियमतः सत्य हुआ करती हैं। अतः घटनाख्यापक नाम गुणख्यापक नामों से अधिक सत्यनिष्ठ होते हैं।

इस सहस्रनाम स्तोत्र के अन्तर्गत नामों के निर्माण और चयन में इस बात का पूर्ण रूप से ध्यान रखा गया है कि इसके अन्दर परमहंस देवजी की उन सारी जीवन-लीलाओं का अविकलरूप से समावेश हो जाये, जो उनके जन्म से लेकर महानिर्वाण-प्राप्ति तक घटी थीं। उनके अवतार का कारण, उनकी अनुपम साधना, सर्व धर्म-समन्वय और जीव-सेवा रूप-कर्म का प्रतिपादन आदि घटनाएं इस सहस्रनाम स्तोत्र के अन्दर निर्वाचित नामों में रचित हैं। तदनुसार इसे भली-भाँति परमहंस देवजी की सूत्रात्मक जीवनी कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी। अगर हम गम्भीरता से ध्यान देकर देखें तथा अन्य सहस्रनामों से इसकी तुलना करें तो यह निश्चित रूप से विदित होगा कि यह इसका अपना स्वतन्त्र वैशिष्ट्य है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस सहस्रनाम स्तोत्र के प्रचार से प्रबुद्ध-समाज में धार्मिक-जीवन के प्रति वह निष्ठा अवश्य उत्पन्न होगी जो कि कल्याणमय जीवन के लिए नितान्त अपेक्षित होती है। इससे गतानुगतिकता पर चलने वाले मानव-समाज का भी कल्याण होगा

क्योंकि धर्म के ऊपर आस्था घटने पर ही समाज में नाना प्रकार की बुराइयां आती और पनपती हैं।

अन्त में इसके पाठकों से यह क्षमा याचना है कि वे मुद्रणगत अशुद्धियों को शुद्ध करके पाठ करें क्योंकि धार्मिकता के लिये पाठगत शुद्धि की नितान्त आवश्यकता सर्वमान्य है। इति

आनन्द झा
प्रधान
प्राच्य संस्कृत विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय
२५-४-७४

श्रीगणेशाय नमः

अथ श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्रम्

 यं वैष्णवा विष्णुमुदाहरन्ति
शैवाः शिवं बुद्धमथापि बौद्धाः ।
तीर्थंकरं जैनजना महान्तं
तं रामकृष्णं परमं नमामः ॥१॥

अमेयायातिमायाय ज्ञातलोकाय ते नमः ।
सर्वज्ञाय सुसत्त्वायाविज्ञाताय हि ते नमः ॥२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—यम् जिन्हें, वैष्णवाः वैष्णव लोग, विष्णुम् विष्णु, उदाहरन्ति कहते हैं, शैवाः शिवोपासक, शिवम् शिव, अपि और भी, बौद्धाः बौद्ध लोग, बुद्धम् बुद्ध, जैनजनाः जैनलोग, तीर्थंकरम् तीर्थंकर कहते हैं, तम् उन, महान्तम् महान, परमम् श्रेष्ठ, रामकृष्णम् रामकृष्ण को, नमामः हम नमस्कार करते हैं ॥१॥

आशय अनुवाद—जिन्हें वैष्णव लोग विष्णु कहते हैं, शिवोपासक लोग शिव, बौद्ध लोग बुद्ध तथा जैन लोग तीर्थंकर कहते हैं, उन महान और श्रेष्ठ रामकृष्ण को हम नमस्कार करते हैं ॥१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—अमेयाय अप्रमेय, अतिमायाय मायातीत, ज्ञातलोकाय भूः आदि लोकों के ज्ञाता, ते आपको, नमः नमस्कार है,

लोकानां कार्यसिद्ध्यर्थमजायापि सुजन्मने ।
निर्गुणायापि देवाय गुणयुक्ताय ते नमः ॥३॥
प्रसन्नाय प्रपन्नानां निरीहाय तपस्यते ।
अयनाय विरागाणां सच्चित्सुखाय ते नमः ॥४॥

सर्वज्ञाय सर्वज्ञ, सुसत्त्वाय अतीव सत्त्व गुणान्वित, अविज्ञाताय अज्ञेय, हि निश्चय ही, ते आपको, नमः नमस्कार करता हूँ ॥२॥

आशय अनुवाद—अप्रमेय, मायातीत, भूः आदि लोकों के ज्ञाता आपको नमस्कार है। सर्वज्ञ, अतीव सत्त्वगुणान्वित, अज्ञेय आपको निश्चय ही नमस्कार करता हूँ ॥२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—लोकानाम् लोगों के, कार्यसिद्ध्यर्थम् कार्यसिद्धि के लिए, अजाय जन्मरहित, अपि होते हुए भी, सुजन्मने शुभकुल में उत्पन्न, निर्गुणाय निर्गुण-स्वरूप, अपि होकर भी, देवाय देवस्वरूप, गुणयुक्ताय सद्गुणयुक्त, ते आपको, नमः नमस्कार करता हूँ ॥३॥

आशय अनुपाद—लोगों की कार्यसिद्धि के लिए जन्म-रहित होने पर भी शुभ कुल में उत्पन्न, निर्गुण-स्वरूप होकर भी देव-स्वरूप सद्गुणयुक्त आपको नमस्कार करता हूँ ॥३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—प्रपन्नानाम् शरणागतों के प्रति, प्रसन्नाय सदा प्रसन्नचित्त, निरीहाय वासना-रहित, तपस्यते तपस्वी, विरागाणाम् विरागियों के, अयनाय आश्रयस्वरूप, सच्चित्सुखाय सच्चिदानन्दमय, ते आप को, नमः नमस्कार करता हूँ ॥४॥

आशय अनुवाद—शरणागतों के प्रति सदा प्रसन्नचित्त, वासना-रहित, तपस्वी, विरागियों के आश्रय-स्वरूप, सच्चिदानन्दमय आप को नमस्कार करता हूँ ॥४॥

नमः शुद्धाय बुद्धाय नमः शुद्धतराय च।
नमो बुद्धतरायाथ नित्यमुक्ताय ते नमः ॥५॥
कर्मादियोगमार्गाणां समन्वयविधायिने।
धर्मद्वन्द्वनिहन्त्रे वै सर्वेश्वराय ते नमः ॥६॥
विभोर्नामसहस्रं तद् रामकृष्णावतारजम्।
रहस्यं हि रहस्यानामुत्तमानां तथोत्तमम् ॥७॥
पवित्राणां पवित्रं वै सर्वसन्तापहारकम्।
भक्तैर्विवेकप्रमुखैर्द्योतितं किल मङ्गलम् ॥८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—शुद्धाय शुद्ध, बुद्धाय ज्ञानस्वरूप, नमः आपको नमस्कार है, च और, शुद्धतराय परम शुद्ध, नमः आपको नमस्कार है, बुद्धतराय अधिकतर ज्ञानसम्पन्न, नमः आपको नमस्कार है, अथ तथा, नित्यमुक्ताय नित्यमुक्त, ते आपको, नमः नमस्कार करता हूँ ॥५॥

आशय अनुवाद—शुद्धज्ञानस्वरूप आपको नमस्कार है और परम शुद्ध आपको नमस्कार है। अधिकतर ज्ञानसम्पन्न आपको नमस्कार है, तथा नित्यमुक्त आपको नमस्कार करता हूँ ॥५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—कर्मादियोगमार्गाणाम् कर्म आदि योगमार्गों का, समन्वयविधायिने समन्वय करनेवाले, धर्मद्वन्द्वनिहन्त्रे धर्मद्वन्द्वविनाशकारी, वै निश्चय ही, सर्वेश्वराय सबके ईश्वर, ते आपको, नमः नमस्कार करता हूँ ॥६॥

आशय अनुवाद—कर्म आदि योगमार्गों का समन्वय करनेवाले, धर्मद्वन्द्व-विनाशकारी तथा निश्चय ही सबके ईश्वर आपको नमस्कार करता हूँ ॥६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—विभोः भगवान के, रामकृष्णावतारजम् रामकृष्णावतार-सम्बन्धी, मङ्गलम्—मंगलजनक, रहस्यानाम् रहस्यों में, हि अवश्य ही, रहस्यम्—रहस्यरूप, उत्तमानाम् उत्तमों में, उत्तमम् अति उत्तम, पवित्राणाम् पवित्रों में, वै अवश्य ही, पवित्रम् पवित्र, सर्वसन्तापहारकम्

मनःशान्तिकरं पुण्यं मोक्षमार्गप्रवर्तकम् ।
प्रोच्यते सर्वलोकानां मोहनाशाय निर्मलम् ॥९॥
गयाधामप्रभोर्विष्णोरात्तमानुषविग्रहः ।
मङ्गलध्वनिभिः शङ्खै रावेदितशुभागमः ॥१०॥
गदाधरो * गदाइश्च दुलालः स प्रियोत्तमः ।
रामकृष्ण इति ख्यातो बाल्ये स्वजनबान्धवैः ॥११॥

सर्वसन्तापनाशक, मनःशान्तिकरम् मन के शान्तिविधायक, पुण्यम् पुण्यजनक, मोक्षमार्गप्रवर्तकम् मोक्षमार्ग के प्रवर्तक, तथा और, निर्मलम् निर्मल, नामसहस्रम् सहस्र नाम, किल अवश्य ही, विवेकप्रमुखैः विवेकानन्द-प्रमुख, भक्तैः भक्तों के द्वारा, द्योतितम् कीर्तित है, सर्वलोकानाम् समस्त मनुष्यों के, मोहनाशाय मोहनाश के लिए, प्रोच्यते उत्तम रूप से यहाँ बताये जाते हैं ॥७-९॥

आशय अनुवाद—भगवान के रामकृष्णावतार सम्बन्धी मंगलजनक रहस्यों में अवश्य ही रहस्यरूप, उत्तमों में अति उत्तम, पवित्रों में अवश्य ही पवित्र, सर्वसन्तापनाशक, मन के शान्तिविधायक, पुण्यजनक, मोक्षमार्ग के प्रवर्तक और निर्मल जो सहस्रनाम अवश्य ही विवेकानन्द-प्रमुख भक्तों के द्वारा कीर्तित हैं वे समस्त मनुष्यों के मोहनाश के लिए उत्तमरूप में यहाँ बताये जाते हैं ॥७-९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—गयाधामप्रभोः गयाधाम के प्रभु, विष्णोः विष्णु से प्राप्त, आत्तमानुष-विग्रहः मनुष्यदेहधारी, मंगलध्वनिभिः मंगलमयध्वनि करने वाले, शङ्खैः शङ्खों के द्वारा, आवेदितशुभागमः जिनका शुभागमन सभी

---

* १८३५ ई० में गयाधाम में पिंडदान के अनन्तर श्रीरामकृष्णदेव के पिता क्षुदिराम चट्टोपाध्याय ने रात्रि में स्वप्न में देखा कि नवदूर्वादलश्याम ज्योतिर्मण्डिततनु शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी प्रसन्नमूर्ति नारायण उनसे कह

क्षुदिरामात्मजो बालो कामारपुकुरोद्भवः ।
सर्वेप्सितो वराकारः कोमलाङ्गो विभूतिमान् ॥१२॥

ओर घोषित हुआ था, सः वे, प्रियोत्तमः सर्वजनप्रिय तथा उत्तम व्यक्ति; बाल्ये बचपन में, स्वजनबान्धवैः स्वजन तथा बान्धवों के द्वारा, (१) गदाधरः गदाधर, (२) गदाइः गदाइ, (३) दुलालः दुलाल, च और, (४) रामकृष्णः रामकृष्ण, इति इस प्रकार से, ख्यातः प्रख्यात थे ॥१०-११॥

आशय अनुवाद—गयाधाम के प्रभु विष्णु से प्राप्त मनुष्यदेहधारी, मङ्गलमय ध्वनि करने वाले शङ्खों के द्वारा जिनका शुभागमन सभी ओर घोषित हुआ था, वे सर्वजनप्रिय, बचपन में स्वजन-बान्धवों के द्वारा गदाधर, गदाइ, दुलाल और रामकृष्ण इस प्रकार के नामों से प्रख्यात थे ॥१०-११॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५) क्षुदिरामात्मजः क्षुदिराम के पुत्र, (६) बालः बालक स्वभाव वाले (७) कामारपुकुरोद्भवः कामारपुकुर गाँव में उत्पन्न, (८) सर्वेप्सितः सभी के द्वारा आकांक्षित, (९) वराकारः सुन्दर आकृति वाले, (१०) कोमलाङ्गः कोमल अंगयुक्त, (११) विभूतिमान् भस्माच्छादित शरीर-धारी ॥१२॥

आशय अनुवाद—(वे) क्षुदिराम के पुत्र, जो जन्म से अन्त तक बालभावापन्न रहे, कामारपुकुर ग्राम में उत्पन्न, सब के द्वारा आकांक्षित, सुन्दर अंगों वाले, कोमल अंगयुक्त तथा जन्म के बाद ही भस्माच्छादित शरीरधारी थे ॥१२॥

रहे हैं—'क्षुदिराम, तुम्हारी भक्ति से मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ, तुम्हारे घर में पुत्ररूप से मैं अवतीर्ण होकर तुम्हारी सेवा ग्रहण करूँगा ।'

इस स्वप्नवृत्तान्त का स्मरण कर क्षुदिराम ने अपने नवजात पुत्र का नाम गदाधर रखा । तदनुसार प्यार का नाम हुआ गदाइ । (लीलाप्रसंग) ।

स्मिताधरोऽखिलप्रेम्यतीवमधुरमोहनः ।
सद्ब्राह्मणकुलोद्भूतः * पीयूषवर्षिनामभाक् ॥१३॥
जनचित्तसमाकर्षी† मातृचन्द्रमणिप्रियः ।
धात्रीधनीप्रपूज्योऽसौ बाल्येऽप्यद्भुतकीर्तिमान् ‡ ॥१४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१२) स्मिताधरः मुस्कराते हुए अधरयुक्त, (१३) अखिलप्रेमी सबको प्रिय समझने वाले, (१४) अतीवमधुरमोहनः अत्यन्त मधुर तथा मनोहर रूपवाले, (१५) सद्ब्राह्मणकुलोद्भवः उत्तम ब्राह्मण कुल में उत्पन्न, (१६) पीयूषवर्षिनामभाक् अमृतवर्षणकारी नामधारी ॥१३॥

आशय अनुवाद—(वे) मुस्कराते हुए अधरयुक्त, सबको प्रिय समझने वाले, अत्यन्त मधुर तथा मनोहर रूप वाले, उत्तम ब्राह्मण कुल में उत्पन्न, अमृत-वर्षणकारी नामधारी थे ।

अन्वय तथा शब्दार्थ—असौ वे (१७) जनचित्तसमाकर्षी लोगों के चित्तों के आकर्षणकारी (१८) मातृचन्द्रमणिप्रियः माता चन्द्रमणि के प्रिय; (१९)

---

* श्रीरामकृष्ण देव कामारपुकुर नामक ग्राम में एक उच्च तथा सदाचारी ब्राह्मण वंश में जन्मे थे, उनके पिता क्षुदिराम चट्टोपाध्याय सत्यनिष्ठ, धर्म-परायण, ईश्वरनिर्भरशील, अशूद्रयाजी, पूजार्चन आदि में अनुरक्त तथा सन्तोष, क्षमा, त्याग, तितिक्षा आदि ब्राह्मणोचित सद्गुणों से भूषित थे । ग्राम के निवासी उन पर ऋषि की तरह श्रद्धा रखते थे । वे श्रीरामचन्द्र के उपासक थे तथा इष्टदेव का दर्शन उन्हें प्राप्त हुआ था । अन्तिम समय वे रघुवीर के नाम का उच्चारण करते हुए ध्यानयोग में निमग्न होकर ६८ वर्ष की आयु में परम पद प्राप्त हो गये थे । (लीलाप्रसंग) ।

† कामारपुकुर ग्राम की रहने वाली नीच कुल की दरिद्र बाल-विधवा लुहार की कन्या धनी ने श्रीरामकृष्ण के जन्म के समय धाय का काम किया

धात्री-धनी-प्रपूज्यः धात्री धनी के अत्यन्त पूज्य, बाल्ये बचपन में, अपि भी, (२०) अद्‌भुतकीर्तिमान् अपूर्व कीर्तिशाली ।।१४।।

आशय अनुवाद—वे लोगों के चित्तों के आकर्षणकारी (विविध दिव्य गुणों के खान होने के कारण), माता चन्द्रमणि के प्रिय, धात्री लोहारिन धनी के अत्यन्त पूज्य (तथा) बचपन में भी वे अपूर्व कीर्तिमान थे ।।१४।।

था। वह पुत्रहीन भक्तिमती स्त्री बालक गदाधर को पुत्र के समान प्यार करती थी तथा बाल गोपाल समझ कर उनकी भक्ति करती थी। एक दिन धनी ने गदाधर से जनेऊ के अनन्तर प्रथम भिक्षा लेकर अपने को भिक्षा-माता बना लेने की कातर प्रार्थना की थी। धनी के आग्रह से उन्हें भिक्षा-माता बनाने का उन्हों ने बचन दिया था। जनेऊ हो जाने पर बड़े भाई के मना करने पर भी गदाधर ने अपनी कुलप्रथा का उल्लङ्घन करके धनी के हाथ से प्रथम भिक्षा लेकर अपने वचन की रक्षा की थी। (लीला-प्रसंग)।

† (क) एकदिन चन्द्रमणि ने शिशु गदाधर को गोद में उठा लेने के बाद देखा कि बच्चा इतना अधिक भारी हो गया है कि उसे गोद से उतार नहीं सकी।

(ख) एक दूसरे दिन चन्द्रमणि ने देखा—मशहरी के भीतर लेटा हुआ शिशु गदाधर एक बहुत लम्बे पुरुष के समान हो गया है।

(ग) अपूर्व श्रुतिधर तथा स्मृतिधर बालक गदाधर रामायण, महाभारत, पुराण, नाटक आदि एकबार सुनकर ही कण्ठस्थ करके लोगों को सुना दिया करते थे।

(घ) गाँव के कुम्हारों का काम देखकर गदाधर सुन्दर देवमूर्ति गठित करना तथा चित्रांकन करना सीख गये थे। (लीलाप्रसंग)। ऐसी-ऐसी अनेक घटनाएँ श्रीरामकृष्ण-जीवनी-ग्रन्थ आदि में लिखित हैं।

मधुक्षरस्वरालापो विभुलीलासुगायकः ।
सर्वधर्मसुमर्मज्ञो विद्वज्जल्पविखण्डकः * ॥१५॥
वेदपाठविहीनोऽपि परमवेदतत्त्ववित् ।
सुचारुप्रतिमाकारश्चित्राङ्कनविशारदः ॥१६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२१) मधुक्षरस्वरालापः मधु क्षरित हो ऐसा कण्ठस्वरयुक्त, (२२) विभुलीलासुगायकः भगवान की लीला के सुन्दर गायक, (२३) सर्वधर्मसुमर्मज्ञ, समस्त धर्मों के मर्मज्ञ, (२४) विद्वज्जल्पविखण्डकः पण्डितों के तर्क-वितर्कों का खण्डन करने वाले ॥१५॥

आशय अनुवाद— (वे) मधु टपका हुआ हो ऐसा कण्ठस्वरयुक्त, भगवान की लीला के सुन्दर गायक, समस्त धर्मों के मर्मज्ञ तथा पण्डितों के तर्क-वितर्कों का ख डन करने वाले (थे) ।

अन्वय और शब्दार्थ—(२५) वेदपाठविहीनः वेदपाठविहीन, अपि होकर भी, (२६) परमवेदतत्त्ववित् वेद के श्रेष्ठ तत्वज्ञ, (२७) सुचारु-प्रतिमाकारः सुन्दर मूर्ति निर्माण करने वाले, (२८) चित्रांकनविशारदः चित्र अङ्कित करने में सुनिपुण ॥१६॥

आशय अनुवाद—(वे गुरुगृह में जाकर) वेदपाठ न करके भी वेद के श्रेष्ठ तत्त्वज्ञ, सुन्दर मूर्ति बनाने वाले (तथा) चित्र अङ्कित करने में सुनिपुण (थे) ॥१६॥

---

* जनेऊ हो जाने के कुछ समय बाद घटित होने वाली एक घटना से बालक गदाधर की असाधारण प्रतिभा ने गाँव के सभी लोगों को विशेष रूप से विस्मित कर डाला था। गाँव के जमींदार लाहाबाबुओं के मकान में किसी के श्राद्ध के दिन एक विशाल पण्डितसभा का आयोजन हुआ था। किन्तु पण्डित लोग किसी धार्मिक जटिल विषय की मीमांसा नहीं कर सके थे।

अभिनयपटुर्धीमान् गृहीतबहुभूमिकः ।
रङ्गरसप्रियः श्रीमान् नृत्यगीतपरायणः ॥१७॥
मुखवाद्यप्रवीणोऽसौ शुद्धताललयाश्रयः ।
पिकालिमुरलीवीणासमुदितस्वरध्वनिः ॥१८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२९) अभिनयपटुः नाटकाभिवनय करने में विशेष कुशल, (३०) धीमान् बुद्धिमान, (३१) गृहीतबहुभूमिकः अनेक भूमिकाओं में अभिनय करने वाले, (३२) रङ्गरसप्रियः हँसी-दिल्लगी करने में आनन्द प्राप्त करने वाले, (३३) श्रीमान् प्रियदर्शन, (३४) नृत्य-गीत-परायणः नृत्य-गीत-प्रेमी (थे) ॥१७॥

आशय अनुवाद—(वे) अभिनय करने में विशेष कुशल, तीक्ष्ण बुद्धि वाले, नाटक आदि की अनेक भूमिकाओं में अभिनय करने वाले, रंग-रस-प्रिय, सुन्दर चेहरा वाले, तथा अत्यन्त नृत्य-गीत-प्रेमी (थे) ॥१७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—असौ वे, (३५) मुखवाद्यप्रवीणः मुख से वाद्य-ध्वनि करने में सुनिपुण, (३६) शुद्धताललयाश्रयः विशुद्ध-ताल-लय-विशारद, (३७) पिकालि-मुरली-वीणासमुदितस्वरध्वनिः कोयल, भ्रमर, मुरली तथा वीणा से उत्पन्न मधुर ध्वनि की तरह कण्ठस्वरयुक्त (थे) ॥१८॥

आशय अनुवाद—वे मुख से वाद्यध्वनि करने में सुनिपुण, विशुद्ध ताल-लय में पारंगत, कोयल, भ्रमर, मुरली तथा वीणा से उत्पन्न मधुर ध्वनि की तरह कण्ठस्वरयुक्त थे ।

बालक गदाधर ने उस समय वहाँ आकर उस प्रश्न की ऐसी सुमीमांसा कर दी कि पण्डितों ने उसे सुन कर आश्चर्यचकित होकर उस बालक को हार्दिक आशीर्वाद दिया था । (लीलाप्रसंग) ।

रामारूपविभावी * वै रामाभङ्गिप्रदर्शकः ।
रामाविकलकण्ठयुक् चारुचन्द्रनिभाननः ॥१९॥
माधुर्यमण्डिताशेषबाल्यलीलासमापकः ।
श्रुतिधरो महाधीमाञ्जननीजनकप्रियः ॥२०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३८) रामारूपविभावी स्त्रियों के वेश-भूषाओं तथा हाव-भावों के अनुकरणकारी, वै पादपूरण का अव्यय, (३९) रामाभङ्गि-प्रदर्शकः स्त्रियों की सी अंगभंगी प्रदर्शन कर सकने वाले, (४०) रामाऽविकल-कण्ठयुक् स्त्रियों के समान कण्ठ-स्वरयुक्त, (४१) चारुचन्द्रनिभाननः सुन्दर चन्द्र के समान मनोहर मुखयुक्त ॥१९॥

आशय अनुवाद—वे स्त्रियों के वेषभूषाओं तथा हावभावों के अनुकरणकारी, स्त्रियों की सी अंगभंगी प्रदर्शन कर सकने वाले, स्त्रियों के समान सुरीली कण्ठ-ध्वनि वाले तथा सुन्दर चन्द्र के समान मनोहर मुखयुक्त थे ॥१९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४२) माधुर्यमण्डिताशेषबाल्यलीलासमापकः अनेक प्रकार की मधुर बाल-लीला सम्पन्नकारी, (४३) श्रुतिधरः दूसरे की बात सुनते ही स्मरण रख सकने वाले, (४४) महाधीमान् अत्यन्त बुद्धिमान्; (४५) जननी-जनक-प्रियः पिता और माता के प्रिय ॥२०॥

आशय अनुवाद—(वे) अनेक प्रकार की मधुर बाल-लीला को सम्पन्न करने वाले, दूसरे की बात सुनते ही उसे स्मरण रख सकने वाले, अत्यन्त बुद्धिमान् (इस कारण) पिता माता दोनों के ही वे अत्यन्त प्रिय थे ॥२०॥

---

* मधुर भाव का साधन करते समय श्रीरामकृष्ण देव स्त्रियों जैसी वेशभूषा धारण करते थे तथा अपने ऊपर स्त्रियों जैसे भावों का आरोप करते थे। वे रमणियों की तरह नीचे स्वर में बातें बोलते थे और अपने को पूर्णतया स्त्री समझते थे (लीलाप्रसंग)।

विशुद्धब्राह्मणाचारः सर्वदैवगुणाकरः ।
नन्दितो वन्दितो देवः पिनाकिभूमिकाधरः ॥२१॥
दर्शकहृदयानन्दः साक्षान्मूर्तमहेश्वरः ।
जातशिवमयावेशः शिवभावसमाधिमान् * ॥२२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४६) विशुद्धब्राह्मणाचारः निष्ठावान् ब्राह्मण के समान सदाचारसम्पन्न, (४७) सर्वदैवगुणाकरः समस्त दिव्य गुणों के आधार, (४८) नन्दितः आनन्दमय, (४९) वन्दितः लोगों के द्वारा पूजित, (५०) देवः देवस्वभावयुक्त, (५१) पिनाकिभूमिकाधरः शिवजी की भूमिका में अभिनय करने वाले ॥२१॥

आशय अनुवाद—(वे) निष्ठावान ब्राह्मण के समान सदाचारसम्पन्न, समस्त दिव्य गुणों के आधार, आनन्दमय, लोगों के द्वारा पूजित देवस्वभावयुक्त (तथा) किसी एक शिवरात्रि में अनुष्ठित नाटकाभिनय में शिव की भूमिका में अभिनय करने वाले (थे) ॥२१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५२) दर्शकहृदयानन्दः (उनके) दर्शनकारियों के आनन्ददायक, (५३) साक्षान्मूर्तमहेश्वरः मूर्तिमान प्रत्यक्ष महादेव-तुल्य, (५४) जातशिवमयावेशः सदा ही शिवभाव में पूर्ण, (५५) शिवभावसमाधिमान् शिव-भाव में समाधिमग्न ॥२२॥

आशय अनुवाद—(वे) दर्शनकारियों को आनन्ददायक, मूर्तिमान प्रत्यक्ष महादेव-तुल्य, सदा ही शिव-भाव में पूर्ण, तथा) शिव-भाव में समाधि-मग्न (थे) ॥२२॥

---

* एक शिवरात्रि में १० वर्ष के बालक श्रीरामकृष्ण ने नियमानुसार दिन में उपवास रखकर रात्रि के प्रथम-प्रहर की पूजा समाप्त की। पड़ोसी सीतानाथ पाइन के मकान में उस रात को नाटकाभिनय का आयोजन हुआ

सर्वग्रामजनामोदश्चन्द्रमणितनूद्भवः ।
कामारपुकुरप्राणः सुवेणीबद्धकुन्तलः ॥२३॥

अन्वय शब्दार्थ--(५६) सर्वग्रामजनामोदः ग्राम के सभी लोगों को आनन्द देने वाले, (५७) चद्रमणितनूद्भवः माता चन्द्रमणि के गर्भ से उत्पन्न, (५८) कामारपुकुरप्राण : कामारपुकुर ग्राम के निवासियों के प्राणस्वरूप, (५९) सुवेणीबद्धकुन्तल: सुन्दर वेणीबद्धकेशयुक्त ॥२३॥

आशय तथा अनुवाद--(वे) ग्राम के सभी लोगों को आनन्द-दान करने वाले, चन्द्रमणि के गर्भ से उत्पन्न, कामारपुकुर ग्राम के निवासियों के प्राण-स्वरूप, (तथा) सुन्दर वेणीबद्ध केशयुक्त (थे) ॥२३॥

था। नाटक में शिवजी की भूमिका का अभिनय करने की बात जिस बालक की थी उसके एकाएक अस्वस्थ हो जाने से मित्रों के अनुरोध पर बालक गदाधर शिव की भूमिका में अभिनय करने के लिए राजी हुए। ······जब वे शिवजी की साज पहन कर मञ्च पर आये तो सभी प्रेक्षकों को ऐसा लगा कि साक्षात् शिव कैलाश छोड़ कर यहाँ उपस्थित हुए हैं। इधर गदाधर शिव के ध्यान में तन्मय होकर एकदम अचेत हो गये। भाव के आवेश में वे चित्राङ्कित मूर्ति की तरह खड़े रह गये। उनके दोनों गालों पर से आसुओं की धारा बह चली। बहुत समय व्यतीत हो जाने पर भी चेतना न आने पर लोगों ने समझा कि उनपर शिवजी का आवेश हुआ है।······मित्रों ने उन्हें कन्धों पर लेकर उनके घर पहुँचा दिया। दूसरे दिन भोर में वे सहजावस्था प्राप्त हुए थे। (लीलाप्रसंग)।

क्वचित्त्यक्तकुलाचारः सत्यव्रतपरायणः * ।
धनीगृहीतभिक्षान्नो धात्रीस्नेहवशंवदः ॥२४॥
देवीगृहीतनैवेद्यश्चिनूद्भिन्नस्वरूपकः ।
'चिनु'-मिष्टान्नसंभोक्ता चिनुभक्तिकृतार्चनः† ॥२५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ---(६०) क्वचित्त्यक्तकुलाचारः कदाचित् कुलाचार उल्लङ्घन करने वाले, (६१) सत्यव्रतपरायण सत्यव्रतनिष्ठ, (६२) धनीगृहीतभिक्षान्नः धात्री धनी के हाथ से भिक्षान्न लेने वाले, (६३) धात्रीस्नेहवशंवदः धात्री के स्नेह के वशीभूत ॥२४॥

आशय अनुवाद--- वे) कभी कुलाचार का उल्लङ्घन भी करने वाले, जनेऊ होने के बाद उन्होंने नीच कुल की धाय के हाथ से भिक्षा ली थी, सत्यव्रत पालनकारी, धनी लुहार से भिक्षान्न ग्रहण करने वाले तथा उस धाय के वशीभूत थे ॥२४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ---(६४) देवीगृहीतनैवेद्यः देवीने उनके निवेदित नैवेद्य ग्रहण कर लिया था, (६५) चिनूद्भिन्न-स्वरूपक शङ्खवणिक चिनु के

* बालक गदाधर ने जनेऊ होने के बाद नीच कुल की धाय के हाथ से 'प्रथम भिक्षान्न लूँगा'---ऐसा बचन उसे दिया था; किन्तु जनेऊ होने के बाद वैसा काम कुलप्रथा के विरोधी होने से अभिभावकों ने उस पर आपत्ति उठाई। इस पर गदाधर ने दृढ़ कंठ से कहा था---"मैं कभी सत्यभ्रष्ट नहीं होऊँगा, सत्यभ्रष्ट मिथ्याचारी व्यक्ति ब्राह्मणोचित यज्ञसूत्र धारण करने का अधिकारी नहीं हो सकता।" गदाधर ने कुलाचार का उल्लङ्घन करके तथा धात्री माता को भिक्षामाता बना कर अपने बचन की रक्षा की थी। (लीलाप्रसंग)।

† कामारपुकुर ग्राम के चिनु शाँकारी नामके एक शंखवणिक श्रीराम-रामकृष्णदेव को बचपन से ही श्रीगौरांग के अवतार जानकर भक्ति करते थे।

भक्तार्चितपदाम्भोजः शाखामृगसुपूजितः * ।
स्मृतत्रेतायुगाचारो राघवाभिन्नरूपकः ॥२६॥

सामने उनका स्वरूप उत्तम रूप से व्यक्त हो गया था, (६६) चिनुमिष्टान्न-संभोक्ता (उन्हों ने) चिनु द्वारा निवेदित मिष्टान्न खाया था, (६७) चिनुभक्त-कृतार्चनः (तथा) चिनु ने भक्ति से उनकी पूजा की थी । ॥२५॥

आशय अनुवाद—भवतारिणी देवी ने उनके द्वारा निवेदित नैवेद्य ग्रहण किया था, (कामारपुकुर के चिनु शङ्खवणिक के निकट उनका स्वरूप पूर्णतया प्रकट हुआ था, (उस चिनु द्वारा निवेदित मिष्टान्न उन्होंने आनन्द से खाया था तथा चिनु ने गौरांग का अवतार जान कर) उनकी पूजा की थी । वे उनका भक्त थे अतः उनके पूजक भी थे ॥२५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६८) भक्तार्चितपदाम्भोजः भक्तों के द्वारा उनके चरण-कमल पूजे गये थे, (६९) शाखामृगसुपूजितः हनूमान के द्वारा भी

एक दिन उन्होंने बालक गदाधर को फूल-मालाओं से सजाकर मिठाई आदि निवेदित करके अपने हाथ से उन्हें खिला दिया था तथा आँखों से आँसू बहाते हुए कातर प्रार्थना की थी—"मैं तो बूढ़ा हो गया हूँ, तुम्हारी लीला देख नहीं सकूँगा, मृत्यु के समय दर्शन देकर मेरा उद्धार करना ।" श्रीरामकृष्ण-देव ने उनकी मनोवांछा पूरी करने का आश्वासन देकर आशीर्वाद दिया था। चिनु को मृत्यु के समय श्रीरामकृष्ण का दर्शन मिला था ।
(लीलाप्रसङ्ग) ।

* प्रत्यक्षदर्शी के वर्णन से जाना गया कि एक दिन एक बड़ा हनूमान (बानर) पास के एक पेड़ से उतर आकर श्रीरामकृष्ण देव के चरणों पर सिर रख कर उन्हें भक्ति के साथ प्रणाम करके घुटने टेक कर हाथ जोड़े उनका आशीर्वाद-प्रार्थी हुआ था। श्रीरामकृष्ण देव ने भी उस हनूमान के सिर पर हाथ रख कर उसे आशीर्वाद दिया था । (पोथी) ।

धनीभक्त्यर्चनाधारो जातिमानविवर्जितः ।
शुद्धभक्तिधनग्राही प्रेमानन्दसमुज्ज्वलः ॥२७॥
पितृपूजासमाकृष्टः प्रेमपुलकितान्तरः ।
जातरघुवरावेशो राघवमाल्यभूषितः ॥२८॥

उनकी उत्तमरूप से पूजा हुई थी, (७०) स्मृतत्रेतायुगाचारः (उन्होंने) अपने त्रेतायुग की लीला का स्मरण किया था, (७१) राघवाभेदरूपकः (वे) राघव के ही अभिन्नरूप थे ॥२६॥

आशय अनुवाद—भक्तों ने उनके चरण-कमलों की पूजा की थी, वे हनूमान के द्वारा भी पूजित हुए थे, (फलस्वरूप उन्हों ने अपनी) त्रेतायुग की लीला का स्मरण किया था (क्योंकि वे) राघव के अभिन्न-स्वरूप थे ॥२६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७२) धनीभक्त्यर्चनाधारः लुहारिन धनी ने उनकी भक्ति के साथ पूजा की थी, (७३) जातिमानविवर्जितः (वे) जात्यभिमान रहित थे, (७४) शुद्धभक्तिधनग्राही (वे) अन्य धन नहीं, शुद्ध भक्तिरूप धन ग्रहण करते थे, (७५) प्रेमानन्दसमुज्ज्वलः (वे) प्रेम और आन द से समुज्ज्वल (थे) ॥२७॥

आशय अनुवाद—लुहारिन धनी ने उनकी भक्ति-भाव से पूजा की थी, उनमें जाति का अभिमान नहीं था, वे शुद्ध भक्ति रूप धन ग्रहण करते थे, (तथा वे) प्रेम और आनन्द से समुज्ज्वल (थे) ॥२७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७६) पितृपूजासमाकृष्टः (वे) पिता की पूजा में अत्यन्त आकृष्ट हुए थे, (७७) प्रेमपुलकितान्तरः प्रेम से उनका अन्तर पुलकित होता था, (७८) जातरघुवरावेशः उनके शरीर में रघुवीर का आवेश हुआ था,

---

* एकदिन पिता क्षुदिराम अपने हाथ से माला गूँथ कर पूजा के उपकरणों का संग्रह करके इष्टदेवता रघुवीर की पूजा में बैठ कर ध्यानमग्न हो गये थे, ठीक उसी समय बालक गदाधर के ऊपर रघुवीर का आवेश हुआ। गदाधर अपने गले में उस माला को डाल कर अपने शरीर में चन्दन पोतने लगे।

कलाकलापनिष्णातः सरलः सौम्यदर्शनः ।
परमसुन्दरः प्रेष्ठो दिव्यलक्षणलक्षितः ॥२९॥
तीर्थीकृतनिजग्रामो जन्मभूशेवधिः स्वयम् ।
पूज्याभेदसमापन्नः स्वांघ्रिन्यस्तोपचारकः * ॥३०॥

---

(७९) राघवमाल्यभूषितः (उन्हों ने) रघुवीर के लिए रचित मालाओं से अपने को भूषित किया था ॥२८॥

आशय अनुवाद—वे पिता की पूजा में अत्यन्त आकृष्ट हुए थे, प्रेम से उनका अन्तर पुलकित होता था, उनके शरीर में रघुवीर का आवेश होता था, उन्होंने रघुवीर के लिए रचित मालाओं से अपने को भूषित किया था ॥२८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८०) कलाकलापनिष्णातः (वे) विविध कला-विद्याओं में पारंगत, (८१) सरलः सीधे स्वभाव वाले, (८२) सौम्यदर्शनः सुन्दर मूर्तिधारी, (८३) परमसुन्दरः अति सुन्दर, (८४) प्रेष्ठः प्रियतम, (८५) दिव्यलक्षणलक्षितः दिव्य लक्षणों से (वे) युक्त (थे) ॥२९॥

आशय अनुवाद—वे विविध कला-विद्याओं में पारंगत, सीधे स्वभाव वाले, सौम्यदर्शन, परम सुन्दर, सबके प्रियतम तथा दिव्यलक्षणयुक्त थे ॥२९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८६) तीर्थीकृतनिजग्रामः (उन्होंने) अपने ग्राम (कामारपुकुर) को तीर्थरूप में परिणत कर दिया, स्वयम् खुद ही, (८७) जन्मभूशेवधिः जन्मभूमि के रत्न-स्वरूप, (८८) पूज्याभेदसमापन्नः पूज्य

क्षुदिराम ध्यान से व्युत्थित होकर गदाधर को उस वेश में देख कर विशेष रूप से आनन्दित हुए थे। (लीलाप्रसंग)

* श्रीरामकृष्ण देव दक्षिणेश्वर के काली मन्दिर में पूजा के समय देवी के साथ अपने अभेद ज्ञान में ऐसे तन्मय हो जाते थे कि वे अपने अन्तर में देवी को देखकर फूल चन्दन विल्वपत्र आदि के द्वारा अपने सिर से पैर तक पूजा करते थे। (लीलाप्रसंग)।

अभीष्टपार्षदव्रातः पार्षदवृन्दपूजितः ।
नवकलेवरश्रीशः कृष्णलीलाप्रकाशकः ॥३१॥
निसर्गालोकनोन्मत्तो भावराशिप्रपूरितः ।
मेघाम्बरबलाकादृग् बाल्याशेषसमाधिमान् * ॥३२॥

देवता के साथ पूर्णतया अभिन्न, (८९) स्वांघ्रिन्यस्तोपचारकः अपने ही चरणों में पूजा के सामान फूल जल आदि अर्पण करने वाले ॥३०॥

आशय अनुवाद—उन्होंने (आविर्भाव द्वारा) अपने कामारपुकुर ग्राम को तीर्थरूप में परिणत कर दिया था, (वे) स्वयं जन्मभूमि के रत्नस्वरूप थे, पूज्य देवता के साथ पूर्णतया अभिन्न तथा अपने ही चरणों में पूजा के सामान फूल जल आदि अर्पण करने वाले थे ॥३०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ— ९०) अभीष्टपार्षदव्रातः (अपने) पास आने वाले पार्षदों के लिए व्याकुल, (९१) पार्षदवृन्दपूजितः पार्षदों के द्वारा पूजित, (९२) नवकलेवरश्रीशः नये देहधारी नारायणस्वरूप, (९३) कृष्णलीला-प्रकाशकः कृष्णलीला के प्रकाशक ॥३१॥

आशय अनुवाद—वे अपने पार्षदों के लिए व्याकुल रहा करते थे, तथा वे उन पार्षदों के द्वारा पूजित भी होते थे, वे नये देहधारी नारायण-स्वरूप थे, तथा श्रीकृष्ण के मधुर लीला के प्रकाशक थे ॥३१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९४) निसर्गालोकनोन्मत्तः प्राकृतिक शोभा देख कर (वे) तन्मय, (९५) भावराशिप्रपूरितः भावों के द्वारा परिपूर्ण, (९६)

* श्रीठाकुर बचपन में प्राकृतिक सौन्दर्य देखकर पहले समाधि में मग्न हो गये थे। उस घटना के सम्बन्ध में बाद में उन्होंने स्वयं ही कहा था— "उस देश (कामारपुकुर आदि गाँवों) में बच्चों को छोटे-छोटे दोनों में फरुही दी जाती है। उस समय जेठ या आषाढ़ मास रहा होगा। उस समय मेरी

संसारासारतादर्शी सदा वैराग्यभावनः ।
न्यासिसङ्गी परप्रीतः परिव्राजकवन्दितः ।।३३।।

मेघाम्बरबलाकाट्टक् मेघाच्छन्न आकाश में बगलों की पंक्ति देख कर तन्मय हो जाने वाले, (९७) बाल्याशेषसमाधिमान् बचपन में (वे) अनेकबार समाधिमग्न (होते थे) ।।३२।।

आशय अनुवाद—वे प्राकृतिक शोभा देखकर तन्मय हो जाते थे, भावों के द्वारा परिपुर्ण थे, मेघाच्छन्न आकाश में बगलों की पाँति देखकर वे तन्मय हो जाते थे तथा बचपन में अनेक बार समाधिमग्न होते थे ।।३२।।

अन्वय और शब्दार्थ—(९८) संसारासारतादर्शी संसार की असारता के दर्शनकारी, (९९) सदा वैराग्यभावनः सदा वैराग्य की भावना करने वाले, (१००) न्यासिसंगी संन्यासियों का संग करने वाले, (१०१) परप्रीतः परमेश्वर के प्रति प्रीति-सम्पन्न, (१०२) परिव्राजकवन्दितः संन्यासियों के द्वारा नमस्कृत ।।३३।।

आशय अनुवाद—वे संसार की असारता जान गये थे, सदा ही वैराग्य की

६।७ वर्ष की अवस्था थी । एक दिन मैं सुबह दोने में फरुही लेकर खाते हुए खेत के मेंड़ पर से जा रहा था, देखते-देखते बादल आकर आकाश में छा गया । उसी समय दूध की तरह सफेद बगलों का एक झुण्ड उस काले बादल के किनारे से उड़ता जाने लगा । वहाँ ऐसा एक मनोहर दृश्य दिखाई पड़ा कि देखते-देखते अपूर्व भावावेश में मैं ऐसा तन्मय हो पड़ा कि होश ही गायब हो गया । मैं गिर पड़ा, फरुही मेंढ़ के आसपास बिखर गयी । कितनी देर तक उस अवस्था में मैं पड़ा रहा, मैं बता नहीं सकता । लोगों ने पकड़ कर मुझे घर पहुँचा दिया था । वहीं पहले-पहल भाव में मैं बेसुध हो गया था।'' उन्होंने और भी कहा था—''उस समय बाहरी ज्ञान न रहने पर भी भीतर बहुत आनन्द था।'' (लीलाप्रसंग) ।

गङ्गाम्बुब्रह्मसम्बोधिर्गङ्गाभक्तिपरायणः ।
दृढमुनिव्रताचारी क्षुत्पिपासोर्मिवर्जितः ॥३४॥
सदाशिवशिवालापी शमादिविभवान्वितः ।
विहितगांगमृच्छम्भुर्विश्रुतप्रतिभाधरः * ॥३५॥

भावना करते थे, संन्यासियों का सत्संग करते थे, परमेश्वर के प्रति परम-प्रीति-सम्पन्न तथा संन्यासियों के द्वारा नमस्कृत होते थे ॥३३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१०३) गंगाम्बुब्रह्मसम्बोधिः गंगाजल को ब्रह्मवारि समझने वाले, (१०४) गंगाभक्तिपरायणः गंगाभक्तिपरायण, (१०५) दृढ-मुनिव्रताचारी दृढ़ता के साथ मुनिव्रत आचरण करने वाले (तथा) (१०६) क्षुत्पिसासोर्मिवर्जितः भूख-प्यास की तरंगों से रहित ॥३४॥

आशय अनुवाद—वे गंगाजल को ब्रह्मवारि समझते थे, वे गंगाभक्ति-परायण थे, वे दृढ़ता के साथ मुनिव्रत का आचरण करते थे तथा भूख-प्यास की तरंगों से रहित थे ॥३४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१०७) सदाशिवशिवालापी सदा 'शिव शिव' शब्द उच्चारण करने वाले, (१०८) शमादिविभवान्वितः शम, दम, आदि छः सम्पत्ति युक्त, (१०६) विहितगांगमृच्छम्भुः गंगा की मिट्टी से सुन्दर शिव-मूर्ति बनाने वाले (११०) विश्रुतप्रतिभाधरः प्रसिद्ध प्रतिभाशाली ।३५॥

आशय अनुवाद—(वे) जब शिव भाव में भावित रहते थे तब सदा शिव शिव शब्द उच्चारण करते थे, वे शम, दम, आदि छः साधन-सम्पत्तियों से युक्त थे। वे गंगा की मिट्टी से सुन्दर शिव-मूर्ति निर्माण करते थे तथा प्रसिद्ध प्रतिभाशाली व्यक्ति थे ॥३५।

---

* एकदिन गंगाकिनारे बैठकर श्रीठाकुर गंगा की मिट्टी से एक बहुत ही सुन्दर शिव-मूर्त्ति बनाकर तन्मय-भाव से पूजा कर रहे थे।······ मथुर बाबू उस जीवित-सी मूर्ति और ध्यानमग्न पूजक को देखकर अत्यन्त मोहित

छोटभट्चाजिति प्रोक्तः कृतमृन्मयचिन्मयः ।
प्रकटपुलकावेगो दक्षिणेश्वरजीवनम्* ।।३६।।
घृष्टसाश्रुमुखाम्भोजः श्रीकालीदर्शनाकुलः ।
कठिनमृत्तिकाशायी ह्युच्चैर्मामेति रोदकः ।।३७।।

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१११) छोटभट्चाजिति छोटेभट्चाज इस नाम से, प्रोक्तः प्रख्यात, (११२) कृतमृन्मयचिन्मयः उन्होंने मृन्मयी मूर्ति को चिन्मयी रूप में परिणत कर लिया था, (११३) प्रकटपुलकावेगः उन में पुलक का आवेग प्रकटित हुआ था, (११४) दक्षिणेश्वरजीवनम् (वे) दक्षिणेश्वर के जीवन स्वरूप थे ।।३६।।

आशय अनुवाद—वे छोटे भट्चाज इस नाम से प्रसिद्ध हुए थे, मृत्तिका की काली-प्रतिमा को उन्होंने चिन्मयी देवी रूप में परिणत कर लिया था। उनके शरीर में सात्त्विक आवेग प्रकट होता था और वे दक्षिणेश्वर के जीवन-स्वरूप थे। ।।३६।।

अन्वय तथा शब्दार्थ—(११५) घृष्टसाश्रुमुखाम्भोजः आँसू-भरे मुख को भूमि में रगड़ने वाले, (११६) श्रीकाली-दर्शनाकुलः काली-माता के दर्शन के

हुए। उस छोटी मूर्त्ति के गठन-कार्य के भीतर उन्होंने निर्माता के हृदय का चित्र देखा था और भक्ति की गम्भीरता देखी थी।

* श्रीरामकृष्णदेव १८ वर्ष की उम्र में पहले-पहल दक्षिणेश्वर आये थे। उसके कुछ मासों के अनन्तर जब वे काली-माता की पूजा में व्रती हुए तब उनके बड़े भाई श्रीरामकुमार चट्टोपाध्याय उस मन्दिर के प्रधान पुजारी थे। मन्दिर की प्रतिष्ठा करने वाली रानी रासमणि के जामाता मथुरामोहन उस समय से ही रामकुमार को 'बड़े भट्चाज और उनके छोटे भाई रामकृष्ण को 'छोटे भट्चाज' नाम से पुकारते थे। इस कारण दक्षिणेश्वर में श्रीरामकृष्णदेव उसी नाम से परिचित थे। वे भवतारिणी देवी की मूर्ति की पूजा करते हुए उस मूर्ति में जगत-जननी के चिन्मय रूप का दर्शन करते थे।

तोतासंप्राप्तसंन्यासो ह्यद्वैतसाधनापरः ।
ब्रह्मबोधिसमारूढ निर्विकल्पसमाधिमान् * ॥४३॥

परित्याग करने वाले, (१३७) पराविद्याप्रमानदः परा विद्या ब्रह्मविद्या को बहुत सम्मान देने वाले ॥४२॥

आशय अनुवाद——वे योग की शिक्षा से अत्यन्त आह्लादित होते थे, (इसी कारण बचपन में) अंकशास्त्र के वियोग की शिक्षा में अरुचि-सम्पन्न थे, परा विद्या ब्रह्मविद्या को बहुत सम्मान देने के कारण सांसारिक भोग को वे थूक के समान त्यागने की वस्तु समझते थे ॥४२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१३८) तोतासंप्राप्तसंन्यासः संन्यासी तोतापुरी से विधि के अनुसार संन्यास-प्राप्त, हि अवश्य ही, (१३९) अद्वैतसाधनापरः अद्वैत ब्रह्म की साधना में निमग्न, (१४०) ब्रह्मबोधिसमारूढः ब्रह्मज्ञान में सुप्रतिष्ठित, (१४१) निर्विकल्पसमाधिमान् निर्विकल्प समाधि में लीन ॥४३॥

आशय अनुवाद—संन्यासिप्रवर तोतापुरी से वे विधि के अनुसार संन्यास-दीक्षा ग्रहण करके अद्वैत ब्रह्म की साधना में निविष्ट हुए थे, तथा निर्विकल्प समाधि में लीन होकर ब्रह्मज्ञान में सुप्रतिष्ठित हुए थे ॥४३॥

---

* श्रीरामकृष्णदेव संन्यासिप्रवर तोतापुरी से शास्त्रीय विधि के अनुसार संन्यास-दीक्षा लेकर अद्वैत की साधना में व्रती हुए थे। उनके गुरु ने उन्हें अद्वैत भाव में प्रतिष्ठित करने के लिए जब 'अहं ब्रह्मास्मि' आदि महावाक्यों का उपदेश दिया था, उसी समय श्रीरामकृष्ण का मन निर्विकल्प समाधि में मग्न हो गया था। उस समाधि को ही योगशास्त्र में असम्प्रज्ञात या निर्बीज समाधि कहा गया है। श्रीरामकृष्ण के उस निर्विकल्प समाधि में निरवच्छिन्न दो मासों तक अवस्थित रहने के बाद भगवदिच्छा से उनका मन क्रमशः सांसारिक भूमि में उतर आया था और वे जगत्माता के द्वारा लोककल्याण साधन के लिये आदेश प्राप्त हुए थे।

सबाह्याभ्यन्तरज्योतिर्देवीमन्दिरशायितः ।
आनन्दसागरस्नातो दृष्टचिन्मयकालिकः ॥४०॥
श्यामानीराजनोन्मत्तः सर्वविषयनिस्पृहः ।
आत्मस्थितिविघातेनापराविद्यापरांमुखः ॥४१॥
योगशिक्षापरामोदो वियोगशिक्षणारुचिः ।
भोगनिष्ठीवनत्यागी पराविद्याप्रमानदः ॥४२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१२७) सबाह्याभ्यन्तरज्योतिः उनके बाहर तथा भीतर ज्योति से पूर्ण था, (१२८) देवीमन्दिरशायितः देवी भवतारिणी के मन्दिर में शायित थे, (१२९) आनन्दसागरस्नातः आनन्दसागर में निमग्न, (१३०) दृष्टचिन्मयकालिकः चिन्मयी काली माता के वे प्रत्यक्ष द्रष्टा (थे) ॥४०॥

आशय अनुवाद—उनके बाहर तथा भीतर ज्योति से पूर्ण था, देवी भवतारिणी के मन्दिर में वे लेटे रहते थे, वे सदा आनन्दसागर में निमग्न रहते थे, तथा चिन्मयी काली माता को वे प्रत्यक्ष देखते थे ॥४०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१३१) श्यामानीराजनोन्मत्तः श्रीकाली माता के आरति-कार्य में उन्मत्त, (१३२) सर्वविषयानिस्पृहः समस्त विषयों में स्पृहा-शून्य, आत्मस्थितिव्याघातेन आत्मस्थिति के बाधक होने के कारण (१३३) अपराविद्यापरांमुखः अपरा विद्या से परांमुख ॥४१॥

आशय अनुवाद—श्यामा माता के आरतीकार्य में उन्मत्त, समस्त विषयों से विरक्त, आत्मस्थिति के बाधक होने के कारण अपरा विद्या से परांमुख ॥४१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१३४) योगशिक्षापरामोदः योग की शिक्षा में अत्यन्त आह्लादित, (१३५) वियोगशिक्षणारुचिः वियोग या विच्छेद की शिक्षा में अरुचिसम्पन्न, (१३६) भोगनिष्ठीवनत्यागी भोग को थूक के समान

तोतासंप्राप्तसंन्यासो ह्यद्वैतसाधनापरः ।
ब्रह्मबोधिसमारूढ निर्विकल्पसमाधिमान् * ॥४३॥

परित्याग करने वाले, (१३७) पराविद्याप्रमानदः परा विद्या ब्रह्मविद्या को बहुत सम्मान देने वाले ॥४२॥

आशय अनुवाद——वे योग की शिक्षा से अत्यन्त आह्लादित होते थे, (इसी कारण बचपन में) अंकशास्त्र के वियोग की शिक्षा में अरुचि-सम्पन्न थे, परा विद्या ब्रह्मविद्या को बहुत सम्मान देने के कारण सांसारिक भोग को वे थूक के समान त्यागने की वस्तु समझते थे ॥४२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१३८) तोतासंप्राप्तसंन्यासः संन्यासी तोतापुरी से विधि के अनुसार संन्यास-प्राप्त, हि अवश्य ही, (१३९) अद्वैतसाधनापरः अद्वैत ब्रह्म की साधना में निमग्न, (१४०) ब्रह्मबोधिसमारूढः ब्रह्मज्ञान में सुप्रतिष्ठित, (१४१) निर्विकल्पसमाधिमान् निर्विकल्प समाधि में लीन ॥४३॥

आशय अनुवाद—संन्यासिप्रवर तोतापुरी से वे विधि के अनुसार संन्यास-दीक्षा ग्रहण करके अद्वैत ब्रह्म की साधना में निविष्ट हुए थे, तथा निर्विकल्प समाधि में लीन होकर ब्रह्मज्ञान में सुप्रतिष्ठित हुए थे ॥४३॥

* श्रीरामकृष्णदेव संन्यासिप्रवर तोतापुरी से शास्त्रीय विधि के अनुसार संन्यास-दीक्षा लेकर अद्वैत की साधना में व्रती हुए थे। उनके गुरु ने उन्हें अद्वैत भाव में प्रतिष्ठित करने के लिए जब 'अहं ब्रह्मास्मि' आदि महावाक्यों का उपदेश दिया था, उसी समय श्रीरामकृष्ण का मन निर्विकल्प समाधि में मग्न हो गया था। उस समाधि को ही योगशास्त्र में असम्प्रज्ञात या निर्बीज समाधि कहा गया है। श्रीरामकृष्ण के उस निर्विकल्प समाधि में निरवच्छिन्न दो मासों तक अवस्थित रहने के बाद भगवदिच्छा से उनका मन क्रमशः सांसारिक भूमि में उतर आया था ओर वे जगतमाता के द्वारा लोककल्याण साधन के लिपे आदेश प्राप्त हुए थे।

अनुलोमविलोमज्ञो विज्ञानभूमिसंदृढः ।
रूपारूपसमापत्तौ प्रज्ञाप्रोत्कर्षसंयुतः ॥४४॥
षण्मासनिर्णिमेषाक्षो * हठयोगप्रसाधक. ।
सदाशिवसमाविष्टो भद्रमाल्यप्रभूषितः ॥४५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१४२) अनुलोमविलोमज्ञः ईश्वर के लीलामय सृष्टिक्रम और लयक्रम के तत्त्वज्ञ, (१४३) विज्ञानभूमिसंदृढः—विज्ञानभूमि में दृढ़-स्थिति-सम्पन्न, रूपारूपसमापत्तौ सम्प्रज्ञात समाधि और असम्प्रज्ञात समाधि लाभ होने पर (१४४) प्रज्ञाप्रोत्कर्षसंयुतः प्रकृष्ट-प्रज्ञा-सम्पन्न ॥४४॥

आशय अनुवाद—(वे) ईश्वर के लीलामय सृष्टि-क्रम और लय-क्रम के तत्त्वज्ञ, विज्ञान भूमि में दृढ़-स्थिति-सम्पन्न, सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात समाधि लाभ होने पर, प्रकृष्टप्रज्ञासम्पन्न (थे) ॥४४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१४५) षण्मासनिर्णिमेषाक्षः छः महीनों तक नेत्रों में निमेष-रहित, (१४६) हठयोगप्रसाधकः उत्तमरूप से हठयोग के अभ्यास करने वाले, (१४७) सदाशिवसमाविष्टः भगवान सदाशिव में समाहित-चित्त, (१४८) भद्रमाल्यप्रभूषितः सुन्दर मालाओं से भूषित ॥४५॥

आशय अनुवाद—श्रीश्रीजगन्माता के दर्शन के लिये व्याकुल होकर वे छः महीनों तक निमेष-रहित-नेत्र होकर अवस्थित थे, उन्होंने शास्त्रानुसार हठयोग का अभ्यास करके उसमें सिद्धिलाभ किया था, भगवान सदाशिव के ध्यान में वे समाधिस्थ रहते थे तथा निवेदित सुन्दर मालाओं के द्वारा वे अपने को भूषित करते थे ॥४५॥

---

* श्रीश्रीजगन्माता के दर्शन के लिये श्रीठाकुर इतने अधिक व्याकुल हो पड़े थे कि आहार, निद्रा आदि की ओर एकदम ध्यान ही नहीं था, पलक-रहित नेत्रों से वे केवल कालीमाता की आराधना करते थे। कभी असहनीय विरह-वेदना से अस्थिर होकर भूमि में गिरकर मुख रगड़ते हुए रोते

दिव्यज्योतिर्मयाधारो दास्यभक्तिप्रदर्शक: * ।
श्यामाध्यानमहावेशो जटाजूटिशिवेक्षक: ॥४६॥
आनन्दासनसंसिद्ध: कान्तदर्शी सुमोहन: † ।
अखिलविबुधावेश: प्रतिमाज्ञातचेतन: ॥४७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१४९) दिव्यज्योतिर्मयाधार: दिव्य ज्योतिर्मय पुरुष के आधार, (१५०) दास्यभक्तिप्रदर्शक: दास्य भक्ति के प्रदर्शक, (१५१) श्यामाध्यानमहावेश: काली माता के ध्यान में महान-आवेश-युक्त, (१५२) जटाजूटिशिवेक्षक: जटा-मंडित शिव के प्रत्यक्ष द्रष्टा ॥४६॥

आशय अनुवाद—वे दिव्य ज्योतिर्मय पुरुष के आधार थे, दास्य भक्ति के प्रदर्शक, काली माता के ध्यान में महान आवेशयुक्त तथा जटा-मण्डित शिव के प्रत्यक्ष द्रष्टा थे ॥४६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१५३) आनन्दासनसंसिद्ध: आनन्दासन में सिद्धि-

---

थे। (लीलाप्रसंग)। अन्तिम समय में एक संन्यासी शिष्य से उन्होंने कहा था—"चौदह वर्षों तक मैं सोया नहीं था।"

* "शरणं कीर्तनं विष्णो: स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सौख्यमात्मनिवेदनम् ॥"

श्रीरामकृष्णदेव ने इस प्रकार की नवधा भक्ति की साधना की थी। अपने कुलदेवता रघुवीर के प्रति उनका चित्त आकृष्ट हुआ था। हनूमान की तरह दास-भाव से साधना के द्वारा वे श्रीरामचन्द्र का दर्शन-लाभ करके धन्य हुए थे।

† यह तन्त्रोक्त साधना की एक विशेष अवस्था है। श्रीरामकृष्ण देव अपनी तन्त्र-साधना के गुरु भैरवी ब्राह्मणी की सहायता से उस साधना में परिपूर्ण सिद्धि प्राप्त करके उसका अन्तिम फल जितेन्द्रियत्व लाभ कर सके थे।

बुद्धावतारसंबुद्धः शून्यतत्त्वरहस्यवित् ।
नानाकृच्छ्रव्रताचारी ज्योतिर्लीनस्वरूपकः ॥४८॥

प्राप्त, (१५४) क्रान्तदर्शी यथार्थ तत्त्वज्ञानी, (१५५) सुमोहनः अत्यन्त मनोहर रूपधारी, (१५६) अखिलविबुधावेशः समस्त देवताओं का आवेश अपने में अनुभव करने वाले, (१५७) प्रतिमाज्ञातचेतनः मूर्ति में दिव्य चैतन्य के ज्ञाता ॥४७॥

आशय अनुवाद—(तन्त्र-साधना के समय) वे आनन्दासन में बैठकर परिपूर्ण सिद्धि प्राप्त हुए थे। वे यथार्थ तत्त्वज्ञानी तथा अत्यन्त मनोहर रूपधारी थे, उनमें सभी देवताओं का आवेश होता था तथा वे मूर्ति में दिव्य चैतन्य का अनुभव करते थे ॥४७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१५८) बुद्धावतारसंबद्ध बुद्धदेव के अवतार के सम्बन्ध में विश्वास-सम्पन्न, (१५९) शून्यतत्त्वरहस्यवित् बौद्धों के शून्यवाद के रहस्य के ज्ञाता, (१६०) नानाकृच्छ्रव्रताचारी विविध कठोर व्रतों के आचरण करने वाले, (१६१) ज्योतिर्लीनस्वरूपकः ब्रह्मज्योति में उनका स्वरूप लीन था ॥४८॥

आशय अनुवाद—गौतमबुद्ध के अवतार के सम्बन्ध में वे विश्वास-सम्पन्न, बौद्धों के शून्यवाद के रहस्य के ज्ञाता, विविध कठोर व्रत आचरण करने वाले थे, ब्रह्मज्योति में उनका स्वरूप लीन था ॥४८॥

श्रीठाकुर ने बाद में उसके सम्बन्ध में स्वयं ही कहा था––"जिस दिन मैं सुरत-क्रियासक्त नर-नारियों के सम्भोग-आनन्द का दर्शन करके शिव-शक्ति का लीला-विलास जानकर उसमें मोहित होकर समाधिस्थ हो गया था, उस दिन बाहरी चेतना प्राप्त होने पर ब्राह्मणी ने कहा था––"बाबा, तुम आनन्दासन में सिद्ध होकर दिव्य भाव में अब प्रतिष्ठित हो गये हो। यही तन्त्र-मत का अन्तिम साधन है। (लीलाप्रसंग)

संकीर्तको नृत्यपरो निराशो, दरिद्रदेवो जनचित्तहारी ।
स्त्रीमात्रसंवीक्षितमातृरूपो वेश्यानुभूतोत्तममातृसत्तः ॥४६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१६२) संकीर्तकः संकीर्तन करने वाले, (१६३) नृत्यपरः नाचने में कुशल, (१६४) निराशः विषयों में वासना-रहित, (१६५) दरिद्रदेवः दरिद्रों को देवता समझने वाले, (१६६) जनचित्तहारी लोगों का चित्त आकर्षित करने वाले, (१६७) स्त्रीमात्रसंवीक्षितमातृरूपः सभी स्त्रियों में जगदम्बा का रूप देखने वाले, (१६८) वेश्यानुभूतोत्तममातृसत्तः वेश्या में भी पवित्र मातृ-सत्ता का अनुभव करने वाले ॥४६॥ *

आशय अनुवाद—वे (भगवद्भाव में विभोर होकर) संकीर्तन और नृत्य करते थे, उनमें सांसारिक विषयों के प्राप्त होने की आकांक्षा नहीं थी, दरिद्रों को वे साक्षात् देवता समझते थे, वे (अपने आडम्बर-रहित जीवन तथा सहज और सरल आचरणों के द्वारा) लोगों का हृदय आकर्षित करते थे। स्त्रियों को साक्षात् देवी समझ कर वे उन्हें प्रणाम करते थे तथा (श्रीरामकृष्ण देव की परीक्षा लेने के लिये मथुरामोहन के द्वारा लायी गयी) वेश्याओं के भीतर भी जगतमाता की पवित्र सत्ता का अनुभव करके (वे माँ-माँ कह कर उन्हें प्रणाम करते थे) समाधिस्थ हो पड़े थे ॥४६॥

---

* श्रीश्रीजगदम्बा के प्रथम दिव्य दर्शन की घटना के सम्बन्ध में श्रीरामकृष्ण देव ने कहा था—"घर द्वार मन्दिर सब कुछ विलीन हो गये थे। मैंने देखा एक असीम अनन्त चेतन ज्योति समुद्र की तरह गर्जन करते हुए ग्रास करने के लिये भयंकर वेग से अग्रसर हो रही है। वह उज्ज्वल तरंगमाला मेरे ऊपर आकर गिरी और मुझे उसने एकदम डुबो दिया। आनन्द में मग्न होकर मैं चेतना-रहित हो गया। उस ज्योतिःसमुद्र में चैतन्यघन जगदम्बा की वराभय मूर्ति का दर्शन हुआ था। (लीलाप्रसंग)

श्यामार्पितप्राणमनःशरीरः श्यामानिदिध्यासपरायणो वै ।
आहारपानस्वपनादिशून्यः श्यामावलोकाकुल उद्‌गताश्रुः ॥५०॥
ध्यानानुकूलाखिलपाशमोको ध्यानार्थसंत्यक्तसुवेशसूत्रः ।
तृणीकृताशेषधनोपहारो देवीवियोगव्यथितप्रदग्धः ॥५१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१६९) श्यामार्पितप्राणमनःशरीरः काली देवी को अपने मन प्राण और शरीर अर्पण करने वाले, (१७०) श्यामानिदिध्यास-परायणः काली माता के ध्यान में तन्मय, "वै" पादपूरण के लिये निश्चयार्थक अव्यय, (१७१) आहारपानस्वपनादिशून्यः भोजन, पान और निद्रा आदि से रहित, (१७२) श्यामावलोकाकुलः काली माता के दर्शन लाभ के लिये अत्यन्त व्याकुल (१७३) उदगताश्रुः नेत्रों से आँसू बहाने वाले ॥५०॥

आशय अनुवाद—वे काली देवी के चरणों में प्राण, मन और शरीर अर्पण कर चुके थे, उनके ध्यान में इतने अधिक तन्मय हो जाते थे कि भोजन, पान, निद्रा आदि का ज्ञान ही नहीं रहता था, उस समय वे श्रीश्रीकाली माता के दर्शन के लिये इतने अधिक व्याकुल होते थे कि उनके नेत्रों से अविरल धाराओं में आँसू बहते थे ॥५०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१७४) ध्यानानुकूलाखिलपाशमोकः ध्यान के अनुकूल सब प्रकार के बन्धन छोड़ने वाले, (१७५) ध्यानार्थसंत्यक्तसुवेशसूत्रः ध्यान के बाधक होने के कारण सुन्दर वेश तथा जनेऊ का भी त्याग करने वाले, (१७६) तृणीकृताशेषधनोपहारः अनेक धन आदि के उपहारों का तृण के समान परित्याग करने वाले, (१७७) देवीवियोगव्यथितप्रदग्धः देवी के अदर्शन से व्यथित होने तथा अन्तर्दाह का अनुभव करने वाले ॥५१॥

आशय अनुवाद—ध्यान के अनुकूल होने के लिये वे जाति का अभिमान आदि बन्धन का छेदन तथा सुन्दर वेश और जनेऊ का भी परित्याग कर चुके थे। वे सब प्रकार के धन आदि के उपहारों को तृण के समान समझते थे

'महिम्नः-स्तोत्र'-संप्रीतो भावसमाधिमज्जितः ।
अशेषभावसंसिद्धः कालिकाश्रेष्ठपूजकः ॥५६॥
नानाधर्ममतप्रेमी नानाधर्मपरीक्षकः ।
सत्यधर्मपथज्ञातः सकलधर्मसारदृक् ॥५७॥

होकर अद्वैतज्ञान में प्रतिष्ठित हुए थे तथा विधिपूर्वक विरजा होम करके उन्होंने वैदिक संन्यास ग्रहण किया था । सभी स्त्रियों में उनका अचञ्चल मातृभाव था और वे अपनी पत्नी तथा जगन्माता को समान समझते थे ॥५५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(१९८) महिम्नःस्तोत्र-संप्रीतः 'महिम्नःस्तोत्र' श्रवण करने में प्रसन्नचित्त, (१९९) भावसमाधिमज्जितः भगवद्भावसमाधि में निमग्न, (२००) अशेषभावसंसिद्धः अनेक भावों में सिद्धि-लाभ करने वाले, (२०१) कालिकाश्रेष्ठपूजकः कालीमाता के श्रेष्ठ पूजक ॥५६॥

आशय अनुवाद—वे शिवमहिम्नः स्तोत्र सुनकर अत्यन्त आनन्दित होते थे। (शिवमहिम्नः स्तोत्र का "न विद्मस्तत्तत्त्वं वयमिह तु यत्त्वं न भवसि" इत्यादि अंश सुनते ही वे ऐसी गम्भीर समाधि में मग्न हो जाते थे कि सम्पूर्ण स्तोत्र सुनना उनके लिये सम्भव नहीं होता था)। वे बार-बार भाव-समाधि में मग्न हो जाते थे। उन्होंने अनेक ईश्वरीय भावों की साधना में सिद्धि-लाभ किया था तथा कालिका देवी के वे श्रेष्ठ पूजक थे ॥५६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२०२) नानाधर्ममतप्रेमी विभिन्न धर्ममतों के प्रति वे प्रेम-भाव-सम्पन्न थे, (२०३) नानाधर्मपरीक्षकः अनेक धर्ममतों के परीक्षा करने काले, (२०४) सत्यधर्मपथज्ञातः सभी धर्ममार्गों को सत्य समझने वाले, (२०५) सकलधर्मसारदृक् सभी धर्मों का सार तत्त्व दर्शन करने वाले ॥५७॥

आशय अनुवाद—वे सभी धर्म-मतों के साथ प्रेम-सम्पन्न थे, उन्होंने अपने जीवन की साधना के द्वारा अनेक धर्म-मतों की सत्यता की परीक्षा की थी। उन्होंने सभी धर्म-पथों की सत्यता के विषय में निःसन्देह होकर उनके सार-तत्त्व का दर्शन किया था ॥५७॥

सारथिकृष्णसंद्रष्टा बालगोपालवीक्षकः ।
चपलबालिकावेशि-श्रीजगन्मातृदर्शकः ॥६०॥
श्यामावेषकरश्रेष्ठः स्वीकृतब्राह्मणीगुरुः ।
साधककुलमूर्धन्यः कृतधर्मसमन्वयः ॥६१॥
प्रकटितमहाभावः स्वदेहलीनराधिकः ।
भवतारिण्यनुध्याता त्वपरोक्षीकृताम्बिकः ॥६२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२१४ सारथिकृष्णसंद्रष्टा सारथिरूप से कृष्ण के स्पष्ट दर्शन करने वाले, (२१५) बालगोपालवीक्षकः श्रीकृष्ण के बाल-गोपाल रूप के दर्शन करने वाले, (२१६ चपलबालिकावेशि-श्रीजगन्मातृदर्शकः चञ्चल बालिका वेश में श्रीजगन्माता का दर्शन करने वाले ॥६०॥

आशय अनुवाद—उन्होंने अर्जुन के सारथि रूप से भगवान श्रीकृष्ण का प्रत्यक्ष दर्शन किया था, उन्होंने स्वयं बाल-गोपाल के भाव में भावित होकर श्रीकृष्ण का बाल-गोपाल रूप से दर्शन पाया था। (कलकत्ते के कालीघाट के काली-मन्दिर के पास) श्रीजगन्माता का दर्शन करके वे अत्यन्त आनन्दित हुए थे ॥६०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२१७) श्यामावेशकरश्रेष्ठः—काली देवी के वेशकारियों में श्रेष्ठ, (२१८) स्वीकृतब्राह्मणीगुरुः—ब्राह्मणी को गुरु रूप से स्वीकार करने वाले, (२१९) साधककुलमूर्धन्यः—साधकों में शिरोमणि, (२२०) कृतधर्मसमन्वयः—सभी धर्मों का समन्वय करने वाले ॥६१॥

आशय अनुवाद—काली देवी के वेशकारियों में श्रेष्ठ थे, उन्होंने भैरवी ब्राह्मणी को गुरु रूप से वरण कर लिया था, वे साधकों के शिरोमणि तथा सर्वधर्म-समन्वय करने वाले थे ॥६१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२२१) प्रकटितमहाभावः—उनके शरीर में वैष्णव शास्त्रोक्त महाभाव प्रकट हुए थे, (२२२) स्वदेहलीनराधिकः—उनके

प्रमूर्तरामसौमित्रिः

~~रामसौमित्रिभावाक्तः~~ सीतादर्शनमोदितः ।
परैकाग्रमनोवृत्तिरनेकतन्त्रसाधकः ॥६३॥
श्रीगौरांगासनारूढः 'शिख'--शासनतत्त्ववित् ।
प्रेमाश्रुसिक्ततुण्डादिर्नेतिनेतीति साधकः ॥६४॥

शरीर में राधिका लीन हुई थीं, (२२३) भवतारिण्यनुध्याता—भवतारिणी देवी के सदा ध्यानकारी, तु तथा, (२२४) अपरोक्षीकृताम्बिकः—अम्बिका देवी के साक्षात् दर्शन करने वाले ॥६२॥

आशय अनुवाद—उनके शरीर में वैष्णव शास्त्रोक्त सभी महाभाव प्रकट हुए थे, उनके अंग में श्रीराधिका लीन हो गयी थीं, ऐसा अनुभव उनमें हुआ था। वे श्रीश्रीभवतारिणी देवी का सदा ध्यान करते थे तथा उनका प्रत्यक्ष दर्शन करके धन्य हुए थे ॥६२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२२५) रामसौमित्रिभावाक्तः राम और लक्ष्मण का भाव उनमें प्रगट हुआ था, २२६) सीतादर्शनमोदितः सीता के दर्शन से प्रसन्न, (२२७) परैकाग्रमनोवृतिः परमेश्वर में एकाग्र मनोवृत्ति-सम्पन्न, (२२८) अनेक तन्त्रसाधकः अनेक तन्त्रों की साधना में सिद्ध थे ॥६३।

आशय अनुवाद—उनके भीतर राम और लक्ष्मण का भाव प्रगट हुआ था, उन्होंने सीता देवी का दर्शन किया था, वे अत्यन्त एकाग्रचित से परमेश्वर का ध्यान करते थे तथा अनेक तन्त्रों की साधनाओं में सिद्ध थे। (श्रीश्रीलीलाप्रसंग ग्रन्थ में मिलता है कि श्रीरामकृष्णदेव ने विष्णुक्रान्ता में प्रचलित ६४ तन्त्रों की साधना में सिद्धि-लाभ किया था) ॥६३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२२९) श्रीगौरांगासानारूढः श्रीगौरांगदेव के आसन पर उपविष्ट (२३०) 'शिख'—शासनतत्त्ववित् सिक्खों के धर्मशास्त्रों के तत्त्वज्ञ, २३१) प्रेमाश्रुसिक्ततुण्डादिः प्रेम के आँसुओं से उनका मुखमण्डल

कालतत्कामिनीद्रष्टा शवारूढशिवाप्रियः ।
ब्रह्मकुण्डलिनिद्राघ्नोऽविगीततन्त्रपारगः ॥६५॥
विविक्तसेवनाकृष्टो दिव्यप्रेममदाकुलः ।
जगदम्बसमादिष्टो दृढभावमुखस्थितिः ॥६६॥

प्लावित होता था, (२३२) नेति-नेतीतिसाधकः देह आत्मा नहीं, मन आत्मा नहीं, इस प्रकार विचार के साधक थे ॥६४॥

आशय अनुवाद—वे (कलकत्ते के कलुटोला मुहल्ले की हरिसभा में) उठकर श्रीगौरांग के आसन पर बैठ गये थे, वे सिक्खों के धर्म-ग्रन्थ ग्रन्थसाहब के मर्मज्ञ थे। साधन के समय हृदय की व्याकुलता से उनका मुखमण्डल प्रेम के आँसुओं से भींग जाता था। वे देह आत्मा नहीं, इन्द्रिय-आत्मा नहीं, मन-आत्मा नहीं, केवल शुद्ध चैतन्य ही आत्मा है, इस प्रकार की साधना में सिद्ध हुए थे ॥६४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२३३) कालतत्कामिनीद्रष्टा महाकाल शिव तथा कामिनी देवी के प्रत्यक्ष दर्शन करने वाले, (२३४) शवारूढशिवाप्रियः शव पर उपविष्ट शिवा के प्रिय, (२३५) ब्रह्मकुण्डलिनिद्राघ्नः तान्त्रिक साधना में कुलकुण्डलिनी के निद्राभंगकारी, (२३६) अविगीततन्त्रपारगः प्रशंसित तन्त्र-साधना में पारंगत ॥६५॥

आशय अनुवाद—उन्होंने महाकाल शिव तथा कालकामिनी देवी का दर्शन-लाभ किया था। वे शिवरूप शव पर उपविष्ट कालीदेवी के प्रिय थे। उन्होंने (स्वामी विवेकानन्द के मतानुसार) संसार के अन्तरस्थ ब्रह्मकुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत कर लिया था। वे प्रशंसित तन्त्रशास्त्र की साधना में पारंगत थे ।।६५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२३७) विविक्तसेवनाकृष्टः एकान्त स्थान में साधन करने में आकृष्ट, (२३८) दिव्यप्रेममदाकुलः दिव्य प्रेम में उन्मत्त, (२३९)

चलतीर्थस्वरूपोऽपि विहिततीर्थसेवनः ।
बृंहिततीर्थमाहात्म्यः सुतीर्थीकृतजन्मभूः ॥६७॥

जाग्रद्दृष्टामरव्रातः प्रकृष्टतीर्थपावनः ।
दरिद्रदुःखसन्तप्तः क्षुधातुरसुभोज्यदः ॥६८॥

जगदम्बासमादिष्टः जगदम्बा के द्वारा पूर्णरूप से आदेश प्राप्त, (२४०) दृढभावमुखस्थितिः दृढ़रूप से भावमय स्थिति में अवस्थित ॥६६॥

आशय अनुवाद—वे एकन्त स्थान में साधन करना पसन्द करते थे और दिव्य प्रेम में उन्मत्त हो जाते थे। उन्होंने पूर्णरूप से जगदम्बा का आदेश प्राप्त किया था। वे दृढ़रूप से भावमय स्थिति में अवस्थित होते थे ॥६६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२४१) चलतीर्थस्वरूपः सचल तीर्थरूप, अपि होने पर भी, (२४२) विहिततीर्थसेवनः शास्त्रविहित तीर्थों की सेवा करने वाले, (२४३) बृंहिततीर्थमाहात्म्यः तीर्थों की महिमा बढ़ाने वाले, (२४४) सुतीर्थीकृतजन्मभूः अपनी जन्मभूमि को तीर्थरूप में परिणत करने वाले ॥६७॥

आशय अनुवाद—उन्होंने जीवित तीर्थस्वरूप होकर भी अनेक तीर्थों की सेवा की थी तथा उन तीर्थों की महिमा बढ़ायी थी, यहाँ तक कि अपने आविर्भाव से निज जन्मभूमि कामारपुकुर को भी तीर्थरूप में परिणत किया था ॥६७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२४५) जाग्रद्द्रष्टामरव्रातः जाग्रत अवस्था में अनेक देवताओं का दर्शन करने वाले, (२४६) प्रकृष्टतीर्थपावनः तीर्थों की अत्यन्त पवित्रता सम्पादक, (२४७) दरिद्रःदुःखसन्तप्तः दरिद्रों के दुःख से दुःखित, (२४८) क्षुधातुरसुभोज्यदः भूखों को उत्तम खाद्य देने वाले ॥६८॥

आशय अनुवाद—वे जाग्रत अवस्था में देवताओं का दर्शन पाते थे, उन्होंने (अपने शुभ पदार्पण तथा पवित्रता की महिमा से) अनेक तीर्थों की

स्वाङ्गसंलीनविश्वेशो दृष्टतारकमन्त्रदः।
स्वर्णकाशीक्षणानन्दः स्वयंपूजितदुर्गतः ॥६९॥
दीनार्तशुल्कसम्मोची दृष्टज्योतिर्मयेश्वरः।
प्रकाशितपरप्रेमा प्राप्तकाशीशिवालयः ॥७०॥

पवित्रता को बढ़ाया था। वे दरिद्रों का दुःख देखकर अपने हृदय में क्लेश का अनुभव करते थे तथा भूखों को उत्तम रूप से भोजन कराते थे ॥६८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२४९) स्वांगसंलीनविश्वेशः अपने शरीर में विश्वेश्वर की विलीनता का प्रत्यक्ष करने वाले, (२५०) दृष्टतारकमन्त्रदः तारक मन्त्र देते हुए शिव का दर्शन करने वाले, (२५१) स्वर्णकाशीक्षणानन्दः सुवर्णमय काशी के दर्शन से आनन्दित, (२५२) स्वयंपूजितदुर्गतः दुरवस्था-प्राप्त लोगों की स्वयं पूजा करने वाले ॥६८॥

आशय अनुवाद—उन्होंने अपने शरीर में भगवान विश्वेश्वर का अनुभव तथा (काशी के मणिकर्णिका घाट पर मुमूर्षुओं के कानों में) तारक मन्त्र देने वाले जटाजूटधारी महादेव का दर्शन किया था। वे सुवर्णमय काशीपुरी का दर्शन कर अत्यन्त आनन्दित हुए थे, दुरवस्था-प्राप्त लोंगों में शिव को प्रत्यक्ष जानकर अन्नवस्त्रादि देकर उन्होंने उनकी पूजा की थी ॥६९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२५३) दीनार्तशुल्कसम्मोची दरिद्रों तथा दुःखितों को शुल्क से मुक्त करने वाले, (२५४) दृष्टज्योतिर्मयेश्वरः ज्योतिर्मय शिव का दर्शन करने वाले, (२५५) प्रकाशितपरप्रेमा परमप्रेमप्रकाशक, (२५६) प्राप्तकाशीशिवालयः काशी के विश्वनाथ मन्दिर में जाने वाले ॥७०॥

आशय अनुवाद—(भक्त मथुरामोहन को अनुरोध करके) उन्होंने दरिद्रों और दुःखितों के शुल्कमोचन की व्यवस्था कर दी थी। काशीधाम जाकर वे ज्यतिर्मय शिव का दर्शन पाकर धन्य हुए थे। उन्होंने काशीधाम के विश्वनाथ-मन्दिर में जाकर देवाधिदेव महादेव के प्रति परमप्रेम प्रदर्शित किया था ॥७०॥

वीणामधुरझंकारश्रवणप्राप्तनिर्वृतिः ।
गोपालकृष्णसुद्रष्टा श्रीवृन्दावनधामगः ॥७१॥
शिविकारोहणव्रज्यापूर्वभावसमाधिमान् ।
गोवर्धनशिलारूढो जनगणसमादृतः ॥७२॥
सन्देहराक्षसध्वस्ता स्पर्शमात्रसमाधिदः ।
अखिलधर्ममर्मज्ञो मूर्खपण्डितसाम्यदृक् ॥७३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२५७) वीणामधुरझङ्कारश्रवणप्राप्तनिर्वृतिः वीणा के मधुर झङ्कार सुन कर शान्ति-लाभ करने वाले, (२५८) गोपालकृष्णसुद्रष्टाः गोपाल रूप से कृष्ण का दर्शन करने वाले, (२५९) श्रीवृन्दावनधामगः श्रीवृन्दावनधाम में गमन करने वाले ॥७१॥

आशय अनुवाद—काशी में रहते समय वीणा के मधुर झङ्कार सुनकर समाधिस्थ होकर उन्होंने परमशान्ति-लाभ किया था। श्रीवृन्दावनधाम में जाकर गोपालरूप में श्रीकृष्ण का प्रत्यक्ष दर्शन पाकर वे धन्य हुए थे ॥७१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२६०) शिविकारोहणव्रज्यापूर्वभावसमाधिमान् पालकी में सवार होकर जाते समय अपूर्व-भाव समाधि में निमग्न, (२६१) गोवर्धनशिलारूढः गोवर्धन पर्वत पर आरूढ़, (२६२) जनगणसमादृतः वहाँ के लोगों के द्वारा विशेष सम्मानप्राप्त ॥७२॥

आशय अनुवाद—श्रीवृन्दावन में पालकी में सवार होकर जाते समय (श्रीकृष्ण के भाव में भावित होकर) वे अपूर्व-भाव समाधि में निमग्न हो गये थे। भाव के आवेश में रहकर जब वे गोवर्धन पर्वत पर चढ़ गये थे, तब वहाँ एकत्रित जनता उनके प्रति अनेक सम्मान दिखाकर उन्हें वहाँ से उतार लायी थी ॥७२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२६३) सन्देहराक्षसध्वस्ता सन्देहरूप राक्षस का ध्वंस करने वाले, (२६४) स्पर्शमात्रसमाधिदः स्पर्शमात्र से समाधि-प्रदान कर

स्वांगसंलीनगौरांगः स्मर्तृकलुषनाशनः ।
अस्पृश्यपतितोद्धर्ता धर्मद्वन्द्वविखण्डनः ॥७४॥

आद्यशक्त्यपृथग्भूतः शाक्तगणसुपूजितः ।
जीवदुःखामयोच्छेत्ता करुणावरुणालयः ॥७५॥

सकने वाले, (२६५) अखिलधर्ममर्मज्ञः सभी धर्मों के मर्मज्ञ, (२६६) मूर्खपण्डितसाम्यदृक् मूर्ख और पण्डित को समान देखने वाले ॥७३॥

आशय अनुवाद—उन्होंने (अपने दिव्य जीवन के द्वारा) मनुष्य के मन के ईश्वर सम्बन्धी सन्देहरूप राक्षस का ध्वंस किया था, वे उपयुक्त अधिकारी को स्पर्शमात्र से समाधिस्थ करते थे। वे (साधन और अनुभूति के द्वारा) सभी धर्मों का मर्म जान गये थे तथा मूर्ख और पण्डित को समान दृष्टि से देखते थे ॥७३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२६७) स्वांगसंलीनगौरांगः उनके अंग में गौरांगदेव विलीन हो गये थे, (२६८) स्मर्तृकलुषनाशन उनके स्मरण करने वाले के पापविनाशक, (२६९) अस्पृश्यपतितोद्धर्ता अस्पृश्यों और पतितों के उद्धारकर्ता, (२७०) धर्मद्वन्द्वविखण्डनः विभिन्न धर्मों के विरोधों के खण्डन करने वाले ॥७४॥

आशय अनुवाद—उन्होंने अपने अंग में श्रीगौरांगदेव को विलीन होते देखा था; उन्होंने अपनी मूर्ति के स्मरण करने वालों के सभी पापों का विनाश करके (अन्तिम समय में दर्शन देकर) उसे मुक्ति देना अंगीकार किया था। उन्होंने अस्पृश्य रसिक मेहतर तथा अनेक पतितों का उद्धार किया था तथा विभिन्न धर्मगत विरोधों का विशेष रूप से खण्डन किया था ॥७४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२७१) आद्यशक्त्यपृथग्भूतः आद्याशक्ति के साथ अभिन्न, (२७२) शाक्तगणसुपूजितः शक्ति-उपासकों के द्वारा उत्तम रूप से

भगवत्सत्प्रसंगोत्थश्रेष्ठसमाधिभावयुक् ।
श्रीकृष्णमधुराख्यानश्रवणप्राप्त-निर्वृतिः ॥७८॥
योगदो योगविद्वर्यः शुद्धसत्त्वप्रतिष्ठितः ।
सर्वद्वन्द्वविनिर्मुक्तो नरेन्द्रन्यस्तधर्मधीः ॥७९॥

आशय अनुवाद—नरेन्द्र आदि भक्तों को वे आनन्द देने वाले थे, श्रेष्ठ बुद्धिमान लोग उनके चरणों की पूजा करते थे, (स्वामी विवेकानन्दजी के मतानुसार) श्रीरामकृष्णदेव सभी अवतारों में श्रेष्ठ थे, वे शरणागतों को पापरूप दोषों से मुक्त कर सकते थे ॥७७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२८४) भगवत्सत्प्रसंगोत्थश्रेष्ठसमाधिभावयुक् श्रीभगवान के प्रसंग से उत्पन्न श्रेष्ठ समाधियुक्त, (२८५) श्रीकृष्णमधुराख्यानश्रवण-प्राप्तनिर्वृतिः श्रीकृष्ण के मधुर उपाख्यान सुनकर दिव्यभाव से उल्लसित ॥७८॥

आशय अनुवाद—वे श्रीभगवान के प्रसंग आने पर श्रेष्ठ समाधि-भाव में डूब जाते थे और श्रीकृष्ण के मधुर उपाख्यान सुनकर दिव्य भाव में उल्लसित होते थे ॥७८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२८६) योगदः योगदाता, (२८७) योगविद्वर्यः योगज्ञ व्यक्तियों में श्रेष्ठ, (२८८) शुद्धसत्त्वप्रतिष्ठितः शुद्धसत्त्व गुण में प्रतिष्ठित, (२८९) सर्वद्वन्द्वविनिर्मुक्तः सुख-दुःख, शीत-उष्ण, मान-अपमान, स्तुति-निन्दा आदि सभी द्वन्द्वभावों से मुक्त, (२९०) नरेन्द्रन्यस्तधर्मधीः नरेन्द्र आदि के चित्त में धर्म-बुद्धि उत्पन्न करने वाले ॥७९॥

आशय अनुवाद—वे धर्म-पिपासुओं को अधिकारानुसार निष्काम कर्म-रूप योग-साधन का उपदेश देते थे, वे सर्वोत्तम योग के रहस्य को जानते थे, शुद्धसत्त्वगुण में प्रतिष्ठित थे, सुख-दुःख, शीत-उष्ण, मान-अपमान, स्तुति-निन्दा, लाभ-हानि आदि सभी द्वन्द्वभावों से मुक्त थे, नरेन्द्र आदि शिष्यों के चित्त में धर्म-बुद्धि देने वाले थे ॥७९॥

च्युताच्युतो ज्ञानदाता सर्वजातिविमुक्तिदः ।
करामलकवत्सिद्धिर्मातृपूजासमाधिमान् ॥७६॥
दत्तभक्तजनानन्दः सुधीन्द्रसेविताङ्घ्रिकः ।
अवतावरिष्ठो वै पापदूषण-मोचकः ॥७७॥

पूजित, (२७३) जीवदुःखामयोच्छेत्ता जीवों के दुःख और रोग का उच्छेद करने वाले, (२७४) करुणावरुणालयः करुणा के सागर ॥७५॥

आशय अनुवाद—वे अपने को आद्या शक्ति के साथ अभिन्न समझते थे तथा शक्ति के उपासकों द्वारा उत्तम रूप से सम्मानित थे। वे जीवों के दुःख और रोग का उच्छेद करने वाले तथा करुणा के सागर थे ॥७५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२७५) च्युताच्युतः अपराजेय को भी पराजित करने वाले, (२७६) ज्ञानदाता आध्यात्मिक ज्ञान देने वाले, (२७७) सर्वजाति-विमुक्तिदः सभी जातियों के लोगों को मुक्ति देने वाले, (२७८) करामलकवत्-सिद्धिः हाथ में आँवले की तरह योग की सिद्धियाँ प्राप्त करने वाले, (२७९) मातृपूजासमाधिमान् जगन्माता की पूजा में समाधिस्थ होने वाले ॥७६॥

आशय अनुवाद—वे शास्त्रार्थ में अपराजेय व्यक्ति को भी अपनी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा पराजित कर सकते थे। वे आध्यात्मिक ज्ञानदाता थे, वे सभी मनुष्य-जाति को मुक्तिदान करने में समर्थ थे। योग की सिद्धियाँ हाथ के आँवले की तरह उन्होंने अनायास प्राप्त कर ली थीं और वे श्रीश्रीजगन्माता की पूजा करते हुए समाधिस्थ हो जाते थे ॥७६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२८०) दत्तभक्तजनानन्दः भक्तों को आनन्द देने वाले, (२८१) सुधीन्द्रसेविताङ्घ्रिकः श्रेष्ठ बुद्धिमान लोग उनके चरणों की पूजा करते थे, (२८२) अवतारवरिष्ठः अवतार स्वरूप होने के कारण श्रेष्ठ, वै अवश्य ही (२८३) पापदूषण-मोचकः पाप रूप दोषों से लोगों को मुक्त करने वाले ॥७७॥

भगवत्सत्प्रसंगोत्थश्रेष्ठसमाधिभावयुक् ।
श्रीकृष्णमधुराख्यानश्रवणप्राप्त-निर्वृतिः ॥७८॥
योगदो योगविद्वर्यः शुद्धसत्त्वप्रतिष्ठितः ।
सर्वद्वन्द्वविनिर्मुक्तो नरेन्द्रन्यस्तधर्मधीः ॥७९॥

आशय अनुवाद—नरेन्द्र आदि भक्तों को वे आनन्द देने वाले थे, श्रेष्ठ बुद्धिमान लोग उनके चरणों की पूजा करते थे, (स्वामी विवेकानन्दजी के मतानुसार) श्रीरामकृष्णदेव सभी अवतारों में श्रेष्ठ थे, वे शरणागतों को पापरूप दोषों से मुक्त कर सकते थे ॥७७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२८४) भगवत्सत्प्रसंगोत्थश्रेष्ठसमाधिभावयुक् श्रीभगवान के प्रसंग से उत्पन्न श्रेष्ठ समाधियुक्त, (२८५) श्रीकृष्णमधुराख्यानश्रवण-प्राप्तनिर्वृतिः श्रीकृष्ण के मधुर उपाख्यान सुनकर दिव्यभाव से उल्लसित ॥७८॥

आशय अनुवाद—वे श्रीभगवान के प्रसंग आने पर श्रेष्ठ समाधि-भाव में डूब जाते थे और श्रीकृष्ण के मधुर उपाख्यान सुनकर दिव्य भाव में उल्लसित होते थे ॥७८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२८६) योगदः योगदाता, (२८७) योगविद्वर्यः योगज्ञ व्यक्तियों में श्रेष्ठ, (२८८) शुद्धसत्त्वप्रतिष्ठितः शुद्धसत्त्व गुण में प्रतिष्ठित, (२८९) सर्वद्वन्द्व विनिर्मुक्तः सुख-दुःख, शीत-उष्ण, मान-अपमान, स्तुति-निन्दा आदि सभी द्वन्द्वभावों से मुक्त, (२९०) नरेन्द्रन्यस्तधर्मधीः नरेन्द्र आदि के चित्त में धर्म-बुद्धि उत्पन्न करने वाले ॥७९॥

आशय अनुवाद—वे धर्म-पिपासुओं को अधिकारानुसार निष्काम कर्म-रूप योग-साधन का उपदेश देते थे, वे सर्वोत्तम योग के रहस्य को जानते थे, शुद्धसत्त्वगुण में प्रतिष्ठित थे, सुख-दुःख, शीत-उष्ण, मान-अपमान, स्तुति-निन्दा, लाभ-हानि आदि सभी द्वन्द्वभावों से मुक्त थे, नरेन्द्र आदि शिष्यों के चित्त में धर्म-बुद्धि देने वाले थे ॥७९॥

अध्यात्मशक्तिसंदाता नरेन्द्रनिर्विकल्पदः ।
स्पर्शमात्र-सुविज्ञात-श्रीनरेन्द्रस्वरूपकः ॥८०॥
विलोममार्गनिर्ज्ञाताखण्डनरेन्द्रसत्स्थितिः ।
सप्तर्षिमण्डलान्तःस्थप्रेष्ठर्षिकण्ठधारकः ॥८१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२६१) अध्यात्मशक्तिसंदाता अध्यात्मशक्ति प्रदान करने वाले, (२६२) नरेन्द्रनिर्विकल्पदः नरेन्द्र को निर्विकल्प समाधि देने वाले, (२६३) स्पर्शमात्रसुविज्ञात-श्रीनरेन्द्रस्वरूपकः स्पर्श करते ही श्रीनरेन्द्र-नाथ का स्वरूप जानने वाले ॥८०॥

आशय अनुवाद—वे इच्छा-मात्र से ही योग्य प्रार्थी को आध्यात्मिक शक्ति उत्तम रूप से प्रदान करते थे, प्रार्थना करने पर नरेन्द्र को उन्होंने निर्विकल्प समाधि में संस्थित किया था तथा (दूसरे समय) वे स्पर्शमात्र से ही उन्हें समाधि-भूमि में पहुँचा कर उनके मुख से अतीन्द्रिय प्रज्ञालब्ध वाणी सुनकर अपने पूर्व-दृष्ट (नरेद्र का) स्वरूप पूर्णरूप से जान गये थे ॥८०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२६४) विलोममार्गनिर्ज्ञाताखण्डनरेन्द्रसत्स्थितिः विलोममार्ग के अवलम्बन से अखण्ड घर के ऋषि नरेन्द्रनाथ की उत्तम स्थिति के विज्ञाता (२६५) सप्तर्षिमण्डलान्तःस्थप्रेष्ठर्षिकण्ठधारथः सप्तर्षि-मण्डल के मध्यवर्ती प्रियतम ऋषि के कण्ठधारण करने वाले ॥८१॥

आशय अनुवाद—उन्होंने (दक्षिणेश्वर में रहते समय) विलोम-मार्ग के अवलम्बन से (समाधि योग से) अखण्ड-घर के ऋषि नरेन्द्रनाथ की उत्तम-स्थिति अच्छी तरह जान लिया था तथा उस समय अखण्ड-घर ज्यतिःपुञ्ज के बीच में स्वयं दिव्य शिशु-मूर्ति धारण करके ज्योतिर्मय सप्तर्षि-मण्डल के बीच प्रियतम नर-ऋषि का कण्ठ धारण किया था ॥८१॥

भक्तक्लेशासहिष्णुर्वै भवरोगविदूरकः ।
उररीकृतसद्दासीजगदम्बाऽखिलाऽऽमयः ॥८२॥
भक्तात्यन्तकृपावर्षी परतत्त्वोपदेशकः ।
जितकामादिषड्वर्गस्त्यक्तसर्वप्रतिग्रहः ॥८३॥
कामिनीकाञ्चनत्यागी ह्यपूर्वमातृपूजकः ।
स्थावरास्थावराभोगी सन्त्यक्तमथुराधनः ॥८४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२९६) भक्तक्लेशासहिष्णुः भक्तों के क्लेश न सह सकने वाले, वै अवश्य ही, (२९७) भवरोगविदूरकः संसार-रोग दूर करने वाले, (२९८) उररीकृतसद्दासीजगदम्बाऽखिलाऽऽमयः सती जगदम्बा दासी के सभी रोग अपने शरीर में ग्रहण करने वाले ॥८२॥

आशय अनुवाद—वे भक्तों के क्लेश सह नहीं सकते थे; वे योग्य अधिकारी व्यक्तियों का संसार-रोग दूर कर देते थे। उन्होंने विशेष प्रकार से प्रार्थित होकर प्रिय भक्त मथुरामोहन की मुमुर्षु पत्नी जगदम्बा दासी के सभी रोगों को अपने शरीर में आकर्षित कर लिया था ॥८२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(२९९) भक्तात्यन्तकृपावर्षी भक्तों पर पूर्ण कृपा बरसाने वाले, (३००) परतत्त्वोपदेशकः श्रेष्ठ तत्त्वों के उपदेशक, (३०१) जितकामादिषड्वर्गः काम क्रोध आदि छः रिपुओं पर विजय प्राप्त करने वाले, (३०२) त्यक्तसर्वप्रतिग्रहः सब प्रकार के ग्रहण को छोड़ने वाले ॥८३॥

आशय अनुवाद—भक्तों पर पूर्ण कृपा बरसाने वाले, श्रेष्ठ तत्त्वों के उपदेश देने वाले, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य इन छः रिपुओं पर विजय प्राप्त करने वाले तथा सब प्रकार के दान ग्रहण छोड़ने वाले ॥८३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३०३) कामिनीकांचनत्यागी कामिनी और कांचन का परित्याग करने वाले, हि अवश्य ही, (३०४) अपूर्वमातृ-पूजकः काली

'ब्रह्मयोनि'परिद्रष्टा विशदो विमलान्तरः ।
भावस्थिति-परः साक्षी दृष्टचैतन्यकीर्तनः ॥८५॥

माता के अपूर्व पूजक, (३०५) स्थावरास्थाराभोगी स्थायी भवन, खेत आदि सम्पत्ति तथा अस्थायी धन, वस्त्र आदि सम्पत्ति का भोग न करने वाले, (३०६) सन्त्यक्तमथुराधनः मथुरामोहन के द्वारा प्रदत्त सम्पत्ति का परित्याग करने वाले ॥८४॥

आशय अनुवाद—वे कामिनी और कांचन के परित्याग करने वाले, अवश्य ही काली-माता के अपूर्व पूजक थे, स्थायी भवन, खेत आदि सम्पत्ति तथा अस्थायी धन, वस्त्र आदि सम्पत्ति का भोग न करने वाले तथा मथुरामौहन के द्वारा प्रदत्त सम्पत्ति का परित्याग करने वाले थे ॥८४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३०७) 'ब्रह्मयोनि' 'परिद्रष्टाब्रह्मयोनि' का दर्शन करने वाले, (३०८) विशदः उज्ज्वल शुभ्रवर्णविशिष्ट, (३०९) विमलान्तरः निर्मल अन्तःकरण वाले, (३१०) भावस्थितिपरः भगवद्भाव में अवस्थित, (३११) साक्षी मन के दोष-गुणों के द्रष्टा, (३१२) दृष्टचैतन्यकीर्तनः श्रीगौरांगदेव के कीर्तनदल का दर्शन करने वाले ॥८५॥

आशय अनुवाद—उन्होंने (दक्षिणेश्वर में तन्त्र-साधन के समय "ब्रह्मशक्ति-रूपिणी अनन्त-ब्रह्माण्ड-प्रवासिनी) "ब्रह्मयोनि" का दर्शन प्राप्त किया था। वे उज्ज्वल शुभ्रवर्ण विशिष्ट थे, उनका हृदय अत्यन्त पवित्र था। सदा ही भगवद्भाव में स्थित रहकर वे इस परिवर्तनशील अनित्य जगत् में साक्षिस्वरूप होकर विराजमान रहते थे। किसी समय उन्होंने भाव-नेत्रों से श्रीगौरांगदेव के संकीर्तनदल को (दक्षिणेश्वर की पंचबटी की ओर से अपनी ओर आते) देखा था ॥८५॥

लोकप्रियो लोकनाथो लोकशिक्षागुरुः प्रभुः ।
लब्धयोगविभूतिश्च लोकानुग्रहकारकः ॥८६॥
लीलामयो हरिः साक्षात् पूजितो विश्ववन्दितः ।
भूयिष्ठसाधनानिष्ठः प्रथितो देवमानवः ॥८७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३१३) लोकप्रियः लोगों के प्रिय, (३१४) लोकनाथः लोकनायक, (३१५) लोकशिक्षागुरुः लोगों को शिक्षा देने वाले, (३१६) प्रभुः आध्यात्मिक प्रभाव-विस्तार करने वाले, (३१७) लब्धयोगविभूतिः योग की विभूतियों के अधिकारी, (३१८) लोकानुग्रहकारकः लोगों पर अनुग्रह करने वाले ॥८६॥

आशय अनुवाद—उनके उदार दिव्य भाव ग्रहण करने वाले लोगों के वे अभयाश्रयस्वरूप तथा लोगों के प्रिय थे। उत्तम लोक-शिक्षक के रूप में वे अनेक व्यक्तियों के ऊपर आध्यात्मिक प्रभाव डालते थे। श्रीश्रीजगदम्बा की कृपा से वे अणिमा महिमा लघिमा आदि योगविभूतियो के अधिकारी तथा लोगों पर अनुग्रह कर सकने वाले थे ॥८६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३१९) लीलामयः लीला करने वाले, (३२०) हरिः साक्षात् साक्षात् हरि, (३२१) पूजितः सब के द्वारा पूजित, (३२२) विश्ववन्दितः संसार के सभी लोगों के द्वारा वन्दित, (३२३) भूयिष्ठसाधनानिष्ठः अनेक प्रकार की साधनाओं में निष्ठासम्पन्न, (३२४) प्रथितः सुप्रसिद्ध, (३२५) देवमानवः देवता के समान मनुष्य ॥८७॥

आशय अनुवाद—वे साक्षात् हरिस्वरूप होने के कारण अनेक प्रकार के लीलाओं का आचरण करते थे। वे सभी लोगों के द्वारा पूजा-प्राप्त तथा विश्ववन्दित थे। अनेक प्रकार की साधनाओं में वे निष्ठा-सम्पन्न थे। वे मनुष्यों के बीच में देव-रूप से विख्यात थे ॥८७॥

वेदमूर्तिर्विभुस्त्राता विश्वपाता विशालधीः ।
वाञ्छाकल्पतरुर्वीरो विचित्रेश्वरदर्शनः ॥८८॥

विश्वेश्वरो विराड्रूपो विश्वाधारो विवेकदः ।
वरेण्यो वैष्णवो विष्णुर्विदीशो वेदवित्तमः ॥८९॥ त्री

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३२६) वेदमूर्तिः मूर्तिमान् वेदस्वरूप, (३२७) विभुः भगवान के तुल्य स्वरूप वाले, (३२८) त्राता परित्राण करने वाले, (३२९) विश्वपाता संसार के लोगों का पालन करने वाले, (३३०) विशालधीः विशाल बुद्धि वाले, (३३१) वांछाकल्पतरुः लोगों की कामना की पूर्ति कर सकने वाले, (३३२) वीरः वीरभावयुक्त, (३३३) विचित्रेश्वर विचित्रभाव से ईश्वर के दर्शन को प्राप्त ॥८८॥

आशय अनुवाद—वेद के सभी रहस्य जीवन में प्रगट होने से वे मूर्तिमान वेदस्वरूप थे। भगवान के स्वरूप होने से उन्होंने अपनी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा संसार के पापपंकनिमग्न व्यक्तियों का पालन और परित्राण किया था। वे महान् बुद्धिसम्पन्न, प्रार्थियों का अभीष्ट पूर्ण करने वाले थे तथा साधना के क्षेत्र में अदमनीय उत्साह तथा वीरता का प्रदर्शन करके विचित्र प्रकार से वे ईश्वर का दर्शन-लाभ कर सके थे ॥८८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३३४) विश्वेश्वरः विश्व के प्रभु, (३३५) विराड्रूपः महान् रूपयुक्त, (३३६) विश्वाधारः संसार के आधारस्वरूप, (३३७) विवेकदः विवेक-बुद्धि देने वाले, (३३८) वरेण्यः वरणीय, (३३९) वैष्णवः विष्णु-भक्त, (३४०) विष्णुः विष्णुस्वरूप, (३४१) विदीशः तन्त्राज्ञों में श्रेष्ठ, (३४२) वेदवित्तमः सर्वश्रेष्ठवेदज्ञ ॥८९॥

आशय अनुवाद—वे संसार के अध्यात्म साम्राज्य के प्रभु, दिव्यज्योतिर्मय महान् रूपधारी, संसार के धर्ममण्डल के आश्रय तथा शरणागतों के नित्यानित्यवस्तुओं के विवेकज्ञान के दाता थे। वे वरणीय, विष्णुभक्त

नानारूपो निराकारो नृदेवो निर्भयोऽव्ययः ।
नित्यो निर्वासनोऽज्ञेयो निर्विकल्पो निरंजनः ॥९०॥
कृपासारः कृपाधारः करुणः करुणेक्षणः ।
कालीसूनुः स्वयंकाली कर्णधार-स्वरूपकः ॥९१॥

(नारायण के अंश से उत्पन्न होने के कारण) विष्णुस्वरूप, तत्त्वज्ञानियों में वे सर्वश्रेष्ठ तथा वेदप्रतिपादित सृष्टि, स्थिति, प्रलय के रहस्यविदों में सर्वोत्तम थे ॥८९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ——(३४३) नानारूपः नानारूपधारी, (३४४) निराकारः आकार-रहित, (३४५) नृदेवः नररूपधारी देवता, (३४६) निर्भयः भय-रहित, (३४७) अव्ययः अक्षय, (३४८) नित्यः नित्य, (३४९) निर्वासनः वासना-रहित, (३५०) अज्ञेयः जानने के आयोग्य, (३५१) निर्विकल्पः विरुद्ध-चिन्ता-रहित, (३५२) निरंजनः कालिमा-रहित ॥९०॥

आशय अनुवाद——वे द्वैत, विशिष्टाद्वैत, अद्वैत आदि विभिन्न भावयुक्त होने के कारण बहुरूपी होने पर भी यथार्थ में विदेह थे, नररूपधारी देवता होने के कारण तथा आत्मभाव में सदा प्रतिष्ठित रहने के कारण सब प्रकार के भयों से रहित, अक्षयस्वरूप तथा नित्यस्वभाव-सम्पन्न थे। वे पूर्णरूप से विषय-वासना-रहित तथा दुर्विज्ञेय रहस्यमय, चित्तचाञ्चल्यरहित तथा निष्पाप पुरुष थे ॥९०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ——(३५३) कृपासारः कृपाधर्मी, (३५४) कृपाधारः कृपा के आधार, (३५५) करुणः करुणामय, (३५६) करुणेक्षणः करुणापूर्ण नेत्रों वाले, (३५७) कालीसूनुः भवतारिणी के पुत्र, (३५८) स्वयंकाली स्वयं-काली-स्वरूप, (३५९) कर्णधारस्वरूपकः कर्णधारस्वरूप ॥९१॥

आशय अनुवाद—अनुगत व्यक्तियों पर कृपा वर्षण करना ही उनका सार-धर्म था, वे कृपा और करुणा के मूर्ति थे और उनके दोनों नेत्र सदा ही

युगधर्मसुसंस्कर्ता युगभाव-प्रवर्तकः ।
युगाचार-परिद्रष्टा युगग्लानि-विदूरकः ॥६२॥
कृतश्रीकालिकालीलो ललितः प्रेमसुन्दरः ।
कामकाञ्चनशून्यश्च कलिकलुषनाशनः ॥६३॥

करुणा से पूर्ण रहते थे। वे कालीमाता के पुत्र थे और दिव्य अवस्था में कभी-कभी अपने को कालीमाता के रूप में प्रत्यक्ष अनुभव करते थे और मथुर बाबू आदि को उन्होंने काली-रूप से दर्शन भी दिया था। गुरु-रूप से वे आश्रित भक्तों के भव-समुद्र पार करने के लिए कर्णधार स्वरूप थे ॥६१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३६०) युगधर्मसुसंस्कर्ता उत्तम रूप से युगधर्म का संस्कार करने वाले, (३६१) युगभावप्रवर्तकः नवयुग के धर्मभाव का प्रवर्तक, (३६२) युगाचारपरिद्रष्टा इस युग के आचारों के निपुण द्रष्टा, (३६३) युग-ग्लानि-विदूरकः इस युग के धर्म की ग्लानि को दूर करने वाले ॥६२॥

आशय अनुवाद—उन्होंने उत्तम रूप से इस युग के धर्मों का संस्कार तथा नवयुग के धर्मभावों का प्रवर्तन किया था, लौकिक आचारों की भी उन्होंने निपुण-भाव से पर्यालोचना करके उनके आवश्यक संस्कार विधान रूप कर्मों के द्वारा इस युग की धर्मग्लानि को दूर किया था और निस्सन्देह यह काम उनके जीवन का अन्यतम श्रेष्ठ अवदान था ॥६२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३६४) कृतश्रीकालिकालीलः कालिका देवी के साथ दिव्यलीला करने वाले, (३६५) ललितः सुललित, (३६६) प्रेमसुन्दरः दिव्य-प्रेम के द्वारा चित्त हरने वाले, (३६७) कामकांचनशून्यः काम और कांचन में आसक्ति-रहित, (३६८) कलिकलुषनाशनः कलि के पापों का नाश करने वाले ॥६३॥

आशय अनुवाद—वे रंगमयी कालिका देवी के साथ विविध दिव्य-लीलाओं में मग्न रहते थे, उनके हावभाव सुललित थे और दिव्य प्रेम के द्वारा

वृद्धश्रवा बृहत्कर्मा भूतात्मा धर्मधारकः ।
प्रज्ञाघनो महाभावः प्राणरूपो निरन्तरः ॥९४॥
पितृमातृस्वरूपश्च जनतापनिवारकः ।
पतितपावनः शुद्धः शुद्धिदः सर्वतोमुखः ॥९५॥

समागत भक्तों का चित्त आकर्षित करते थे। काम और कांचन में उनकी आसक्ति नहीं थी तथा वे कलियुग के पापों का विनाश करते थे ॥९३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३६९) वृद्धश्रवा वर्धितकीर्तियुक्त, (३७०) बृहत्कर्मा महान कार्य करने वाले, (३७१) भूतात्मा प्राणियों के आत्मस्वरूप, (३७२) धर्गधारकः धर्म के धारक, (३७३) प्रज्ञाघनः घनीभूत ज्ञानस्वरूप, (३७४) महाभावः महाभावयुक्त, (३७५) प्राणरूपः जीवनस्वरूप, (३७६) निरन्तरः अवकाशरहित ॥९४॥

आशय अनुवाद—महान कर्मों का अनुष्ठान करने से उनका यश सर्वत्र फैल गया था। वे अपनी सिद्धियों के द्वारा ईश्वरीय भाव में अवस्थित होने से सभी प्राणियों के आत्मास्वरूप, तथा सद्धर्म के धारक थे। वे घनीभूत ज्ञानस्वेरूप, महाभावयुक्त तथा सांसारिक घात-प्रतिघातों से मृतकल्प अगणित मुमुक्षु भक्तों के प्राणस्वरूप थे। उन्होंने साधना और धर्मदान के विषय में सदा निरत रहकर अवकाश-रहित जीवन-यापन करके संसार के अशेष कल्याणों का साधन किया था ॥९४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३७७) पितृमातृस्वरूपः वे भक्तों के पिता और माता के स्वरूप थे, च और (३७८) जनतापनिवारकः जनता का दुःख दूर करने वाले, (३७९) पतितपावनः पतितों का उद्धार करने वाले, (३८०) शुद्धः विशुद्ध, (३८१) शुद्धिदः पवित्र करने वाले, (३७२) सर्वतोमुखः सभी विषयों का रहस्य जानने वाले ॥९५॥

आशय अनुवाद—वे कभी सन्तानवत्सल पिता और कभी स्नेहमयी माता रूप से भक्तों के निकट प्रेतीयमान होते थे, वे अपनी आध्यात्मिक शक्ति के

सर्वज्ञः सर्वशक्तिश्च वासनाबीजभर्जकः ।
आत्मारामो रमानाथः परब्रह्म परेश्वरः ॥९६॥
कठोरकर्मकृच्छाक्तो मूर्तकारुण्यविग्रहः ।
कृपाकटाक्षसुक्षेपी निर्मोहो लोकपावनः ॥९७॥

प्रभाव से लोगों की त्रिताप-ज्वाला दूर करते थे तथा अपने दिव्य स्पर्श से पापियों को पवित्र कर सकते थे। वे स्वयं विशुद्ध-भाव-सम्पन्न थे तथा दूसरों को भी विशुद्ध भाव में प्रतिष्ठित कर सकते थे। वे सभी विषयों का रहस्य जानते थे, इस कारण धर्मपिपासुओं को अधिकार के अनुसार श्रीमुख की वाणी द्वारा आध्यात्मिक मार्ग में परिचालित कर सकते थे ॥९५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३८३) सर्वज्ञः सर्वज्ञ, (३८४) शर्वशक्तिः सर्वशक्तिमान, च तथा, (३८५) वासनाबीजभर्जकः वासना-बीज को भुन डालने वाले, (३८६) आत्मारामः आत्मभाव में परितृप्त, (३८७) रमानाथः सौभाग्य के अधिपति, (३८८) परब्रह्म परब्रह्मस्वरूप, (३८९) परमेश्वरः परमेश्वर-स्वरूप ॥९६॥

आशय अनुवाद—वे महान सिद्धिप्राप्त होने से सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान थे। संसार के उत्पादक सभी प्रकार के वासना-बीजों को भुन डालने वाले, केवल आत्मा में ही परितृप्त थे। महान सौभाग्य के अधीश्वर तथा निर्विकल्प समाधिमान होने से और अनायास अणिमा, लघिमा आदि सिद्धियों को प्राप्त करने के कारण वे परमेश्वर-स्वरूप ही हो गये थे ॥९६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३९०) कठोरकर्मकृत् कठोर साधन करने वाले, (३९१) शाक्तः शक्ति के उपासक, (३९२) मूर्तकारुण्यविग्रहः मूर्तिमान करुणा के विग्रह स्वरूप, (३९३) कृपाकटाक्षसुक्षेपी कृपारूप कटाक्ष निक्षेप करने वाले, (३९४) निर्मोहः मोहमुक्त, (३९५) लोकपावनः लोगों को पवित्र करने वाले ॥९७॥

आशय अनुवाद—उन्होंने विविध मतों की कठोर साधना की थी,

शक्त्याधारः शिवः शान्तः शङ्करः शक्तिदायकः ।
शुक्लाम्बरधरः शुभ्रः शान्तिदः श्रुतिसारवित् ॥९८॥
बुद्धिदो बोधिदः सौम्यः परमानन्ददायकः ।
विश्ववेत्ता त्रिकालज्ञस्त्वद्वितीयो मनोयतिः ॥९९॥

विशेषरूप से शक्ति के वे उपासक थे। दिव्य प्रेम का आविर्भाव होने के कारण उन्होंने घनीभूत करुणा की मूर्ति में कृपाकटाक्ष द्वारा अनेक मनुष्यों को संसार-भय दूर करके यथार्थ चैतन्य दिया था। सब प्रकार से मोहमुक्त होकर उन्होंने अपने को लोगों को पवित्र करने में संलग्न कर रखा था ॥९७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(३९६) शक्त्याधारः शक्ति के आधार, ३९७) शिवः मंगलस्वरूप, (३९८) शान्तः शान्त, (३९९) शंकरः संसार का मंगल करने वाले, (४००) शक्तिदायकः शक्तिदाता, (४०१) शुक्लाम्बरधरः शुक्ल-वस्त्रधारी (४०२) शुभ्रः गौर वर्ण वाले, (४०३) शान्तिदः शान्तिदाता, (४०४) श्रुतिसारवित् ब्रह्मवित् ॥९८॥

आशय अनुवाद—वे सब प्रकार की आध्यात्मिक शक्तियों के आधार थे, मंगलमय, शान्तस्वभाव, संसार के मंगलकारी तथा शरणागत मुमुक्षुओं को साधन-शक्ति देते थे। वे शुक्ल वस्त्र पहनने वाले और स्वयं भी गोरे थे। ब्रह्मवित् होने के कारण वे अपनी उपस्थिति के द्वारा पवित्र शान्ति का वितरण करते थे ॥९८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४०५) बुद्धिदः सुबुद्धिदाता, (४०६) बोधिदः आत्मज्ञानदाता, (४०७) सौम्यः सौम्यमूर्ति, (४०८) परमानन्ददायकः परमानन्ददाता, (४०९) विश्ववेदाः विश्व के सभी विषयों के ज्ञाता, (४१०) त्रिकालज्ञः त्रिकालज्ञ, तु तथा, (४११) अद्वितीयः अद्वितीय, (४१२) मनोयतिः मन के नियामक ॥९९॥

आशय अनुवाद—वे लोगों को सुबुद्धि तथा परम-ज्ञान देते थे, उनकी

SL

प्रेमात्मारूपरूपो वै विश्वात्मा हृदयेश्वरः ।
महाधारो महाशक्तिरोजोधातात्मतुष्टिमान् ॥१००॥
साधुमित्रं सदानन्दः सत्स्वरूपः सदातनः ।
सम्प्रदायविहीनोऽपि प्रतिसंघसुधारकः ॥१०१॥

मूर्ति सुन्दर थी, वे परमानन्द देते थे। विश्व के सभी विषयों के ज्ञाता तथा भूत, भविष्य, वर्तमान इन तीन कालों के भी ज्ञाता थे। वे अद्वितीय ब्रह्मस्वरूप में प्रतिष्ठित रह कर आश्रित जनों की अन्तरिन्द्रिय को निमन्त्रित करते थे ॥९९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ (४१३) प्रेमात्मा प्रेमस्वरूप, (४१४) अरूपरूपः रूप-रहित, वै अवश्य ही, (४१५) विश्वात्मा विश्व के आत्मस्वरूप, (४१६) हृदयेश्वरः हृदय के ईश्वर, (४१७) महाधारः विशाल आधार स्वरूप, (४१८) महाशक्तिः महाशक्ति के धारक, (४१९) ओजोधाता तेज प्रदानकारी, (४२०) आत्मतुष्टिमान् आत्मा में सदा परितृप्त ॥१००॥

आशय अनुवाद—ईश्वर का सायुज्य लाभ करके वे अनिर्वचनीय प्रेमस्वरूप हो गये थे, ब्राह्मीस्थितिसम्पन्न होने से रूपरहित, आत्मारूप से सभी विश्व में परिव्याप्त, सगुण ईश्वर के साथ अभिन्न ज्ञान से जीव मात्र के हृदय के वे स्वामी थे। वे विशाल ईश्वर के साथ अभेद ज्ञान से अभिव्याप्त संसार के आधार थे। महान् आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होने से वे अनुगत साधकों के भीतर ब्रह्मतेजदाता तथा स्वयं अन्य विषयों में निरपेक्ष रहने के कारण आत्मानन्द में पूर्ण थे ॥१००॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४२१) साधुमित्रम् साधुओं के मित्र, (४२२) सदानन्दः सदा ही आनन्दित, (४२३) सत्स्वरूपः सत्स्वरूप, (४२४) सदातनः सर्वकाल में अवस्थित, (४२५) सम्प्रदायविहीनः सभी सम्प्रदायों से अलग, अपि भी, (४२६) प्रतिसंघसुधारकः सभी सम्प्रदायों की उन्नति के उत्तम धारक ॥१०१॥

आशय अनुवाद—वे सज्जनों का संग पसन्द करते थे, इस कारण उन

भावातीतो भवस्तुत्यो भक्तिमार्गप्रदर्शकः ।
भगवान् भावपाथोधिर्भवबन्धनखण्डनः ॥१०२॥
भक्तेश्वरो भयोच्छेत्ता भवसागरतारणः ।
भक्तपालो भवत्राता भक्तहृदयरञ्जनः ॥१०३॥

लोगों के साथ उनकी घनिष्ठ अन्तरंगता थी। वे आनन्दमयी काली माता को हृदय में धारण करके सदा ही आनन्द-मग्न रहते थे। सत्स्वरूप भगवान की चिन्ता करके वे स्वयं सत्स्वरूप बन गये थे। उन्होंने आत्मा को नित्य-स्वरूप जानकर अपने को सब कालो में अवस्थित देखा था। धर्म के विषय में परम-उदार-दृष्टि-सम्पन्न होने के कारण वे किसी एक सम्प्रदाय के अन्तर्भुक्त नहीं थे, तथापि हर एक धर्म-सम्प्रदाय को महत्त्व देकर उनकी उन्नति में सहायता देते थे ॥१०१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४२७) भावातीतः सभी मनोभावों से अतीत, (४२८) भवस्तुत्यः जीवों के पूज्य, (४२९) भक्तिमार्गप्रदर्शकः भक्ति-पथ प्रदर्शन करने वाले, (४३०) भगवान् सभी-योगैश्वर्य-सम्पन्न, (४३१) भावपाथोधिः भावसागर, (४३२) भवबन्धन-खण्डनः लोगों का संसार-बन्धन छिन्न करने वाले ॥१०२॥

आशय अनुवाद—उन्होंने अपनी साधना के प्रभाव से ईश्वरीय सगुण भावराज्य का अतिक्रमण किया था, अपने पवित्र दिव्यजीवन के कारण मुमुक्षु व्यक्तियों के पूज्य थे। वे उपयुक्त साधकों को विशुद्ध भक्तिमार्ग का प्रदर्शन करते थे, पवित्र चरित्र के कारण वे परम-पूज्य थे तथा भाव-सिद्ध होने के कारण भाव-समुद्रस्वरूप थे, वे सद्गुरु के रूप में यथार्थ मुक्तिकामियों का संसार-बन्धन काट देते थे ॥१०२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४३३) भक्तेश्वरः भक्तों के प्रभु, (४३४) भयोच्छेत्ता संसार-भय का उच्छेद करने वाले, (४३५) भवसागरतारणः

अमितगुणचरित्रोऽनन्तमूर्तिः प्रशान्तो
हृदयकमलसंस्थो ज्ञानदानावतीर्णः ।
प्रकृतिविकृतिशून्यः सर्वगः सर्वसाक्षी
विमलपरमहंसो विश्वधर्मप्रतीकः ॥१०४॥

संसार-समुद्र का पार करने वाले, (४३६) भक्तपालः भक्तों के पालक, (४३७) भवत्राता संसार के लोगों का परित्राण करने वाले, (४३८) भक्त-हृदय-रंजनः भक्तों के हृदय में आनन्द देने वाले ॥१०३॥

आशय अनुवाद—वे भक्तों के प्रभु, संसार-भय का नाश करने वाले, शरणागत व्यक्तियों को संसार-समुद्र का पार करने वाले, मुमुक्षु व्यक्तियों के आश्रय-दाता, संसार-बन्धन से मुक्त करने वाले तथा भक्तों के हृदय में आनन्द देने वाले थे ॥१०३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४३९) अमितगुणचरित्रः असीम गुणयुक्त चरित्र वाले, (४४०) अनन्तमूर्तिः अनन्त मूर्तियों वाले, (४४१) प्रशान्तः प्रशान्त, (४४२) हृदय-कमल-संस्थः हृदय-कमल में विराजमान, (४४३) ज्ञानदानावतीर्णः ज्ञान-दान के लिए अवतीर्ण, (४४४) प्रकृतिविकृतिशून्यः स्वाभाविक विकार रहित, (४४५) सर्वगः सर्वत्र गमनशील, (४४६) सर्वसाक्षी सभी के साक्षी (४४७) विमलपरमहंसः विशुद्ध परमहंस, (४४८) विश्वधर्मप्रतीकः विश्व के सभी धर्मों के मूर्ति-स्वरूप ॥१०४॥

आशय अनुवाद—वे असीम दिव्य गुणों से युक्त चरित्र वाले, अनन्त-भावघन-मूर्तियुक्त, सदा आत्मभाव में अवस्थित रहने के कारण पूर्णतया शान्त, ध्यान के समय अनुगत भक्तों के हृदय-कमल में दिव्य ज्योतिर्मय मूर्ति रूप में अवस्थित, ईश्वरतत्त्व के विषय में लोगों को ज्ञान देने के लिए अवतीर्ण, सत्त्व, रज, तम इन तीन गुणों के स्वाभाविक विकार से रहित, महान सिद्धि-प्राप्त होने के कारण सूक्ष्म शरीर में सर्वत्र गमन कर सकने वाले, त्रिकालज्ञ होने से

प्रणयगलितचित्तोऽनादिरूपोऽतिसूक्ष्मः
शिशुमतिरविनाशी शक्तिपाथस्तरङ्गः।
अगतिकगतिदायी शान्तिदानावतीर्णः
शमनदमनकारी शान्तिवर्षिस्वरूपः ॥१०५॥

सभी विषयों के साक्षी रूप में अवस्थित, इस असार संसार के साररूप भगवत्तत्व पूर्णतया अवगत होने के कारण विशुद्ध राजहंस के तुल्य परमहंस उपाधि प्राप्त तथा सभी धर्मों की सत्यता हृदयंगम होने के कारण वे उदार विश्वव्यापक धर्मों के प्रतीक स्वरूप थे ॥१०४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४४९) प्रणयगलितचित्तः प्रेम में विगलित चित्त वाले, (४५०) अनादिरूपः अनादि स्वरूप, (४५१) अतिसूक्ष्मः अत्यन्त सूक्ष्म, (४५२) शिशुमतिः शिशु के समान सरल बुद्धि वाले, (४५३) अविनाशी विनाश-रहित, (४५४) शक्तिपाथस्तरंगः शक्तिसमुद्र के तरंग-स्वरूप, (४५५) अगतिकगतिदायी गतिहीन लोगों को गति देने वाले, (४५६) शान्तिदानावतीर्णः शान्तिदान के लिए अवतीर्ण, (४५७) शमनदमनकारी यमराज के भय के निवारक, (४५८) शान्तिवर्षिस्वरूपः शान्तिवारि वर्षणकारी ॥१०५॥

आशय अनुवाद—भगवत्प्रेम में आविष्ट रहने के कारण अन्य के प्रति उनका चित्त प्रेम से विगलित होता था। अनादि ईश्वर के साथ अभिन्न ज्ञान में प्रतिष्ठित रहने के कारण वे स्वयं स्वरूपतः अनादि तथा अतिसूक्ष्म ईश्वर-स्वरूप और जन्म से ही बच्चों की तरह सरल स्वभाव वाले थे। अपना अविनाशी आत्मस्वरूप जान जाने से वे अपने को अमर समझते थे। ब्रह्माण्ड की मूलीभूत आद्या शक्ति रूप समुद्र से उत्थित एक विशेष तरंग-रूप से अर्थात् युगावतार बनकर अवतीर्ण होकर वे अगणित गतिहीनों को गतिदान करते थे। वे त्रिताप-तापित व्यक्तियों के अन्तिम शान्ति प्रदाता थे और शरणागत जनों को यम-भय दूर करके उनके हृदय में स्वभावतः शुद्धशान्तिवारि वर्षण करते थे ॥१०५॥

रतिपतिभयहारी सर्वकल्याणराशि
रिपुकुलसुमहारिर्ज्ञानमार्गप्रकाशी ।
यतिमुनिजनतारी रञ्जको भावमूर्ति-
र्मतिमललयकारी मोहमेघापसारी ॥१०६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४५९) रतिपति-भयहारी काम की उत्तेजना के भय के निवारक, (४६०) सर्वकल्याणराशिः जगत्कल्याण-समूह-स्वरूप, (४६१) रिपुकुलसुमहारिः छः रिपुओं के सुमहान शत्रु, (४६२) ज्ञानमार्ग-प्रकाशी ज्ञान-मार्ग को प्रकाशित करने वाले, (४६३) यतिमुनिजन-तारी यतियों और मुनियों का उद्धार करने वाले, (४६४) रंजकः लोगों के चित्त को आनन्द देने वाले, (४६५) भावमूर्तिः भगवद्भावों के मूर्तिस्वरूप, (४६६) मतिमल-लयकारी बुद्धि की मलिनता दूर करने वाले, (४६७) मोहमेघापसारी मोहरूप बादल को दूर करने वाले ॥१०६॥

आशय अनुवाद—वे अपने अनुगत साधकों के साधन-मार्ग के भयंकर विघ्न-रूप कामवृत्ति से उत्पन्न भय को इच्छामात्र से दूर करके उन्हें सब प्रकार का आध्यात्मिक कल्याण देते थे; वे तीव्र इच्छाशक्ति के प्रभाव से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य इन छः रिपुओं को पूर्णतया विनष्ट करते थे। वर्तमान युग के लिए पुनः विशुद्ध आध्यात्मिक ज्ञान-मार्ग को प्रकाशित करके यति मुनि आदि साधकों को आत्म-ज्ञान देकर उनका उद्धार करते थे। वे भक्तों के चित्त को भगवदनुराग से आनन्दित करते थे। विविध प्रकार के भगवद्-भावों के आधार होने के कारण वे विशुद्ध भावघनमूर्तियुक्त थे तथा अपनी पवित्र अमोघ इच्छा-शक्ति के प्रभाव से आश्रित मुमुक्षुओं की बुद्धि की मलिनता दूर करके उनके चित्त के मोहरूप बादल को पूर्णतया नष्ट कर देते थे ॥१०६॥

कलुषमलविनाशी सच्चिदानन्दमूर्ति-
निखिलमधुरभावस्वाश्रयः पूर्णरूपः ।
अभिलषितविधातापूर्वशक्तिप्रदाता-
प्यमृतमधुररूपः सर्वविश्वातिशायी ॥१०७॥
परमशरणदाता शुद्धबोधप्रदीपो
धृतसहजसमाधिः सक्रियो निष्क्रियश्च ।
दुरितदलनशक्तो विश्वभावप्रवेत्ता
त्रिगुणरहितरूपो भास्वरश्चिद्विलासः ॥१०८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४६८) कलुषमलविनाशी पापरूप मलिनता का विनाश करने वाले, (४६९) सच्चिदानन्दमूर्तिः सच्चिदानन्दघनमूर्ति वाले, (४७०) निखिलमधुरभावस्वाश्रयः सभी मधुर भावों का उत्तम आश्रय, (४७१) पूर्णरूपः परिपूर्णस्वरूप, (४७२) अभिलषित-विधाता भक्तों के आकांक्षित विषयों को प्रदान करने वाले, (४७३) अपूर्वशक्तिप्रदाता अपूर्व शक्ति देने वाले, (४७४) अमृतमधुररूपः अमृतमय मधुर-रूपसम्पन्न, अपि भी, (४७५) सर्वविश्वातिशायी समस्त विश्व का अतिक्रमण करके अवस्थित ॥१०७॥

आशय अनुवाद—वे शरणागत जनों की पापरूप मलिनता दूर करते थे। ब्राह्मी स्थिति लाभ करने के कारण वे सच्चिदानन्द-स्वरूप ब्रह्म के घनीभूत विग्रह रूप थे। वैष्णव शास्त्रोक्त मधुरभाव की साधना में पूर्ण सिद्धि प्राप्त करके वे उक्त भाव के सर्वोत्तम आश्रय थे तथा पूर्ण-ब्रह्म को जानकर पूर्णस्वरूपता प्राप्त हुए थे। कल्पतरु की तरह प्रार्थी जनों के शुभ अभिलाषों की पूर्ति करते थे और उनके ऊपर पूर्णतया निर्भरशील साधकों को वे अपूर्व पुरुषकाररूप साधनशक्ति प्रदान करते थे। उनका रूप अमृतमय मधुर था। वे भूमा स्वरूप ब्रह्म को जानकर सभी विश्व का अतिक्रमण करके अवस्थित थे ॥१०७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४७६) परमशरणदाता परम आश्रयदाता,

हृतशशधरकान्तिरुत्तमज्योतिरेव

प्रभवमरणहीनश्चिन्मयो दिव्यरूपः ।

चिरसहचर इष्टो दीनबन्धुः कृपालु-

र्निखिलभुवनधाता तारकोऽनाथनाथः ॥१०९॥

---

(४७७) शुद्धबोधप्रदीपः विशुद्ध ज्ञान के दीपक स्वरूप, (४७८) धृतसहजसमाधिः सहज में समाधिभाव प्राप्त, (४७९) सक्रियः सदा कर्म में सलग्न, च तथा, (४८०) निष्क्रियः आत्मस्थ अवस्था में सदा ही कर्महीन, (४८१ दुरितदलनशक्तः पाप दूर करने में समर्थ, (४८२) विश्वभावप्रवेत्ता संसार के सभी भावों के उत्तम ज्ञाता, (४८३) त्रिगुणरहितरूपः त्रिगुणातीत अवस्था प्राप्त, (४८४) भास्वरः दीप्तिमान, (४८५) चिद्विलासः ज्ञान का पूर्ण विकास करने वाले ॥१०८॥

आशय अनुवाद—उनके ऊपर निर्भरशील साधकों के वे उत्तम आश्रयदाता तथा यथार्थ तत्वज्ञानप्रार्थियों के लिए ज्ञान के दीपक स्वरूप थे। वे अत्यन्त सहज में ही समाधिस्थ हो जाते थे। भगवान की साधना के क्षेत्र में सदा भक्तों की आध्यात्मिक उन्नति के विषय में उत्साह बढ़ाने वाले, कठोर कर्मों का आचरण करने पर भी यथार्थ वे क्रियारहित आत्मस्वरूप में प्रतिष्ठित थे। वे अनेक पापी तापी व्यक्तियों का पाप दूर करने में समर्थ थे। वे सर्वज्ञ ईश्वर के साथ सदा युक्त रहने के कारण सब प्रकार के भावों के उत्तम ज्ञाता तथा मायातीत तुरीय ब्रह्म के साथ अभिन्नता-ज्ञान प्रयुक्त स्वरूपतः त्रिगुणातीत, ज्योतिर्मण्डित तथा ज्ञान का पूर्ण विकास करने वाले थे ॥१०८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४८६) हृतशशधरकान्तिः चन्द्रमा की कमनीयता को हरने वाले, (४८७) उत्तमज्योतिः उत्कृष्टज्योतिस्वरूप, एव ही, (४८८) प्रभवमरणहीनः जन्ममृत्युरहित, (४८९) चिन्मयः ज्ञानस्वरूप, (४९०) दिव्यरूपः दिव्यरूपवान, (४९१) चिरसहचरः चिरबन्धु, (४९२) इष्टः सभी के इष्टदेवतास्वरूप (४९३) दीनबन्धुः दरिद्रों के मित्र, (४९४) कृपालुः

महासाध्यो महासिद्धोऽमितवीर्यो दिगम्बरः ।
महाविपन्निवारी च त्यक्तलज्जाभयादिकः ॥११०॥

दयालु, (४९५) निखिलभुवनधाता सभी ब्रह्माण्डों के धारणकर्ता, (४९६) तारकः सभी के उद्धार करने वाले, (४९७) अनाथनाथः अनाथों के नाथ ॥१०९॥

आशय अनुवाद—विशुद्ध सत्त्वगुण में उद्भासित होने के कारण वे अपने अलौकिक रूप के द्वारा चन्द्रमा की कमनीयता का हरण करके स्वयं घनीभूत ज्योतिःस्वरूप हो गये थे। आत्मस्वरूप के साथ अभिन्न ज्ञान से वे यथार्थ में ही जन्म-मृत्युरहित थे। वे ज्ञान-स्वरूप तथा दिव्य-चैतन्य-स्वरूप थे। अपने को युगावतार जानकर वे त्रिताप से तापित आश्रित जनों के चिर-बन्धु तथा इष्ट-देवता स्वरूप थे। दरिद्रों के प्रति वे दयालु तथा सहानुभूतिपूर्ण थे। परमेश्वर के साथ एकत्व-बोध होने से वे निखिल भुवन के धारणकर्त्ता, पापियों तपियों के उद्धारकर्त्ता तथा अनाथों के वे आश्रयस्वरूप थे ॥१०९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(४९८) महासाध्यः उत्तम साधनालभ्य वस्तुस्वरूप, (४९९) महासिद्धः परमसिद्ध, (५००) अमितवीर्यः आपरमित शक्तिशाली, (५०१) दिगम्बरः आवरणहीन, (५०२) महाविपन्निवारी भीषण विपत्ति के निवारणकरने वाले, च तथा, (५०३) त्यक्तलजाभयादिकः लज्जा भय आदि को छोड़ने बाले ॥११०॥

आशय अनुवाद—वे अनेक भक्तों के लिए परम साधनालभ्य वस्तु थे। वे अलौकिक साधना के द्वारा महान सिद्धि प्राप्त हुए थे तथा अपरिमित शक्तिशाली थे। वे अत्यन्त शरणागत भक्तों के यम-भय रूप महान विपत्ति से उद्धार करने वाले थे। बार-बार भावसमाधि में निमग्न होकर देहज्ञान-रहित होने से वे कभी-कभी लजा-भय आदि छोड़कर नग्न होकर विचरण करते थे ॥११०॥

अद्भुतो मनुजश्रेष्ठो युगपच्चतुराश्रमी ।
जगत्स्वामी महाचार्यो त्यागिवर्यो ह्यखण्डधीः ॥१११॥
अनादिर्निधनोऽनन्तोऽव्यक्तोऽखिलहृदीश्वरः ।
असीमबलशाली वै गुणाढ्यश्च गुणातिगः ॥११२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५०४) अद्भुतः अपूर्व, (५०५) मनुज-श्रेष्ठः श्रेष्ठ मानव, (५०६) युगपच्चतुराश्रमी एक ही समय चारों आश्रमों में अवस्थित, (५०७) जगत्स्वामी जगत् के पति, (५०८) महाचार्यः महान आचार्य, (५०९) त्यागिवर्यः त्यागियों में श्रेष्ठ, हि ही, (५१०) अखण्डधीः अखण्ड-ब्रह्म-ज्ञान-सम्पन्न ॥१११॥

आशय अनुपाद - वे अपूर्व चरित्रयुक्त एक उच्च श्रेणी के मनुष्य थे तथा अखण्ड-ब्रह्मचर्य-परायण होने से ब्रह्मचारी, गृहस्थ आश्रम स्वीकार करने से गृही, अत्यन्त निर्जन स्थान में उपासना आदि का साधन करने से वानप्रस्थी तथा वैदिक संन्यास आश्रम ग्रहण करने से यथार्थ संन्यासी होने के कारण एक ही समय चतुराश्रमी थे। वे परमहंस भाव में आरूढ़ होकर सभी जगत के आध्यात्मिक प्रभु, महान आचार्य, श्रेष्ठ त्यागी तथा अखण्ड ज्ञान में प्रतिष्ठित थे ॥१११॥

अन्वय तथा शब्दार्थ –(५११) अनादि-निधनः जन्म-मृत्यु-रहित, (५१२) अनन्तः अन्तहीन, (५१३) अव्यक्तः अव्यक्त-स्वरूप, (५१४) अखिलहृदीश्वर सभी जीवों के हृदयेश्वर, (५१५) असिमबलशाली अपरिमित शक्तिमान, वै अवश्य ही, (५१६) गुणाढ्यः अनेक गुणयुक्त, च और, (५१७) गुणातिगः त्रिगुणातीत ॥११२॥

आशय अनुवाद—वे अपने आत्म-स्वरूप को यथार्थ रूप से जान गये थे, इस कारण जन्म और मृत्यु से रहित थे, अनन्त, अव्यक्त तथा सभी जीवों के हृदयेश्वर भी थे। योग की महान विभूतियों को प्राप्त करने के कारण वे

भूरिदाताखिलप्रेमी विश्वमैत्रीप्रसाधकः ।
मोक्षदो वरदो दिव्यः परमः पुरुषोत्तमः ॥११३॥
दान्तः स्वल्पाक्षरो ज्ञानी ज्ञानमूर्तिरुदारधीः ।
सर्वज्ञो ज्ञानसिन्धुश्च ज्ञेयो ज्ञानरविः सुधीः ॥११४॥

अपरिमित-शक्ति-सम्पन्न थे। सगुण ईश्वर के साथ अभिन्न रूप हो जाने से वे गुणमय तथा विशुद्ध ब्रह्मभाव प्राप्त होने से गुणातीत थे ॥११२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५१८) भूरिदाता प्रभुर दान देने वाले, (५१९) अखिलप्रेमी सभी जीवों से प्रेम रखने वाले, (५२०) विश्वमैत्रीप्रसाधकः विश्व के सभी प्राणियों में मित्रता साधन करने वाले, (५२१) मोक्षदः मोक्षदान करने वाले, (५२२) वरदः वर देने वाले, (५२३) दिव्यः दिव्यभाव-सम्पन्न, (५२४) परमः सब में श्रेष्ठ, (५२५) पुरुषोत्तमः पुरुषों में श्रेष्ठ ॥११३॥

आशय अनुवाद—वे ईश्वरीय ज्ञानभक्ति प्रचुर परिमाण में दान करने से दान-वीर, विश्व के सभी प्राणियों में मित्रता साधन करने वाले भी थे। वे उत्तम अधिकारी को आध्यात्मिक उन्नति रूप वर, यहाँ तक कि मोक्ष का भी दान देते थे। दिव्यभाव में अवस्थित, परमात्मा रूप में भावित तथा ईश्वरीय भाव में सुप्रतिष्ठित रहने के कारण वे उत्तम थे ॥११३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५२६) दान्तः दमगुणयुक्त, (५२७) स्वल्पाक्षरः अल्प-पठित, (५२८) ज्ञानी ज्ञानवान, (५२९) ज्ञानमूर्तिः मूर्तिमान ज्ञानस्वरूप, (५३०) उदारधीः उदार-बुद्धि-सम्पन्न, (५३१) सर्वज्ञः सर्वज्ञ, (५३२) ज्ञानसिन्धुः अध्यात्मज्ञान के समुद्रस्वरूप, च और, (५३३) ज्ञेयः ज्ञान के विषय, (५३४) ज्ञानरविः ज्ञान में सूर्यस्वरूप, (५३५) सुधीः उत्तमबुद्धिसम्पन्न ॥११४॥

आशय अनुवाद—वे पूर्णतया इन्द्रियों को संयत कर सके थे। अल्प-शिक्षित होने पर भी वे यथार्थ आत्मज्ञानी तथा उत्तम-बुद्धि-सम्पन्न, यहाँ तक कि

पूतदेहः पवित्राक्षो ह्यात्मज्ञानप्रजागरः ।
ज्ञानविज्ञाननिष्णातश्चाज्ञानमोहमुद्गरः ॥११५॥
ओंकारबीजरूपो वा ऐं-ह्रीं-बीजस्वरूपकः ।
सबीजवाङ्मयद्रष्टा मन्त्रचैतन्यकारकः ॥११६॥

मूर्तिमान ज्ञानस्वरूप थे। उनकी बुद्धि सब प्रकार के संकुचित भावों से मुक्त थी। सर्वज्ञ ईश्वर के साथ सदा युक्त रहने से वे सर्वज्ञ, अध्यात्मज्ञान के समुद्र, परमज्ञान के विषय तथा साधकों के हृदय-कमल को प्रफुल्लित करने योग्य ज्ञानसूर्यस्वरूप तथा उत्तम-बुद्धि-सम्पन्न थे ॥११४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ---(५३६) पूतदेहः पवित्र शरीर वाले, (५३७) पवित्राक्षः पवित्र नयन वाले, ही अवश्य ही, (५३८) आत्मज्ञानप्रजागरः आत्मज्ञान के दीपकस्वरूप, (५३९) ज्ञानविज्ञाननिष्णातः ज्ञान और विज्ञान में कुशल, च और, (५४०) अज्ञानमोहमुद्गरः अज्ञानरूप मोह का नाश करने वाले ज्ञनस्वरूप ॥११५॥

आशय अनुवाद—विशुद्ध-सत्त्वगुण के आधार होने से उनका शरीर और मुखमण्डलस्थ दोनों नेत्र पवित्रता-प्रकाशक थे। अनेक साधकों का अज्ञानान्धकार दूर करके आत्मज्ञान प्रदान की शकित रहने से वे आत्मज्ञान के दीपक स्वरूप थे। वे परोक्ष और अपरोक्ष ब्रह्मज्ञान लाभ का उपाय निश्चित रूप से बताते थे तथा स्वयं उस प्रकार के ज्ञान में दृढ़ प्रतिष्ठा लाभ करने में कुशल थे। वे अज्ञानियों के अज्ञानरूप मोह को दूर करने के लिए ज्ञान स्वरूप थे ॥११५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५४१) ओंकारबीजरूपः ओं बीज स्वरूप, वै निश्चित रूप से, (५४२) ऐं–ह्रीं-बीजस्वरूपकः ऐं तथा ह्रीं बीजस्वरूप, (५४३) सबीजवाङ्मयद्रष्टा बीजयुक्त मन्त्र दर्शन करने वाले, (५४४) मन्त्रचैतन्यकारकः मन्त्र की शक्ति प्रकाशित करने वाले ॥११६॥

मोहारिर्हृत्तमोहारी शोकतापनिवारण: ।
भुक्तिमुक्तिप्रदाता च रामो मानसरंजन: ॥११७॥
संकीर्तनाप्लुतात्मा वै संसृतिस्थितिविस्मृति: ।
कृष्णदृग् भक्तिमान् धीर: सिद्धकैवल्यनिर्वृति: ॥११८॥

आशय अनुवाद—सर्व-देव-देवीरूप से अनेक भावों के अनेक साधकों के ध्यान के विषय होने से वे ओं इस ब्रह्मबीज स्वरूप तथा ज्ञानभक्ति की अधिष्ठात्री देव-देवियों के बोधक ऐं—ह्रीं रूप बीज स्वरूप थे। विविध साधनाओं की दीक्षा लेकर उन-उन साधनाओं की सिद्धि प्राप्त करने के कारण मन्त्र के द्रष्टा रूप से अनेक ज्योतिर्मय बीजों के साथ संयुक्त तथा स्पष्ट अर्थप्रकाशक मन्त्राक्षरों का दर्शन करके उन्होंने उन-उन मन्त्रों की शक्ति को प्रकाशित किया था अर्थात् उन सिद्धमन्त्रों ने जीवित होकर उनकी कृपा पाने वाले साधकों को आत्मचैतन्य लाभ करने में समर्थ किया था ॥११६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५४५) मोहारि: मोह के शत्रु, ५४६) हृत्तमोहारी हृदय के अन्धकार को दूर करने वाले, (५४७) शोकतापनिवारण: शोक और ताप का निवारण करने वाले, (५४८) भुक्ति-मुक्तिप्रदाता भोग और मोक्ष देने वाले, च और, (५४९) राम: दशरथ-नन्दन रामचन्द्र के स्वरूप, (५५०) मानसरंजन: भक्तों के मन में आनन्द देने वाले ॥११७॥

आशय अनुवाद—वे यथार्थ सद्गुरु रूप से आश्रित भक्तों का मोहनाश, मन के अज्ञानान्धकार का विनाश, शोक-ताप निवारण तथा अधिकारी भेद से विभिन्न लोगों को भोग तथा मोक्ष प्रदान करते थे। अपने श्रीमुख की वाणी के अनुसार वे दशरथ-नन्दन राम बनकर भक्तों की अभिलाषा की पूर्ति तथा भक्तों का मनोरंजन किया था ॥११७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५५१) संकीर्तनाप्लुतात्मा संकीर्तन करने में आप्लुतभावापन्न, वै अवश्य ही, (५५२) संसृतिस्थितिविस्मृति: संसार के अस्तित्व

ज्ञानोद्भासिततुण्डश्रीः सर्वग्रन्थिविदारणः ।
कृपाकटाक्षसंवर्षी संशयपुञ्जपाटनः ॥११९॥
निराकारोऽथ साकारो लीलाविग्रहधारणः ।
मानमेयस्वरूपश्चाद्वयः केवलचेतनः ॥१२०॥

को भूल जाने वाले, (५५३) कृष्णदृक् श्रीकृष्ण के दर्शन करने वाले, (५५४) भक्तिमान् भक्तिमान, (५५५) धीरः धीर, (५५६) सिद्धकैवल्यनिर्वृतिः कैवल्यरूप परम-शान्ति-लाभ करने वाले ॥२१८॥

आशय अनुवाद—भगवान के संकीर्तन में उनका हृदय आप्लुत होता था, किसी-किसी समय लगातार छः मास तक रसघन प्रेममय श्रीकृष्ण का दर्शन लाभ करके धन्य होकर वे पूर्णतया संसार का अस्तित्व भूल गये थे। वे श्रीभगवान में परम अनुराग सम्पन्न, मन के अन्तर्मुख होने में सब प्रकार के सांसारिक द्वन्द्वों से अभिभूत न होकर परम धैर्य के प्रभाव से कैवल्य रूप परमशान्ति प्राप्त हो सके थे ॥११८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५५७) ज्ञानोद्भासिततुण्डश्रीः ज्ञानप्रयुक्त उज्ज्वल मुखमण्डल वाले, (५५८) सर्वग्रन्थिविदारणः मन की अज्ञान-ग्रन्थियों को खोलने वाले, (५५९) कृपाकटाक्षसंवर्षी करुणा की दृष्टि डालने वाले, (५६०) संशयपुञ्जपाटनः सभी सन्देहों को दूर करने वाले ॥११९॥

आशय अनुवाद—उनका मुखमण्डल दिव्यज्ञान से सदा उज्ज्वल रहता था, वे शरणागत भक्तों के प्रति करुणा की दृष्टि डालकर उनके सन्देहों को दूर करके मन की वासनाग्रन्थियों का निरसन करते थे ॥११९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५६१) निराकारः आकाररहित, अथ अनन्तर, (५६२) साकारः आकारयुक्त, (५६३) लीलाविग्रहधारणः लीलामयमूर्ति धारण करने वाले (५६४) मानमेयस्वरूपः प्रमाण और प्रमेयस्वरूप, (५६५) अद्वयः अद्वितीय, च तथा, (५६६) केवलचेतनः शुद्ध चेतनस्वरूप ॥१२०॥

निर्मोहो निर्मलो जुष्टो बुद्धो मुक्तो महेश्वरः ।
प्रेमामृताकरः पूर्णोऽखिलपातकितारणः ॥१२१॥
प्रेमाब्धिः प्रेमवाही च प्रमूर्तप्रेमविग्रहः ।
प्रेमलीलाप्रकाशी च प्रेमरोमाञ्चितान्तरः ॥१२२॥

आशय अनुवाद—इस संसार में अवतीर्ण होने के पहले वे निराकार परमात्मा के साथ अभिन्न भाव से मिलित थे, उसके अनन्तर उन्होंने युग के प्रयोजन से जीवों के कल्याण के लिए लीलामय शरीर धारण करके साकार मूर्ति में आविर्भूत हुए थे। यथार्थ में वे अद्वितीय विशुद्ध चेतन सत्ता में परमात्मा के साथ अभिन्न थे। इस कारण वे शास्त्र-प्रमाण-प्रतिपादित प्रमेय शुद्ध-ब्रह्मस्वरूप थे ॥१२०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५६७) निर्मोहः मोहरहित, (५६८) निर्मलः मलिनतारहित, (५६९) जुष्टः सेवित, (५७०) बुद्धः प्रबुद्ध, (५७१) मुक्तः मुक्त, (५७२) महेश्वरः महान ईश्वर रूप, (५७३) प्रेमामृताकरः प्रेमामृत के आकर (५७४) पूर्णः पूर्ण, (५७५) अखिलपातकितारणः सभी पापियों का उद्धार करने वाले ॥१२१॥

आशय अनुवाद—वे मोहरहित, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, पूर्णस्वभाव वाले तथा महेश्वर स्वरूप थे। वे प्रेमरूप अमृत के आकर तथा पापियों, पतिताओं के उद्धार-कर्ता थे, इस कारण अनेक भक्तों के द्वारा वे भक्ति के साथ सेवित थे ॥१२१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५७६) प्रेमाब्धिः प्रेमसागर-तुल्य, (५७७) प्रेमवाही प्रेम का प्रवाहयुक्त, च और, (५७८) प्रमूर्तप्रेमविग्रहः मूर्तिमान-प्रेमस्वरूप, (५७९) प्रेमलीलाप्रकाशी प्रेमलीला के प्रकाशक, च और, (५८०) प्रेमरोमाञ्चितान्तरः प्रेम के कारण पुलकित हृदययुक्त ॥१२२॥

जगत्पिता जगन्माता जगन्नाथो जनार्दनः ।
जगन्निवास आसीनः सर्वभूतलयस्थितिः ॥१२३॥
प्राणेशः प्राणकान्तश्च प्राणारामः परावरः ।
प्राणदः प्राणगोपालः प्राणश्रीश्च परात्परः ॥१२४॥

आशय अनुवाद—साधन के अन्त में श्रीश्रीजगन्माता के आदेश से संसार के कल्याण के लिए भावमय अवस्था में रहकर वे प्रेमपुलकितहृदय से व्यक्तप्रेमविग्रह धारण करके विश्व के सभी नर-नारियों के लिए प्रेमसमुद्र हुए थे तथा प्रेम का प्रवाह फैलाने के लिए उन्होंने प्रेमलीला प्रगट की थी ॥१२२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५८१) जगत्पिता संसार के पिता, (५८२) जगन्माता जगत् की जननी, (५८३) जगन्नाथः जगत् के प्रभु, (५८४) जनार्दनः जनगण जा दुःख दूर करने वाले, (५८५) जगन्निवास जगत् के अधिष्ठान-स्वरूप, (५८६) आसीनः स्थिर भाव से अवस्थित, (५८७) सर्वभूतलयस्थितिः सभी ब्रह्माण्डों के प्रलय हो जाने पर भी अवस्थित ॥१२३॥

आशय अनुवाद—सर्वशक्तिमान परमेश्वर के साथ सायुज्य-अनुभूति-सम्पन्न होने से वे संसार के पिता, माता, प्रभु, शासक तथा आश्रय-स्वरूप थे और कूटस्थ ब्रह्म के साथ अपनी एकता का अनुभव करने के कारण वे सभी देशों तथा सभी कालों में एक ही रूप में अवस्थित रहकर मायामय संसार के आधार रूप थे ॥१२३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(५८८) प्राणेशः भक्तों के प्राणेश्वर, (५८९) प्राणकान्तः प्राण के प्रभु, च और, (५९०) प्राणारामः प्राणों को आनन्द देने वाले, (५९१) परावरः सृष्टिकर्ता ब्रह्मा भी जिनके सामने निकृष्ट हो जाते हैं अर्थात् ब्रह्मस्वरूप, (५९२) प्राणदः प्राणदाता, (५९३) प्रणगोपालः

प्रेमदाता परप्रेमी प्रेमगद्गदभाषणः ।
परप्रेमा प्रेमघनः प्रेमाकुलितवीक्षणः ॥१२५॥
पाशमुक्तो विमानोऽसौ प्रकटक्लेशनाशनः ।
पुराणपुरुषोऽनादिरवतारी कृतार्चनः ॥१२६॥

प्राणगोपालरूप, (५६४) प्राणश्रीः प्राणधनस्वरूप, च और, (५६५) परात्परः सर्वोत्कृष्ट ब्रह्मस्वरूप ॥१२४॥

आशय अनुवाद—जिन साधकों ने उन्हें परम श्रद्धा के साथ महागुरु तथा इष्टदेव के रूप में ग्रहण किया था, उनके वे प्राणेश्वर, प्राणकान्त, प्राणाराम, प्राणदाता, प्राणगोपाल, प्राणधन तथा जगदतीत और जगद्-भावापन्न परब्रह्मस्वरूप थे ॥१२४॥

अन्यव तथा शब्दार्थ—(५६६) प्रेमदाता प्रेम देने वाले, (५६७) परप्रेमी परमप्रेमिक, (५६८) प्रेमदग्गद्भाषणः भगवान के प्रेम में गदगद स्वर से बात बोलने वाले, (५६९) परप्रेमा परमेश्वर के प्रेम में मग्न, (६००) प्रेमघनः घनीभूत प्रेमस्वरूप, (६०१) प्रेमाकुलितवीक्षणः प्रेम के कारण व्याकुल-दृष्टि-सम्पन्न ॥१२५॥

आशय अनुवाद—आश्रित साधकों को वे ईश्वर में परम अनुराग रूप प्रेम का दान करते थे। वे स्वयं परमप्रेमिक तथा प्रेम से विह्वल होकर गदगद भाषण करते थे। ईश्वर पर परम-प्रेम-सम्पन्न होने से उनकी दृष्टि में प्रेम की आकुलता प्रगट होती थी और वे मानो घनीभूत-प्रेमस्वरूप ही थे ॥१२५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—असौ वे, (६०२) पाशमुक्तः बन्धन से मुक्त, (६०३) विमानः अहंकाररहित, (६०४) प्रकटक्लेशनाशनः भक्तों के प्रकट क्लेश का निवारक, (६०५) पुराणपुरुषः अनादि पुरुष, (६०६) अनादिः जन्मरहित,

प्राच्यपाश्चात्यदेशस्थप्रकृष्टिसुसन्वयी ।
विश्वसंस्कृतिमालिन्यापसारकजनाग्रणी: ॥१२७॥

---

(६०७) अवतारी अवतारों के कारणस्वरूप, (६०८) कृतार्चनः भक्तों के द्वारा पूजित ॥१२६॥

आशय अनुवाद– वे ८ पाशों से मुक्त तथा अहंकार-रहित थे । परम-भक्तवत्सल होने से वे त्रिताप-क्लिष्ट भक्तों की तीव्र संसार ज्वाला को दूर करते थे । यथार्थ में ही वे जन्मरहित, अनादिपुरुष तथा अवतारों के एकमात्र कारण ब्रह्मस्वरूप होने से भक्तपार्षदों के द्वारा भक्ति के साथ पूजित हुए थे ॥१२६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६०९) प्राच्यपाश्चात्यदेशस्थ-प्रकृष्टि-सुसमन्वयी प्राच्य और पाश्चात्य देशों में उत्पन्न विभिन्न धर्माचरणों का समन्वय करने वाले, (६१०) विश्वसंस्कृतिमालिन्यापसारकजनाग्रणी: विश्व की संस्कृति की मलिनता दूर करने वालों में श्रेष्ठ ॥१२७॥

आशय अनुवाद—उन्होंने अपने उदार जीवन के द्वारा प्राच्य और पाश्चात्य देशों के आचार-विचारों को यथार्थ मर्यादा देकर दोनों भू-खण्डों के धर्मादर्श का सामंजस्य दिखाकर विभिन्न प्रथाओं का पूर्ण समन्वय किया था ।

संयम, पवित्रता और हार्दिकता ही धार्मिक जीवन लाभ करने का एकमात्र उपाय है, इस सत्य को अपने जीवन में विशेष रूप से आचरण के द्वारा प्रमाणित करके उन्होंने विभिन्न धर्मों के साधन-मार्गों को सुगम तथा मलिनता से मुक्त किया था । फलस्वरूप वे विश्व की संस्कृति के क्षेत्र में नया दिग्दर्शन करके सभी धर्मों की मलिनता दूर करने में सबसे अग्रगामी साधक थे ॥१२७॥

प्राणसखो महाप्राणो दीननाथो दयाघनः ।
एषणात्रयनिर्मुक्तो नारायणांशसम्भवः ॥१२८॥

स्वभूः शम्भुः स्वयम्भूश्च विरूपाक्षो विलोचनः ।
परमेशो महादेवो देवदेवस्तपोधनः ॥१२९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६११) प्राणसखः हृदय के मित्र, (६१२) महाप्राणः उदारहृदय, (६१३) दीननाथः दरिद्रों के प्रभु, (६१४) दयाघनः परम दयालु, (६१५) एषणात्रयनिर्मुक्तः तीन प्रकार की एषणाओं से मुक्त, (६१६) नारायणांशसम्भवः नारायण के अंश से उत्पन्न ॥१२८॥

आशय अनुवाद—वे हृदय के मित्र, भगवद्-विश्वासियों के हार्दिक मित्र, परम दयालु तथा दीन-दरिद्रों के आश्रयस्थल थे। अपने मुख की वाणी ज्योतिषशास्त्रवित् तथा अनुभूतिमान शास्त्रज्ञ विचारक पण्डितमण्डली के मतानुसार नारायण के अंश से उत्पन्न तथा पुत्र, वित्त और यश की त्रिविध वासनाओं से वे आजन्म मुक्त थे ॥१२८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६१७) स्वभूः विष्णु के स्वरूप, (६१८) शम्भुः शिवस्वरूप, च तथा (६१९) स्वयम्भूः ब्रह्मास्वरूप. (६२०) विरूपाक्षः रूप, नेत्र आदि रहित ब्रह्मस्वरूप, (६२१) विलोचनः लोचनरहित, शिवस्वरूप, (६२२) परमेशः परमेश्वरस्वरूप, (६२३) महादेवः महादेवरूपी शिवस्वरूप, (६२४) देवदेवः देवाधिदेव शिवस्वरूप, (६२५) तपोधनः महान् तपस्वी ॥१२९॥

आशय अनुवाद – सृष्टि, स्थिति, लय करने वाले सगुण ईश्वर के साथ एकत्व-बोध होने से वे एकाधार में ब्रह्मा, विष्णु और शिव के स्वरूप थे। दक्षिणेश्वर में कठोर तपस्यामग्न होकर महातपस्वी रूप से तथा काशीक्षेत्र में विश्वनाथ-दर्शन के लिए जाते समय गंगावक्ष पर विचित्र रूपगुणभावरूपी विरूपाक्ष, विलोचन, परमेश, महादेव, देवदेब आदि नामधारी शिव का उन्होंने

कल्याणकृत् सुकर्माथो युगावतार एव च ।
रामकृष्णोभयात्मा वै कुलधर्मप्रबोधकः ॥१३०॥
समस्तशास्त्रतत्त्वज्ञो ब्रह्मविष्णुहरातिगः ।
कूटस्थो ब्रह्मरूपस्तु द्विजचण्डालसम्यदृक् ॥१३१॥

दर्शन किया था। पूर्ववर्णित शिव के साथ समाधि-योग से अपने स्वरूप्य का सम्यक् अनुभव करके वे उन उन नामों के ग्रहण में उपयुक्त हुए थे ॥१२६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६२६) कल्याणकृत् कल्याणकारी, अथो अनन्तर, (६२७) सुकर्मा निपुणभाव से कर्म सम्पन्न करने वाले, (६२८) युगावतारः युगावतार, एव ही, च तथा, (६२९) रामकृष्णोभयात्मा राम और कृष्ण उभयस्वरूप, वै अवश्य ही, (६३०) कुलधर्मप्रबोधकः तान्त्रिक कौलधर्म के उद्बोधक ॥१३०॥

आशय अनुवाद—ईश्वरार्पण-बुद्धि से सभी धर्मों का निपुण-भाव से आचरण करके सभी धर्मकार्यों को मर्यादा देकर वे राम और कृष्ण दोनों के स्वरूप तथा युगावतार रूप से सदा जीवकल्याण-कार्य से निरत थे तथा विशुद्ध तान्त्रिक कौलधर्म का पुनरुज्जीवन कर सके थे ॥१३०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६३१) समस्तशास्त्रतत्त्वज्ञः सब शास्त्रों के तत्त्वज्ञ, (६३२) ब्रह्मविष्णुहरातिगः ब्रह्मा, विष्णु और महेश को भी अतिक्रमण करने वाले, (६३३) कूटस्थः निर्विकार रूप में अवस्थित, (६३४) ब्रह्मरूपः ब्रह्मस्वरूप, तु भी, (६३५) द्विजचण्डालसाम्यदृक् ब्राह्मण और चण्डाल में समानता देखने वाले ॥१३१॥

आशय अनुवाद—राम और कृष्ण अवतारों के वे युग्म-विकास-स्वरूप थे, इस कारण वे मर्यादा और लीला के पुरुषोत्तम रूप में समस्त शास्त्रों के मर्म को धर्माचरण द्वारा अपने जीवन में उद्घाटित करके अवश्य ही शर्वशास्त्र-तत्त्वज्ञ हुए थे। निर्विकार ब्रह्म की अपरोक्ष अनुभूति प्राप्त करके मानो

बोधसाक्षी विशुद्धात्मा विश्वज्योतिरुदारधीः ।
बाह्यसंवेदनाशून्यो ब्रह्मशक्त्यैक्यभावनः ॥१३२॥
बोधेच्छाकर्मशक्तिश्च योगभक्तिपरायणः ।
अवतारवरिष्ठोऽपि विक्रान्तो देशिकोत्तमः ॥१३३॥

वे ब्रह्मा, विष्णु और शिव का भी दिव्य अनुभूति के क्षेत्र में अतिक्रम कर सके थे। सभी में निर्विकार ब्रह्मसत्ता ही अनुस्यूत है, ऐसा अनुभव करके वे विद्वान् ब्राह्मण तथा अधम चण्डाल में समदर्शी हुए थे ॥१३१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६३६) बोधसाक्षी आत्मज्ञान के साक्षी स्वरूप, (६३७) विशुद्धात्मा विशुद्ध स्वभाव वाले, (३३८) विश्वज्योतिः विश्व के प्रकाशक, (६३९) उदारधीः उदार बुद्धि सम्पन्न, (६४०) बाह्यसंवेदनाशून्यः बाह्यज्ञानरहित, (६४१) ब्रह्मशक्त्यैक्यभावनः ब्रह्म और ब्रह्म शक्ति में अभेद और ज्ञान-युक्त ॥१३२॥

आशय अनुवाद—वे महान सिद्धि प्राप्त होने के कारण आत्मज्ञान के साक्षी रूप से सदा अवस्थित रहते थे। उनका अन्तःकरण अत्यन्त पवित्र था तथा विश्व के अज्ञानान्धकार दूर करने के लिए वे ज्ञानप्रद ज्योतिस्वरूप थे। सभी प्रकार की अनुदारता से मुक्त रहने के कारण उनकी बुद्धि अत्यन्त उदार भाव की थी। बार-बार भावसमाधि में निमग्न होकर वे अधिकांश समय बाहरी विषयों की अनुभूति से मुक्त हो जाते थे। यथार्थ अध्यात्म-विज्ञानी होने के कारण वे ब्रह्म और शक्ति में अभेद-दृष्टि-सम्पन्न थे ॥१३२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६४२) बोधेच्छाकर्मशक्तिः ज्ञान, इच्छा तथा क्रियाशक्ति सम्पन्न, च तथा, (६४३) योगभक्तिपरायणः निष्काम कर्मपरायण तथा भक्तिपरायण, (६४४) अवतारवरिष्ठः अवतारों में श्रेष्ठ; (६४५) विक्रान्तः विक्रमशाली, अपि और, (६४६) देशिकोत्तमः आचार्य-वरिष्ठ ॥५३३॥

पूर्णयोगरहस्यज्ञो योगदाता महायमी ।
युगदेवो युगादर्शो विश्ववर्णाश्रमाश्रयः ॥१३४॥
स्थितप्रज्ञो महाप्राज्ञः सदाप्रज्ञालयस्थितः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिसंज्ञितः ॥१३५॥

आशय अनुवाद—वे परमज्ञान, इच्छा तथा क्रियाशक्ति से सम्पन्न थे । निष्काम कर्म तथा श्रेष्ठभक्तिसम्पन्न थे, अध्यात्मसाधना और लौकिक व्यापार में वे सिंह के समान विक्रमशाली थे। पूर्व-पूर्व अवतारों के दिव्यभाव और शक्ति उनके भीतर पूंजीभूत तथा मूर्त होने के कारण स्वामी विवेकानन्द उन्हें 'अवतार-वरिष्ठ' कह गये हैं। सभी प्रकार के धर्म तथा अध्यात्म भाव की साधना करके पूर्ण सिद्धि सम्पन्न होने से वे सभी स्तरों के धर्मपिपासु साधकों के उत्तम पथ-प्रदर्शक थे, इस कारण वे आचार्यवरिष्ठ तथा देशिकोत्तम की पदवी पर आरूढ़ हुए थे ॥१३३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६४७) पूर्णयोगरहस्यज्ञः योग के पूर्ण रहस्य जानने वाले, (६४८) योगदाता योग-साधन प्रदानकारी गुरु, (६४९) महायमी महान संयमी, (६५०) युगदेवः युगदेवतास्वरूप, (६५१) युगादर्शः युगादर्शस्वरूप, (६५२) विश्ववर्णाश्रमाश्रयः विश्व के सारे वर्णों और आश्रमों के आश्रय-स्वरूप ॥१३४॥

आशय अनुवाद—श्रीमद्भगवद्गीता में लिखित सब प्रकार के योगों में पारंगत होने के कारण वे योग के पूर्ण रहस्य जानते थे और अधिकारी-भेद से साधकों को उपयोगी योगमार्ग का यथार्थ निर्देश देते थे। योग में पूर्ण सिद्धि प्रयुक्त वे महान् संयमी, युगदेवता और युगादर्श-स्वरूप थे। सभी वर्णों और आश्रमों को उत्तम मर्यादा देकर उन्हों ने यथार्थ ही वर्णों और आश्रमों की रक्षा की थी ॥१३४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६५३) स्थितप्रज्ञः स्थितप्रज्ञ, (६५४) महाप्राज्ञः महान् बुद्धिमान्, (६५५) सदाप्रज्ञालयस्थितः प्रज्ञा रूप आलय में सदा अवस्थित

अनासक्तोऽनिकेतस्तु स्तुतिनिन्दाविवर्जितः ।
आत्मतुष्टोऽनहंवादी त्यक्ताखिलशुभाशुभः ॥१३६॥
ईशार्पितमनोबुद्धिर्योगमायासमावृतः ।
शुभनामा शुभागारः शुभाशीः शुभदर्शनः ॥१३७॥

रहने वाले, (६५६) वीतरागभयक्रोधः आसवित, मय और क्रोध से रहित, (६५७) स्थितधीः स्थिर बुद्धि वाले, (६५८) मुनिसंज्ञितः तथा मुनिसंज्ञा प्राप्त ॥१३५॥

आशय अनुवाद—वे व्यष्टि-कारण-शरीराभिमानी चैतन्य रूप से अलौकिक प्रज्ञारूप ज्ञान-सम्पन्न तथा सदा प्रज्ञारूप आलय में अवस्थित होकर भगवान श्रीकृष्ण के द्वारा वर्णित आसक्ति, भय और क्रोध से मुक्त रहकर स्थितधी और स्थितप्रज्ञ अवस्था में आरूढ़ होकर यथार्थ में ही मुनिसंज्ञा प्राप्त हुए थे ॥१३५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६५९) अनासक्तः आसक्तिशून्य, (६६०) अनिकेतः गृहशून्य, तु किन्तु, (६६१) स्तुतिनिन्दाविवर्जितः स्तुति और निन्दा की उपेक्षा करने वाले, (६६२) आत्मतुष्टः आत्मा में परितुष्ट, (६६३) अनहंवादी अहंकार-शून्य, (६६४) त्यक्ताखिलशुभाशुभः सभी प्रकार के शुभ और अशुभ के बोध-रहित ॥१३६॥

आशय अनुवाद—वे शरीर में 'अहं, मम' रूप अभिमान से रहित होकर पूर्णतया आसक्ति-रहित, गृह में निवास करते हुए भी गृहरहित, स्तुति और निन्दा की उपेक्षा करने वाले, आत्मा में परितुष्ट तथा सभी प्रकार के शुभ और अशुभ के ज्ञान से रहित हो गये थे ॥१३६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६६५) ईशार्पितमनोबुद्धिः ईश्वर में मन और बुद्धि समर्पण करने वाले, (६६६) योगमायासमावृतः योगमाया के द्वारा आवृतस्वरूप, (६६७) शुभनामा मंगलमय नाम धारण करने वाले, (६६८)

निगीर्णाहंममज्ञानो द्वेषहीनो गतव्यथः ।
समद्रष्टा क्षमावांश्चानपेक्षो विश्वनायकः ॥१३८॥

शुभागारः मंगल के आधार, (६६९) शुभाशीः शुभ आशर्वाद देने वाले, (६७०) शुभदर्शनः दर्शन से मंगलदायक ॥१३७॥

आशय अनुवाद—स्वयं भगवान होकर भी वे योगमाया का आश्रय करके अपना स्वरूप आवृत कर जीवशिक्षा के लिए साधक के वेश में ईश्वर पर पूर्णतया मन और बुद्धि अर्पित कर सके थे और मंगलदायक नामधारी होकर (क्योंकि उन्होंने स्वयं ही कहा था कि जो कोई उनका नाम लेगा और उनकी मूर्ति का स्मरण करेगा, अन्तिम समय उसे वे दर्शन देकर उद्धार करेंगे, इस कारण) वे समस्त मंगल के आधारस्वरूप, सदा अमोघ शुभाशीर्वाद देने में निपुण तथा मुक्ति-प्रद निजपुण्य-दर्शन द्वारा लोगों के लिए यथार्थ मंगलकारी थे ॥१३७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६७१) निगीर्णाहंममज्ञानः शरीर में अहं और मम ज्ञान परित्याग करने वाले, (६७२) द्वेषहीनः विद्वेषरहित, (६७३) गतव्यथः वेदनाशून्य, (६७४) समद्रष्टा समदर्शी, (६७५) क्षमावान् क्षमा करने वाले, (६७६) अनपेक्षः निरपेक्ष, च और, (६७७) विश्वनायकः विश्व के नायक ॥१३८॥

आशय अनुवाद—मायातीत होने के कारण अपने शरीर में 'अहं, मम' ज्ञान अर्थात् 'मैं' और 'मेरा' बोध उनमें नहीं था और किसी वस्तु या व्यक्ति के प्रति उनमें विद्वेष भी नहीं था। कभी-कभी देहज्ञान-रहित होने से वे शरीर और मन में किसी प्रकार की वेदना का अनुभव नहीं करते थे। सर्वत्र आत्मदर्शन करके वे समदर्शी हो गये थे। वे निरपेक्ष भाव से दुष्कृतकारियों के प्रति सदा क्षमाशील थे और जगद्गुरु के रूप में अध्यात्मज्ञान वितरण के क्षेत्र में वे समस्त विश्व के नायकस्वरूप थे ॥१३८॥

पीयूष-रसपाथोधिः कथामृतप्रवर्षणः ।
अस्पष्टमधुरालापो ग्राम्यभावप्रदर्शकः ॥१३९॥
सर्वज्ञाता त्वविज्ञातो विश्वयोनिः स्वयंजनुः ।
सर्वेश्वरः स्वतन्त्रश्चैकरूपोऽनेकरूपकः ॥१४०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६७८) पीयूषरसपाथोधिः अमृत रस के समुद्र-स्वरूप, (६७९) कथामृतप्रवर्षणः कथामृत के वर्षण करने वाले, (६८०) अस्पष्ट मधुरालापः अस्पष्ट मधुर आलाप करने वाले, (६८१) ग्राम्यभावप्रदर्शकः ग्रामीण भाव प्रदर्शित करने वाले ॥१३९॥

आशय अनुवाद—अमृतरसमय भगवान की स्वरूपप्राप्ति के कारण वे अमृत रस का समुद्र बनकर समागत भक्तों के प्रति अतुलनीय वाक्य-सुधा का प्रदान करते थे। अधिकांश समय जगदतीत भावावेश में अवस्थित रहने के कारण उनकी वाचनभंगी कुछ अस्पष्ट तथा जड़तायुक्त होने पर भी विशेष माधुर्यपूर्ण थी। वे कभी-कभी बातचीत और भावभंगी से निष्कपट ग्राम्य भाव प्रदर्शित करके अन्तरंग पार्षदों तथा भक्तों का आनन्द-वर्धन करते थे ॥१३९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६८२) सर्वज्ञाता सर्वज्ञ, तु किन्तु, (६८३) अविज्ञातः अविज्ञेय स्वरूप, (६८४) विश्वयोनिः विश्व की उत्पत्ति के कारण, (६८५) स्वयंजनुः स्वेच्छा से जन्मपरिग्रह करने वाले, (६८६) सर्वेश्वरः सब के ईश्वर, (६८७) स्वतन्त्रः स्वाधीन, (६८८) एकरूपः सदा एक ही रूप में स्थित, च और, (६८९) अनेकरूपकः अनेक रूप धारण करने वाले ॥१४०॥

आशय अनुवाद—सर्वशक्तिमान ईश्वर के साथ सायुज्यज्ञान होने से वे सर्वज्ञ, किन्तु अपने स्वरूप में अज्ञेय थे। समस्त विश्व की उत्पत्ति के कारण, स्वेच्छा से देह-धारण करने वाले, सभी के नियामक प्रभु, स्वाधीन, स्वरूपतः एकरूप और लीला में विचित्र भावरूपधारी थे ॥१४०॥

सत्कर्मलीलाप्रकटः सुदृष्टिः सुदृष्टिदः संसृतिपाशनाशी ।
श्रद्धानिवासः सुमनोविलासः कन्दर्पहृत् कामकलाविलोपी ॥१४५॥
भक्तेश्वरो भक्तवरस्तपस्वी भक्तिप्रकाशः प्रियभक्तिभावः ।
भक्तप्रियो भक्तवृतस्तमोहा भक्तावतारो भवकर्णधारः ॥१४६॥

ब्रह्मा आदि देवताओं के आश्रय तथा अर्चना के योग्य, ब्रह्मा आदि देवताओं की धारणा से अतीत प्रतिभासम्पन्न, ब्रह्म में आत्मसमर्पण करने वाले, ब्रह्म में लीन चित्तवृत्त-सम्पन्न थे ॥१४४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७१६) सत्कर्मलीलाप्रकटः सत्कर्म रूप लीला के लिए प्रकट, (७१७) सुदृष्टिः सुप्रसन्नदृष्टिसम्पन्न, (७१८) सुदृष्टिदः पवित्र दृष्टि प्रदान करने वाले, (७१९) संसृतिपाशनाशी संसार-बन्धन छिन्न करने वाले, (७२०) श्रद्धानिवासः श्रद्धापूर्ण हृदयों में निवास करने वाले, (७२१) सुमनोविलासः पवित्र अन्तःकरणों में विलास करने वाले, (७२२) कन्दर्पहृत् कामदेव का दर्प चूर्ण करने वाले, (७२३) कामकलाविलोपी काम-कला का विलोप करने वाले ॥१४५॥

आशय अनुवाद—नवयुग-भावचक्र के प्रवर्तन के उपाय रूप आध्यात्मिक तथा लौकिक विविध प्रकार के सत्कर्मरूप लीलाओं के साधन के मध्यम से उन्होंने अपने को प्रगट किया था। उनकी दृष्टि स्वच्छ और सुप्रसन्न थी और उनके प्रति निर्भरशील भक्तों को वे सर्वत्र पवित्र भाव के दर्शन का सामर्थ्यदान करते थे। जगद्गुरु के रूप से वे इच्छामात्र से ही किसी भी व्यक्ति का संसार-बन्धन छिन्न करने में समर्थ थे। सूक्ष्मशरीर से वे श्रद्धावान व्यक्तियों के हृदय में निवास करते थे, पवित्रचित्त व्यक्तियों के हृदय में विलास तथा उनका अनुध्यान करने वाले मुमुक्षुओं के काम का दर्प चूर्ण करने वाले तथा कास-कला का विलोप करने वाले थे ॥१४५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७२४) भक्तेश्वरः भक्तों के राजा, (७२५) भक्तवरः भक्तश्रेष्ठ, (७२६) तपस्वी तपस्वी, (७२७) भक्तिप्रकाशः भक्ति से

भक्तिप्रभो भक्तगणादृतो वै सुग्रन्थदीपो यमभीतिहारी ।
सुव्यक्तवक्षःस्थितहारतुल्यो भ्रमप्रमादाकलितो मदारिः ॥१४७॥

प्रकाशित, (७२८) प्रियभक्तिभावः भक्तिप्रिय, (७२९) भक्तप्रियः भक्तों के प्रिय, (७३०) भक्तवृतः भक्तों के द्वारा परिवेष्टित, (७३१) तमोहा अज्ञानरूप अन्धकार दूर करने वाले, (७३२) भक्तावतारः भक्तरूप से अवतार धारण करने वाले, (७३३) भवकर्णधारः संसार-समुद्र के कर्णधार स्वरूप ॥१४६॥

आशय अनुवाद—भक्तश्रेष्ठ होने से वे भक्तों के राजा थे, वे कहते थे—कलियुग में नारदीया भक्ति श्रेष्ठ है, इस कारण भक्तिभाव उनका अतिप्रिय था। इस कारण वे स्वयं विशेष रूप से भक्तिभाव का आचरण करते थे, फलस्वरूप भक्तों के प्रिय होने से वे अधिकांश समय भक्तों के द्वारा परिवेष्टित रहा करते थे। वर्तमान युग में वे तपस्या-परायण तथा भक्तवेशधारी अवतार रूप से अवतीर्ण होकर साधुभक्तों के मन का अज्ञानान्धकार दूर करके उनके संसार-समुद्र पार होने के कर्णधारस्वरूप थे ॥१४६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७३४) भक्तिप्रभः भक्तिरूप प्रभायुक्त, (७३५) भक्तगणादृतः भक्तों के द्वारा आदर प्राप्त, वै अवश्य ही, (७३६) सुग्रन्थदीपः सद्ग्रन्थों के दीपकस्वरूप, (७३७) यमभीतिहारी यम-भय के निवारक, (७३८) सुव्यक्तवक्षःस्थितहारतुल्यः वक्षस्थल में सुप्रकाशित हार की तरह शोभामय, (७३९) भ्रमप्रमादाकलितः भ्रम और प्रमाद के द्वारा अभिभूत न होने वाले, (७४०) मदारिः अहंकार के विनाशक ॥१४७॥

आशय अनुवाद—भक्तिरूप प्रभा से मण्डित होने के कारण वे भक्तों के आदर के व्यक्ति थे। सद्ग्रन्थ आदि के गूढ़ अर्थ प्रकाशक प्रदीप-स्वरूप, मृत्युभय-निवारक, भ्रम प्रमादादि के द्वारा अभिभूत न होने वाले, अहंकाररूप अन्तःशत्रु के विनाशक तथा रूपवान व्यक्ति के विशाल वक्षःशोभी हार के समान शोभाशाली थे ॥१४७॥

अनन्तभावो जितशास्त्रसारो दाक्षिण्यदायी कलिदोषनाशी ।
असीमरूपः समतानिदानं दिव्याकृतिर्दिव्यमुखप्रकाशी ॥१४८॥
सर्वात्मकः सर्वसुलक्षणांगो निष्कामकर्मप्रकटः परेशः ।
सुधामयः स्निग्धरसार्द्रभावः सर्वंसहः सर्वघटाधिरूढः ॥१४९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७४१) अनन्तभावः अनन्तभावमय, (७४२) जितशास्त्रसारः शास्त्रों के सार पर विजय प्राप्त करने वाले, (७४३) दाक्षिण्यदायी दया प्रदर्शनकारी, (७४४) कलिदोषनाशी कलि के पाप दोष के नाशक, (७४५) असीमरूपः अनन्त रूपवान, (७४६) समतानिदानम् समता विधान करने वाले, (७४७) दिव्याकृतिः दिव्य आकृतियुक्त, (७४८) दिव्यमुखप्रकाशी दिव्यभाव व्यंजक मुखमण्डल के द्वारा शोभायमान ॥१४८॥

आशय अनुवाद—वे अनन्तभावमय, शास्त्रों के सार पर विजय प्राप्त करने वाले, दया प्रदर्शनकारी, कलि के पाप दोष के नाशक, अनन्त रूपवान, समता विधान करने वाले, दिव्यआकृतियुक्त, दिव्यभाव व्यंजक मुखमण्डल के द्वारा शोभायमान थे ॥१४८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ (७४९) सर्वात्मकः सर्वस्वरूप, (७५०) सर्वसुलक्षणांगः सभी प्रकार के उत्तम लक्षणयुक्त अंग सम्पन्न, (७५१) निष्कामकर्मप्रकटः निष्काम कर्म चे द्वारा आत्मप्रकाश करने वाले, (७५२) परेशः प्ररमेश्वरस्वरूप, (७५३) सुधामयः अमृतमय, (७५४) स्निग्धरसार्द्रभावः स्नेहरूप रस के द्वारा विगलित, (७५५) सर्वंसहः सभी द्वन्द्वों के सहन करने वाले, (७५६) सर्वघटाधिरूढः सभी नाशवान शरीरों में प्रतिष्ठित ॥१४९॥

आशय अनुवाद—वे यथार्थ में ही सभी नाशवान शरीरों में प्रतिष्ठित तथा सर्वव्यापी परमेश्वर के स्वरूप होकर भी युग के प्रयोजनवश सर्वसुलक्षण-युक्त अंगविशिष्ट देहधारण करके, विशेष रूप से निष्काम कर्मों के माध्यम से अपने को प्रगट करके आदर्श दिखाने के लिए सभी प्रकार की कठिनाइओं को

सदाप्रफुल्लोऽशुभनाशिनामा कल्याणवर्षी सुखदायिमूर्तिः ।
प्रमे / विशुद्धविज्ञानमयोऽविगेयो विशुद्धसत्वः सुविशालवक्षाः ॥१५०॥
अगाधसत्त्वोऽमितवीर्य आत्मा तत्त्वप्रकाशी सुतनुर्महात्मा ।
अखण्डरूपो निखिलावतंसः संसारसारावगतो निरीहः ॥१५१॥

अनायास झेलते हुए स्नेहरस से आप्लुत अन्तःकरणों में शान्तिसुधा का सञ्चारक बने थे । ॥१४९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७५७) सदाप्रफुल्लः सदा प्रसन्न, (७५८) अशुभनाशिनामा अमंगल-नाशक नामधारी, (७५९) कल्याणवर्षी कल्याणवर्षण करने वाले, (७६०) सुखदायिमूर्तिः सुखदायक मूर्तियुक्त, (७६१) विशुद्ध-विज्ञानमयः विशुद्धविज्ञानमय, (७६२) अविगेयः अनिन्दनीय, (७६३) विशुद्धसत्त्वः विशुद्धसत्त्वगुणयुक्त, (७६४) सुविशालवक्षाः विशालवक्षःस्थल-युक्त ॥१५०॥

आशय अनुवाद—वे सदा ही प्रसन्न तथा कल्याण बरसाने वाले सुखदायक मूर्तियुक्त थे। उनके रामकृष्ण नाम के ग्रहण करने से सब प्रकार के अमंगल विनष्ट हो जायँगे। ऐसी बात अपने मुख से कहने के कारण वे अशुभ-नाशकारी नाम धारण करने वाले। महान् उदारभाव-प्रकाशक, अति विशाल वक्षःस्थलयुक्त थे तथा विमल सत्वगुणान्वित और विशुद्ध विज्ञानमय होने से उनके चरित्र सभी प्रशंसनीय गुणोंसे युक्त थे ॥१५०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७६५) अगाधसत्त्वः अशेषसत्वगुणान्वित, (७६६) अमितवीर्यः असीम वीर्य वाले, (७६७) आत्मा परमात्मस्वरूप, (७६८) तत्वप्रकाशी तत्त्व के प्रकाशक, (७६९) सुतनुः शोभामय मूर्ति वाले, (७७०)

मायाश्रयो मनोऽभीष्टो मायाधीशः सुरेश्वरः ।
मोदमानो मनोहारी मायातीतस्तुरीयचित् ॥१५२॥

महात्मा महान अन्तःकरणयुक्त, (७७१) अखण्डरूपः अखण्डस्वरूप, (७७२) **निखिलावतंसः** सभी जगत् के भूषण-स्वरूप, (७७३) संसारसारावगतः **संसार** के सार रूप ब्रह्म को आत्मस्वरूप जानने वाले, (७७४) निरीहः **सांसारिक** सभी विषयों के प्रति स्पृहारहित ॥१५१॥

आशय अनुवाद—वे अशेषसत्त्वगुणान्वित, असीम वीर्य वाले, परमात्म-स्वरूप, तत्त्व के प्रकाशक, महात्मा, अखण्ड स्वरूप, जगत् के भूषण स्वरूप, असार संसार के भीतर व्याप्त ब्रह्मरूप सार-वस्तु के विज्ञानी, सांसारिक सभी विषयों के प्रति स्पृहारहित तथा शोभामय देहधारण करके महापुरुष रूप से प्रगट होने पर भी यथार्थ में अखण्ड परमात्म-स्वरूप थे ॥१५१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७७५) मायाश्रयः माया को आश्रय करने वाले, (७७६) मनोऽभीष्टः मन के अभिलषित, (७७७) मायाधीशः माया के अधीश्वर, (७७८) सुरेश्वरः श्रेष्ठदेवता-स्वरूप, (७७९) मोदमानः आनन्दमय, (७८०) मनोहारी मन को हरने वाले, (७८१) मायातीतः माया से परे, (७८२) तुरीयचित् तुरीयचैतन्यस्वरूप ॥१५२॥

आशय अनुवाद—वे सत्त्व, रजः, तमोरूप त्रिगुणात्मिका माया से अतीत, स्थूल और जाग्रत आदि भावों तथा अवस्थाओं से रहित, चतुर्थ भाव और अवस्थायुक्त निर्विशेष ब्रह्म चैतन्यस्वरूप होकर भी यथार्थ में उस माया के अधीश्वर, अपनी दैवी गुणमयी माया का आश्रय कर परमानन्दमय, अनेक भक्तों का मन हरने वाले तथा अभिलषित श्रेष्ठ देवतास्वरूप थे और उस रूप में अभी भी वर्तमान हैं ॥१५२॥

मङ्गलो मोहनो मूर्तो मायागूढस्वरूपकः ।
नवदश/ ऊर्नविंशमहाभावो राधिकामयजीवितः ॥१५३॥
ऋत-सत्य-तपः-पूर्णो नित्ययुक्तोऽखिलेश्वरः ।
ऋतम्भरो धरादेवो लोकातीतो चिदम्बरः ॥१५४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७८३) मङ्गलः मङ्गलजनक, (७८४) मोहनः सम्मोदित करने वाले, (७८५) मूर्तः मूर्तिमान, (७८६) मायागूढस्वरूपकः मायाशक्ति के प्रभाव से अपना स्वरूप छिपाने वाले, (८८७) ऊर्नविंशमहाभावः उन्नीस प्रकार के भावों से युक्त महाभाव प्रकाशक, (७८८) राधिकामयजीवितः श्रीराधिका के स्वरूप और भाव से अनुरंजित जीवन धारण करने वाले ॥१५३॥

आशय अनुवाद—उन्होंने अनिर्वचनीय और दुर्ज्ञेय मायाशक्ति के प्रभाव से अपना स्वरूप छिपाकर जीवजगत के परम मंगलजनक और सम्मोहक होकर ही देह धारण किया था तथा वैष्णवतन्त्रोक्त विविध भावों की साधना के समय पहले राधिका में अभिव्यक्त उन्नीस प्रकार के भावों के समष्टिरूप महाभाव स्वयं प्रकाशित करके श्रीरधिका का भावानुरंजित जीवन धारण किया था ॥१५३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७८९) ऋतसत्यतपःपूर्णः सत्यवाक्य, सत्यचिन्ता और व्यवहार तथा तपस्या के द्वारा पूर्णता प्राप्त, (७९०) नित्ययुक्तः सदायोगयुक्त, (७९१) अखिलेश्वरः सबके प्रभु, (७९२) ऋतम्भरः सत्य के समर्थक और पोषक, (७९३) धरादेवः पृथ्वी में देवता-स्वरूप, (७९४) लोकातीतः लोकों के अतिक्रमणकारी, (७९५) चिदम्बरः चैतन्यरूप वस्त्र से आवृत ॥१५४॥

आशय अनुवाद—वे सत्य वाक्य, सत्यचिन्ता और सत्य व्यवहार तथा तपस्या से परिपूर्ण, सत्य के समर्थन और पोषण करने वाले, सदा योगयुक्त, अपनी महिमा से भू आदि सप्त लोकों के अतिक्रमण करने वाले, कभी-कभी

अमरश्चामृताधारोऽमृतभाषोऽमृतेक्षणः ।
अकलः सकलः सूरी रञ्जनश्चाचलश्चलः ॥१५५॥
मातृप्राणः पितृप्राणः सखिप्राणो नृवल्लभः ।
दरिद्रप्राण आचार्यो दीनेशो दीनवत्सलः ॥१५६॥

स्थूल शरीर का ज्ञान न रहने के कारण लौकिक वस्त्रादि न पहन कर भी चैतन्यरूप वस्त्र से आच्छादित होने के कारण अध्यात्म जगत में सभी के प्रभु तथा इस संसार में देवतारूप से पूजित थे ॥१५४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(७९६) अमरः मृत्युरहित, (७९७) अमृताधारः अमृत के आधारस्वरूप, (७९८) अमृतभाषः अमृतमय भाषा का उच्चारण करने वाले, (७९९) अमृतेक्षणः अमृत वर्षण करने वाली दृष्टि सम्पन्न, (८००) अकलः अंशरहित, (८०१) सकलः अंशयुक्त, (८०२) सूरि दिव्य-ज्ञान सम्पन्न, (८०३) रञ्जनः अत्यन्त मनोरंजक, चलः गमनादि व्यापार-युक्त, (८०४) अचलः गमनादि व्यापारशून्य, (८०५) अत्यन्त मनोरंजक ॥१५५॥

आशय अनुवाद—ईश्वर के साथ सायुज्य ज्ञान में प्रतिष्ठित रहने से वे यथार्थ में मृत्युरहित, अमृत के आधारस्वरूप, अमृतमय भाषा का उच्चारण करने वाले, अमृतवर्षणकारी-दृष्टि-सम्पन्न, स्वरूप में अंश-रहित होने पर भी माया के प्रभाव से अंशयुक्त, यथार्थ में गमनादि व्यापार शून्य होने पर भी मायिक भाव से गमनादि व्यापारयुक्त, मनुष्य देह धारण करके अपूर्व साधना के प्रभाव से दिव्यज्ञान विभूषित तथा अनुपम हावभावयुक्त, सुमधुर कण्ठस्वर और वाचनभंगी के द्वारा समीप के आये हुए बालक, वृद्ध, स्त्री के अत्यन्त मनोरंजक थे ॥१५५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८०६) मातृप्राणः माता के प्राणस्वरूप, (८०७) पितृप्राणः पिता के प्राणस्वरूप, (८०८) सखिप्राणः सखाओं के

अप्राकृतवपुः पूज्यः प्रेमोन्मत्तस्तपोमयः ।
ध्येयोऽचलप्रतिष्ठश्च मोहङ्कषः कृपामयः ।।१५७।।

प्राणस्वरूप, (८०९) नृवल्लभः नरों के प्रभु, (८१०) दरिद्रप्राणः दरिद्रजन के प्राणस्वरूप, (८११) आचार्यः शिक्षा और दीक्षा के गुरु, (८१२) दीनेशः दरिद्रों के प्राणस्वरूप, (८१३) दीनवत्सलः दीनों के प्रति वात्सल्यभाव रखने वाले ।।१५६।।

आशय अनुवाद—नर देह धारण कर वे माता, पिता तथा बन्धुओं के प्राणस्वरूप हुए थे। सभी मनुष्यों के वे प्रभु थे। अपार करुणा से वे दरिद्रों को अपने के समान समझते थे। दीन-दरिद्रों के प्रति स्वभाव से ही वात्सल्यभावयुक्त होने के कारण उनके लिए वे साक्षात् प्रभु थे, और अनेक धर्म-पिपासु व्यक्यिों को आध्यात्मिक विज्ञान के सम्बन्ध में शिक्षा और दीक्षा देकर अध्यात्म राज्य में उनके प्रभु हुए थे ।।१५६।।

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८१४) अप्राकृतवपुः दिव्य लक्षणयुक्त देहधारी, (८१५) पूज्यः पूजनीय, (८१६) प्रेमोन्मत्त प्रेम के कारण उन्मादयुक्त, (८१७) तपोमयः तपस्या में परिपूर्ण, (८१८) ध्येयः ध्यान के विषयस्वरूप, (८१९) अचलप्रतिष्ठः स्थिर सम्मानयुक्त, च तथा, (८२०) मोहङ्कषः मोह-विनाशक, (८२१) कृपामयः कृपापूर्ण ।।५५७।।

आशय अनुवाद—वे दिव्य प्रेम के कारण उन्मत्त के समान, विविध तपस्याओं से परिपूर्ण, अज्ञानाच्छन्न जीवों के मोहविनाशक कृपा से आविष्ट, दिव्यलक्षणयुक्त देहधारी होने से वे स्थायी प्रतिष्ठा के अधिकारी तथा भक्तसाधकों के पूजनीय और ध्यानगम्य थे ।।१५७।।

शा/

सत्यः सत्याश्रयः सर्वः सत्यात्मा सत्यसम्भवः ।
परसत्यापरोक्षी चापूर्वसत्यप्रभाषणः ॥१५८॥
महाहृष्टो महादृप्तो महामोहविनाशकः ।
घनीभूतमनोयोगो माधुर्यघनविग्रहः ॥१५९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८२२) सत्यः सदा विद्यमान ब्रह्मस्वरूप, (८२३) सत्याश्रयः यथार्थ ब्रह्मभाव को अवलम्बन करने वाले, (८२४) सर्वः शिवस्वरूप, (८२५) सत्यात्मा निष्कपटभावयुक्त, (८२६) सत्यसम्भवः माया उपाधियुक्त ब्रह्मस्वरूप से आविर्भूत, (८२७) परसत्यापरोक्षी सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मस्वरूप की अपरोक्ष अनुभूति-सम्पन्न, च और (८२८) अपूर्वसत्यप्रभाषणः अदृष्टपूर्व वाचनिक सत्यनिष्ठा-संम्पन्न ॥१५८॥

आशय अनुवाद—यथार्थ में वे मायोपहित ब्रह्म से अविर्भूत, सदा विद्यमान, ब्रह्मस्वरूप यथार्थ ब्रह्मभाव के अवलम्बन करने वाले तथा सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मस्वरूप की अपरोक्ष अनुभूतियुक्त अदृष्टपूर्व वाचनिक सत्यनिष्ठा-सम्पन्न, निष्कपट-स्वभाव और शिवस्वरूप थे ॥१५८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८२९) महाहृष्टः अत्यन्त हर्षयुक्त, (८३०) महादृप्तः परमार्थ के विषय में अत्यन्त तेजस्वी, (८३१) महामोहविनाशकः रूपरस-आदि के प्रति प्रबल आकर्षण के विनाशकारी, (८३२) घनीभूतमनोयोगः प्रगाढ़ मनोयोगशाली, (८३३) माधुर्यघनविग्रहः मधुता के घनीभूत मूर्तिस्वरूप ॥१५९॥

आशय अनुवाद—ज्ञातव्य विषयों में वे प्रगाढ़ मनोयोगी, परमार्थ के विषय में अत्यन्त हर्षयुक्त तथा तेजस्वी, वे स्वयं मधुरता के घनीभूत विग्रह होने से शरणागत व्यक्तियों का रूप, रस आदि के प्रति प्रबल आकर्षण के समूल विनाश करने वाले ॥१५९॥

अहेतुककृपासिन्धुरभिमानविमर्दकः ।
मूर्तिपूजारहस्यज्ञोऽशेषसंशयवारकः ॥१६०॥
चिदानन्दघनो मानं महाचेता महाकृतिः ।
चक्री चिन्तामणिश्चन्द्रः सुधाकरो वराननः ॥१६१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८३४) अहेतुक कृपासिन्धुः विनाकारण करुणा के सागर, (८३५) अभिमानविमर्दकः अभिमान विनाशकारी, (८३६) मूर्तिपूजारहस्यज्ञः मूर्तिपूजा का रहस्य जानने वाले, (८३७) अशेषसंशयवारकः पुंजीभूतसंदेह के निवारणकारी ॥१६०॥

आशय अनुवाद—वे देवदेवियों की मूर्तिपूजा के परमरहस्यवित्, संशयापन्न व्यक्तियों के पुंजीभूत संदेह के निरसनकारी, भाग्यवान तत्त्वपिपासुओं को भगवत्तत्त्व के आस्वादन कराने में अकारण अयाचित करुणा के सागर तुल्य तथा उन पर विश्वास-सम्पन्न मोक्षार्थियों के देहादि मिथ्या विषयों में 'मैं मेरा' इस प्रकार अभिमान के विनाशक थे ॥१६०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८३८) चिदानन्दघनः घनीभूत चैतन्य और आनन्दस्वरूप, (८३९) मानम् प्रमाणस्वरूप, (८४०) महाचेताः महान् चित्तयुक्त, (८४१) महाकृतिः महत्त्वविशिष्ट आकार वाले, (८४२) चक्री चक्रधारी श्रीकृष्ण के स्वरूप, (८४३) चिन्तामणिः भक्तों के लिए चिन्तामणि-स्वरूप, (८४४) चन्द्रः चन्द्र के समान परम आह्लाददायक, (८४५) सुधाकरः अमृत के आकार स्वरूप, (८४६) वराननः परम कमनीय मुखमण्डलयुक्त ॥१६१॥

आशय अनुवाद—वे यथार्थ में घनीभूत चैतन्य और आनन्द-स्वरूप तथा दिव्य आध्यात्मिक अनुभूति के विषय में श्रेष्ठ प्रमाणस्वरूप थे। उनका चित्त महान् था तथा उनकी आकृति महत्त्व के द्योतक थी। अधर्मदलन-कार्य में वे चक्रधारी श्रीकृष्ण के तुल्य थे। ईश्वर-चिन्ता-परायण साधकों के प्रति

रसाधारो रसागारो रसालापी रसस्थितिः ।
दिव्यरसप्रसूतिश्च दिव्यरसप्रदायकः ॥१६२॥
सुस्पष्टरसिकश्रेष्ठः सम्पूर्णरसवर्षकः ।
रसपूर्णो रसज्ञो वै रसोद्भिन्नस्वरूपकः ॥१६३॥

वे भगवच्चिन्ता तथा भाव के प्रदीपक मणिस्वरूप और चन्द्र के समान परम आह्लाददायक थे। उनका मुखमण्डल परम कमनीय और अमृत का आकार था ॥१६१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८४७) रसाधारः दिव्य रति आदि स्थायी भाव के आश्रय-स्वरूप, (८४८) रसागारः सब प्रकार के रसों के भण्डारस्वरूप, (८४९) रसालापी रसमय वार्तालाप करने वाले, (८५०) रसस्थितिः दिव्य रस को आश्रय करने वाले, (८५१) दिव्यरसप्रसूतिः दिव्य रस के उत्पति स्थान, च तथा, (८५२) दिव्यरसप्रदायकः दिव्य रस प्रदानकारी ॥१६२॥

आशय अनुवाद—वैष्णव-शास्त्रोक्त महाभाव में परिपूर्णरूप से सिद्धि प्राप्त करके घनीभूत रसस्वरूप होने से वे दिव्य रति आदि स्थायी भावों के आश्रयस्वरूप सब प्रकार के रसों के भण्डार, दिव्य रस को आश्रय करने वाले, दिव्य रस के उत्पत्ति स्थान, दिव्य रस प्रदान करने वाले तथा रसपूर्ण वार्तालाप करने वाले थे ॥१६२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८५३) सुस्पष्ट रसिकश्रेष्ठः उत्कृष्ट रसिकों के श्रेष्ठ, (८५४) सम्पूर्णरसवर्षकः पूर्णता के साथ माधुर्य आदि रसों के वर्षण करने वाले, (८५५) रसमयः दिव्यरसमण्डित, (८५६) रसज्ञः रसस्वरूप परब्रह्म के जानने वाले, वै पादपुरणार्थं, (८५७) रसोद्भिन्न-स्वरूपकः रस के द्वारा अपने स्वरूप की अभिव्यक्तियुक्त ॥१६३॥

सर्वदिव्यरसोल्लासो रसाऽऽस्वादप्रमोदितः।
नवदिव्यरसज्ञानो ब्रह्माम्भोधिनिमज्जकः ॥१६४॥
दानी धनी सुकान्तिश्च निखिलाभयदायकः।
दिव्यानन्दसुधावर्षी स्निग्धो दिव्यरसोज्ज्वलः ॥१६५॥

आशय अनुवाद—'रसो वै सः' इस श्रुतिवाक्य के तात्पर्य विषय ब्रह्म के साथ अभिन्न ज्ञान होने से वे ईश्वर प्रेमिक, उत्कृष्ट रसिकों के चूड़ामणि, सर्वत्र सम्पूर्णता के साथ ईश्वर के माधुर्य आदि रसों का वर्षण करने वाले, दिव्यरसमण्डित, रसस्वरूप परब्रह्म को जानने वाले तथा दिव्य रस के द्वारा अपने स्वरूप की अभिव्यक्ति-सम्पन्न थे ॥१६३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८५८) सर्वदिव्यरसोल्लासः सब प्रकार के दिव्यरसों में उल्लसित, (८५९) रसाऽऽस्वादप्रमोदितः रासलीला के रस के उत्तम आस्वादन करने वाले, (८६०) नवदिव्यरसज्ञानः नौ प्रकार के दिव्यरसों का मर्म जानने वाले, (८६१) ब्रह्माम्भोधिनिमज्जकः सच्चिनानन्द-रस समुद्र में डूबे रहने वाले ॥१६४॥

आशय अनुवाद—पवित्रता के मूर्तिमान विग्रह होने से वे सब प्रकार के दिव्यरसों की अनुभूति से उल्लासित, व्रजमण्डल में भगवान श्रीकृष्ण और गोपियों की सम्मिलित अप्राकृत रासलीला रस का उत्तम आस्वादनकारी, नौ प्रकार के अलौकिक दिव्यरसों के मर्म जानने वाले तथा योग्य अधिकारी को परब्रह्म-रस सागर में निमग्न रखने में समर्थ थे ॥१६४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८६२) दानी दाता, (८६३) धनी धनवान्, (८६४) सुकान्तिः उत्तमकान्ति-मण्डित, (८६५) निखिलभयदायकः सभी प्राणियों को अभय देने वाले, (८६६) दिव्यानन्दसुधावर्षी दिव्य आनन्द-रूप अमृत का वर्षणकारी, (८६७) स्निग्धः स्नेहार्द्र (८६८) दिव्यरसोज्ज्वलः अलौकिक ईश्वरीय रस से उज्ज्वल ॥१६५॥

सर्वव्याप्तः प्रपञ्चेशः सर्वधर्मस्वरूपकः ।
सर्ववृष्टकृपासारः सदानन्दः सुखालयः ॥१६६॥
प्रकृष्टसाम्यसंवेत्ता मैत्र्यादर्शप्रदर्शकः ।
स्वाधीनतारहस्यज्ञः प्रज्ज्वलो मार्गदृग्वरः ॥१६७॥

आशय अनुवाद—वे उत्कृष्ट ईश्वर-तत्त्व के दाता, परमार्थ धन के धनी, उत्तम भावरूप कान्ति से मण्डित, सब प्राणियों को अभय देने वाले, दिव्य आनन्दरूप अमृत को बरसाने वाले, समस्त प्राणियों के प्रति करुणा से विगलित चित्त तथा अलौकिक ईश्वरीय रस से उज्ज्वल थे ॥१६५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८६९) सर्वव्याप्तः सर्व भूतों में परिव्याप्त, (८७०) प्रपञ्चेशः ब्रह्माण्ड के अधीश्वर, (८७१) सर्वधर्मस्वरूपकः सभी धर्मों के स्वरूप, (८७२) सर्ववृष्टकृपासारः सर्व भूतों में करुणाधारा बरसाने वाले, (८७३) सदानन्दः सदा ही आनन्दित, (८७४)सुखालयः सुख के आलय स्वरूप ॥१६६॥

अन्वय अनुवाद—सर्वव्यापक ब्रह्मचैतन्य के साथ अभिन्नता के ज्ञान से वे सदा भूमानन्द में प्रतिष्ठित थे और अपने को सर्वत्र परिव्याप्त समझते थे। समय-समय पर ईश्वर के साथ एकत्वानुभव के कारण वे अपने को समस्त ब्रह्माण्डों के अधीश्वर, समस्त सुखों के आलय तथा निखिल धर्म स्वरूप समझते थे। अनिर्वचनीय प्रेम-स्वरूप ईश्वरावतार होने के कारण वे समस्त प्राणियों पर करुणाधारा बरसाते थे ॥१६६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८७५) प्रकृष्टसाम्यसंवेत्ता उत्कृष्ट समता के जानने वाले, (८७६) मैत्र्यादर्शप्रदर्शकः मित्रता के आदर्श के प्रदर्शनकारी, (८७७) स्वाधीनतारहस्यज्ञः स्वतन्त्रता के रहस्य को जानने वाले, (८७८) प्रोज्ज्वलः उत्तम रूप से उज्ज्वल, (८७९) पथिकृद्वरः उत्तम धर्म-मार्ग के श्रेष्ठ प्रदर्शक ॥१६७॥

दिव्यवाणीसुधावर्षी दिव्यगीतिसुगायकः ।
सर्वधर्मसुसंस्कर्ता धर्मग्लानिनिदूरकृत् ॥१६८॥
सत्कार्यतत्परः शूरः सर्वसन्तापहारकः ।
श्रुतिसारोपदेष्टा वै सम्प्रदायाधिनायकः ॥१६९॥

आशय अनुवाद—'एकमेवाद्वितीयम्' इस श्रुति के प्रतिपाद्य अद्वैत समरस ब्रह्म में प्रतिष्ठित रहने के कारण वे व्यावहारिक तथा पारमार्थिक उत्तम समता के जानने वाले, समस्त भूतों में एक ही परमात्मा विराजमान हैं, इस ज्ञान से सदा निर्वैरतारूप मैत्री के आदर्श का प्रचार करने वाले। निर्वासनता ही मुक्ति का यथार्थ निदान है और वही यथार्थ स्वतन्त्रता का रहस्य है, इसकी सम्यक् उपलब्धि के कारण यथार्थ भूमानन्द में उद्भासित तथा अति सुगम सर्वोत्तम धर्म-मार्ग के प्रदर्शनकारी थे ॥१६७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८८०) दिव्यवाणीसुधावर्षी ईश्वरीय कथारूप अमृत का वर्षणकारी, (८८१) दिव्यगीतिसुगायकः भगवत्तत्त्व तथा भगवान की लीला सम्बन्धी संगीत के उत्तम गायक, (८८२) सर्वधर्मसुसंस्कर्ता सभी धर्मों के उत्तम संस्कारक, (८८३) धर्मग्लानिविदूरकृत् सभी धर्मों की ग्लानि के विदूरणकारी ॥१६८॥

आशय अनुवाद—परम सत्य की करामलकवत् अनुभूति रहने के कारण वे अनुपम ईश्वरीय कथामृत बरसाने वाले तथा भगवत्तत्त्व और उनकी लीलासम्बन्धी संगीत के उत्तम गायक थे। प्रसिद्ध धर्म-मतों की साधना प्रयुक्त उत्तम सिद्धि प्राप्त करके वे यथार्थतः समस्त धर्मों के श्रेष्ठ संस्कारक थे धर्म की समस्त ग्लानियों को उन्होंने एकदम दूर कर दिया था ॥१६८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८८४) सत्कार्यतत्परः सदा शुभकर्मसंलग्न (८८५) शूरः वीर (८८६) सर्वसन्तापहारकः सभी मनुष्यों का दुःख

स्मरजित् क्रोधजिन्न्यासी स्मरहालाहलान्तकः ।
सिद्धयोगी महायोगो विक्षेपादिविनाशकृत् ॥१७०॥
समाधिमण्डनो मान्यः समाधिसुखसंस्थितः ।
स्वधामराजमानश्च मायालेशविवर्जितः ॥१७१॥

दूर करने वाले, (८८७) श्रुतिसारोपदेष्टा वेद के सारतत्त्व के उपदेशक, वैपादपुरणार्थ, (८८८) सम्प्रदायाधिनायकः समस्त धर्मसम्प्रदायों के अधिनायक ॥१६९॥

आशय अनुवाद—वे सदा धर्मदान आदि शुभ कर्मों में संलग्न रह कर धर्मवीर होकर वेद के सारतत्त्व का उपदेश देकर धर्मपिपासुओं के समस्त दुःखों को हरते थे। वे कर्म, भक्ति, ज्ञान और योगरूप सुप्रसिद्ध धर्मों में चरम सिद्धि प्राप्त होने के कारण सभी धर्मसम्प्रदायों को अधिनायक रूप से आत्मप्रकाश देते थे ॥१६९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८८९) स्मरजित् कामजयी, (८९०) क्रोधजित् क्रोधजयी, (८९१) न्यासी संन्यासी, (८९२) स्मरहरालाहलान्तकः काम विष का नाश करने वाले, (८९३) सिद्धयोगी नित्यसिद्धयोगी, (८९४) महायोगः चरम निर्वाणप्रापक योग के अवलम्बनकारी, (८९५) विक्षेपादिविनाशकृत् चित्तविक्षेप आदि के विनाशक ॥१७०॥

आशय अनुवाद—वे नित्यसिद्ध योगी तथा चरम निर्विकल्प समाधिमान, यथार्थ संन्यासी होने के कारण काम और क्रोध पर विजय प्राप्त कर सकते थे। अपनी गम्भीर समाधिमग्न मूर्ति के दर्शन करने वालों के चित्तविक्षेप आदि तथा कामरूप विष का नाश करते थे और अभी भी करते हैं ॥१७०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(८९६) समाधिमण्डन भावसमाधि रूप अलङ्कार से भूषित, (८९७) मान्यः माननीय, (८९८) समाधिसुखसंस्थितः समाधि सुख में

विमुग्धजीवमायाघ्नः शरण्यो मतिवर्धनः ।
अमानी मानदः स्वामी मनोमदविखण्डनः ॥१७२॥
युगन्धरो युगाचार्यो बोधागम्यो यतीश्वरः ।
युगप्रवर्तको युक्तः स्वप्रकाशो युगेश्वरः ॥१७३॥

निमग्न, (८९९) स्वधामराजमानः अपने कैवल्यधाम में सदा विराजमान, (९००) मायालेशविवर्जितः मायालेशशून्य ॥१७१॥

आशय अनुवाद—वे मायालेशशून्य, समाधि भावरूप अलङ्कार से भूषित, समाधि के आनन्द में निमग्न तथा अपने कैवल्यधाम में सदा विराजमान रहने से सर्वजनमान्य थे ॥१७१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९०१) विमुग्धजीवमायाघ्नः संसार माया में विमुग्ध मनुष्यों का माया बन्धन छेदन करने वाले, (९०२) शरण्यः आश्रय स्थान, (९०३) मतिवर्धनः लोगों की सुमति को बढ़ाने वाले, (९०४) अमानी सम्मान प्राप्ति में स्पृहाशून्य, (९०५) मानदः लोगों को सम्मान देने वाले, (९०६) स्वामी पालक, (९०७) मनोमदविखण्डनः लोगों के मन की मत्तता के विनाशक ॥१७२॥

आशय अनुवाद—वे सम्मान पाने की इच्छा नहीं रखते थे। योग्य व्यक्ति को सम्मान देते थे तथा स्वयं योगेश्वर होने पर भी आश्रित लोगों के पालक थे। मन की मत्तता के विनाशक थे और सुबुद्धि बढ़ा कर विमुग्ध मनुष्यों का मायाबन्धन छिन्न करते थे ॥१७२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९०८) युगन्धरः युग के धर्मभावों के धारक, (९०९) युगाचार्यः युग के शिक्षागुरु, (९१०) बोधागम्यः साधारण बुद्धि से

योगासनस्थितो ध्यानी यतिमानसरञ्जकः ।
योगिगम्यस्वरूपश्च पूर्णयोगप्रकाशकः ॥१७४॥

नितरां शोभितक्षौणिर्निवासः शरणं सुहृत् ।
श्यामश्यामाशिवोद्गाता शिवश्यामशिवामयः ॥१७५॥

न समझने योग्य, (९११) यतीश्वरः संन्यासियों के शिरोमणि, (९१२) युगप्रवर्तकः युगधर्म के चलाने वाले, (९१३) युक्त, सदा ईश्वर भाव से संयुक्त, (९१४) स्वप्रकाशः स्वयं प्रकाश, (९१५) युगेश्वरः युगाचार्य के श्रेष्ठ निर्देशक ॥१७३॥

आशय अनुवाद—वे सदा ईश्वर-भाव में संलग्न तथा संन्यासियों में शिरोमणि थे तथा स्वयं ईश्वरावतार रूप से सुप्रकट होकर युगधर्म का आचरण करते हुए युगभाव के धारक, युग के शिक्षागुरु, युगधर्म के प्रवर्तक और युगाचार्य के श्रेष्ठ निर्देशक रूप से गण्य हुए थे। अनुपम महिममय होने से उनका जीवन मनुष्य-बुद्धि का आगम्य था ॥१७३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९१६) योगासनस्थितः योगासन में उपविष्ट, (९१७) ध्यानी ईश्वर ध्यान परायण, (९१८) यतिमानसरञ्जकः यतियों के मनोरञ्जनकारी, (९१९) योगिगम्यस्वरूपः योगियों के ध्यानगम्य-स्वरूप-संपन्न, च तथा, (९२०) पूर्णयोगप्रकाशकः योगतत्त्व को पूर्णरूप से प्रकट करने वाले ॥१७४॥

आशय अनुवाद—वे दीर्घकाल तक योगासन पर बैठ कर ईश्वर-ध्यान-परायण रहते थे। उनका स्वरूप योगियों के ध्यानगम्य था। वे योगरहस्य को पूर्णरूप से प्रकाशित करके योगियों के मनोरञ्जनकारी थे ॥१७४॥

अन्वव तथा शब्दार्थ—(९२१) नितरां शोभितक्षौणिः वे भू-मण्डल की अत्यन्त शोभा के वर्धक, (९२२) निवासः निश्चित आश्रय स्थल, (९२३)

यक्षो ज्योतिर्मयो ज्योतिः स्मयहीनो गतक्लमः ।
पाता धाता पिता बन्धुर्विबुधः शममण्डनः ॥१७६॥
मङ्गलश्रवणो हारी कोमलः शोभनः शुभः ।
सर्वशक्तिप्रदाता वै संश्रुतानाहतध्वनिः ॥१७७॥

शरणं रक्षा करने वाले, (९२४) सुहृत् कल्याणकारी मित्र, (९२५) श्यामश्यामाशिवोद्‌गाता कृष्ण, काली और शिव की महिमा कीर्तन करने वाले, (९२६) शिवश्यामशिवामयः शिव, कृष्ण और काली के भाव में डूबे हुए थे ॥१७५॥

आशय अनुवाद—वे कृष्ण, शिव और काली के भाव में भावित होकर सदा उनकी महिमा का कीर्तन करते थे और अपने पवित्र अध्यात्मजीवन के द्वारा समस्त भू मण्डल का अत्यन्त शोभावर्धन करते थे। वे शरणागत धर्मपिपासुओं के निश्चित आश्रयस्थल, रक्षक और कल्याणकारी मित्र थे ॥१७५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९२७) यक्षः परमपूज्य, (९२८) ज्योतिर्मयः दिव्यज्योति से मण्डित, (९२९) ज्योतिः ज्योतिस्वरूप, (९३०) स्मयहीनः अहङ्कार-शून्य, (९३१) गतक्लमः क्लान्तिरहित, (९३२) पाता पालनकारी, (९३३) धाता धारणकारी, (९३४) पिता पितृ-तुल्य, (९३५) बन्धुः सखा, (९३६) विबुधः निपुण बोद्धा, (९३७) शममण्डनः निवृत्तिमण्डित ॥१७६॥

आशय अनुवाद—ब्रह्मविद्‌वरिष्ठ होने के कारण वे परम-पूज्य, ब्रह्म-ज्योतिःस्वरूप, ब्रह्मज्योतिमण्डित और क्षुद्र अहंबोधशून्य तथा ससीमभाव का अतिक्रमण करने के कारण शारीरिक और मानसिक क्लान्तिरहित, निवृत्तिमण्डित और निपुण तत्वज्ञ थे। वे यथार्थ धर्मधारक और धर्मरक्षक होकर एकाधार में आश्रित जनों के सखा और पिता के समान थे ॥१७६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९३८) मङ्गलश्रवणः नाम श्रवण करने वालों के मङ्गलदायक, (९३९) हारी मन को हरने वाले, (९४०) कोमलः कोमल-

त्रिपुटीलयकारी वै मायाविक्षेपनाशकः ।
दिव्यभावसमासीनो रासमणीष्टसाधकः ॥१७८॥

भाव सम्पन्न, (९४१) शोभनः सुन्दर, (९४२) शुभः हित-जनक, (९४३) सर्वशक्तिप्रदाता सर्वशक्ति प्रदानकारी, वै पादपुरणार्थ, (९४४) संश्रुतानाहत-ध्वनिः स्पष्ट रूप से अनाहत नाद के श्रवण करने वाले ॥१७७॥

आशय अनुवाद—साधना में सिद्धिलाभ करने के ठीक पूर्वक्षण में उन्होंने गम्भीर अनाहत नाद सुना था। दिव्यभाव में आरूढ़ होने से वे रूढ़ भाववर्जित तथा अलौकिक सुषमा से मण्डित थे। वे अपने परम पावन नाम श्रवण करने वालों के मङ्गल तथा हित विधान करने में, अपनी समाहित मूर्ति का ध्यान करने वालों का कल्याण साधन करते हुए अपने ईश्वरप्रेम में उन्मत्त शरीर की सुन्दरभङ्गी से भक्तों के मन को हर लेते थे ॥१७७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९४५) त्रिपुटीलयकारी ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय इस त्रिपुटी का विलय करके विशेष रूप से अद्वैत बोध में संस्थापित करने वाले, वै पादपुरणार्थ, (९४६) मायाविक्षेपनाशकः सत् और असत् रूप में अनिर्वचनीय मायाशक्ति विक्षेप का नाश करने वाले, (९४७) दिव्यभावसमासीनः ईश्वरीयभाव में सुप्रतिष्ठित, (९४८) रासमणीष्टसाधकः निज निवासस्थान के काली-मन्दिर की बनाने वाली रानी राममणि का पारमार्थिक कल्याण साधन करने वाले थे ॥१७८॥

आशय अनुवाद—वे ईश्वरीय भाव में सुप्रतिष्ठित रह कर यथार्थ सद्‌गुरु के रूप में दक्षिणेश्वर की भवतारिणी काली का मन्दिर बनाने वाली रानी राममणि का पारमार्थिक कल्याणसाधन कर सके थे। नरेन्द्रनाथ आदि उच्चकोटि के पार्षदों के सत् और असत् शब्दों से बनाने के आयोग्य मायाशक्ति-भूत विक्षेप का नाश करके उन्होंने उनके ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय रूप त्रिपुटी का नाश करके अन्त में स्वगत-सजातीय-विजातीय-भेदशून्य, समरस अद्वैत ज्ञान में उन्हें संस्थापित किया था ॥१७८॥

'हृदय'प्राप्तसाहाय्यः स्वीकृतानेकसद्गुरुः ।
विन्यस्तसिद्धयभिज्ञानो भावहीनत्ववारकः ॥१७९॥
प्रदीप्तेशपुत्रप्रकृष्टावलोकी प्रभोद्भिन्नविज्ञाल्लदूतापरोक्षी ।
सुदृष्टात्मदेहप्रलीनावतारः स नूनं महोदार ऐस्लाम-खार्ष्टः ॥१८०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९४९) 'हृदय'प्राप्तसहाय्यः भांजे हृदयराम की सहायता प्राप्त, तु पादपूरण में, (९५०) स्वीकृतानेकसद्गुरुः अनेक सद्गुरुओं का वरण करने वाले, (९५१) विन्यस्तसिद्धयभिज्ञानः नाना प्रकार की सिद्धियों के विषयों में अभिज्ञान देने वाले, (९५२) भावहीनत्ववारकः भावों की हीनता दूर करने वाले ॥१७९॥

आशय अनुवाद—दीर्घ द्वादश वर्ष की सुकठोर साधना के समय तथा पारवर्ती काल में उन्होंने भांजे हृदयराम की सेवा ग्रहण की थी। धर्म-साधना में सिद्धिलाभ करने के सहायक के रूप में उन्होंने अनेक सद्गुरुओं का वरण किया था, विविध धर्ममतों के अनुसार साधन करके सिद्ध होकर अध्यात्म-जगत् में सिद्धि के विषय में अपना परिचय-सूचक चिह्न सुविन्यस्त किया था। अपने विचित्र धर्मानुभूतिपूर्ण महान् उदार जीवनादर्श के प्रभाव से दीक्षा और शिक्षा गुरुओं तक की भावदीनता विदूरित की थी ॥१७९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९५३) प्रदीप्तेशपुत्रप्रकृष्टावलोकी ज्योतिर्मय ईश्वर-पुत्र ईसा मसीह के उत्तम रूप से दर्शन करने वाले, (९५४) प्रभोद्भिन्न-विज्ञाल्लदूतापरोक्षी प्रभामय महाज्ञानी अल्लाह के दूत मोहम्मद का अपरोक्ष रूप से दर्शन करने वाले, (९५५) सुदृष्टात्मदेहप्रलीनावतारः पूर्ववर्ती अवतारों को अपने शरीर में विलय प्राप्त होने का प्रत्यक्षानुभव करने वाले, स वे, महोदारः परम उदार, नूनं निश्चित ही, (९५६) ऐस्लामखार्ष्ट थे ॥१८०॥

असारीकृतश्रेष्ठसिद्धयष्टको वै सुधीविप्र'गौरी'विभूतिप्रणाशी ।
स्वयंशुद्धभक्तिप्रसंविद्विलासी स्वकीयेशभक्तात्मकत्वप्रकाशी ॥१८१॥

शिवाभिन्नजीवस्वरूपत्वबोधो शिवाभिन्नमर्त्यार्चनादर्शवादी ।
नवीनाखिलोदारधर्माब्ददर्शी नवन्यासिसङ्घप्रतिष्ठाधिकर्ता ॥१८२॥

आशय अनुवाद—ईसाई धर्म की साधना के समय ज्योतिर्मय ईश्वर-पुत्र ईसा मसीह तथा इसलाम धर्म की साधना के समय ज्योतिर्मय महाज्ञानी अल्लाह के दूत पैगम्बर मोहम्मद का साक्षात् दर्शन करके वे निःसन्देह इसलाम और ईसाई धर्म की परमोदार अनुभूति प्राप्त करके एक प्रमाणित पुरुष के रूप से गण्य हुए थे। विभिन्न समयों में उन्होंने पूर्व-पूर्व अवतारों में से अनेकों को अपने श्रीअंग में विलीन होते देखा था ॥१८०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९५७) असारीकृतश्रेष्ठसिद्धयष्ठकः आपात रमणीयतम सुप्रसिद्ध ८ सिद्धियों को असार समझने वाले, वै पादपुरणार्थ, (९५८) सुधीविप्र'गौरी'विभूतिप्रणाशी ब्राह्मणकुलोत्पन्न ज्ञानी 'गौरी' पण्डित की सिद्धि को हरने वाले, (९५९) स्वयंशुद्धभक्तिप्रसंविद्विलासी स्वयं शुद्धभक्ति तथा ज्ञान के विलासपरायण, (९६०) स्वकीयेशभक्तात्मकत्वप्रकाशी एकाधार में अपने ईश्वरीय और भागवत भावों का विकाश करने वाले ॥१८१॥

आशय अनुवाद—वे आपात रमणीयतम सुप्रसिद्ध ८ सिद्धियों को असार समझ कर भी उनके पूर्ण अधिकारी होते हुए भी कदाचित् उनका प्रयोग करते थे। ब्राह्मणकुल में उत्पन्न ज्ञानी 'गौरी'-पण्डित के पारमार्थिक मङ्गल के लिए ही उन्होंने उनकी सिद्धि हर ली थी तथा स्वयं शुद्धभक्ति और ज्ञानविलासयुक्त होकर एकाधार में अपने ईश्वरीय और भागवत भावों का विकास किया था ॥१८१॥

प्रणामास्त्रयोगातिदक्षोपदेष्टा स्वयंव्यक्तपुंस्त्रीसुरोत्कृष्टरूपः ।
प्रसूपूतभावाश्रयोत्कर्षवक्ता भृशं धिक्कृताहंपरिस्फीतभावः ॥१८३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६६१) शिवाभिन्नजीवस्वरूपत्वघोषी जीव का स्वरूप शिव के स्वरूप से अभिन्न है ऐसी घोषणा करने वाले, (६६२) शिवाभिन्नमर्त्यार्चनादर्शवादी शिव के साथ अभिन्न मनुष्य की श्रद्धापूर्ण सेवा के आदर्श की घोषणा करने वाले, (६६३) नवीनाखिलोदारधर्माब्ध्वदर्शी नूतन, अतिउदार धर्ममार्ग का प्रदर्शन करने वाले, (६६४) नवन्यासिसंघप्रतिष्ठाधिकर्ता नवीन संन्यासी-संघ के संस्थापन करने वाले ॥१८२॥

आशय अनुवाद—एक समय दक्षिणेश्वर में नरेन्द्र आदि भक्तों के सामने प्रामाणिक वैष्णव-धर्म-ग्रन्थ का—'जीव में दया, नाम में रुचि, वैष्णवों की पूजा'—इस अंश के पाठ के समय उन्होंने भावावेश से कहा था—जीव और शिव स्वरूप से अभिन्न हैं, अतः मनुष्य जीवों के प्रति दया न करके शिव ज्ञान से उनकी सेवा करने के ही अधिकारी हैं। इस भाव में उन्होंने जीव का स्वरूप यथार्थ में शिव के स्वरूप से भिन्न नहीं है और शिव से अभिन्न मनुष्य की श्रद्धा से सेवा करना ही इस युग का आदर्श है—ऐसी घोषणा की थी। 'आत्मनो मोक्षार्थं, जगद्धिताय च'—इस धर्मादर्श के प्रचार के लिए दृढ़संकल्प नवीन संन्यासीसंघ के प्रतिष्ठापक के रूप में भी उन्होंने अभिनव अति उदार धर्ममार्ग का प्रदर्शन किया था ॥१८२॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६६५) प्रणामस्त्रयोगातिदक्षोपदेष्टा प्रणामरूप अस्त्र-प्रयोग के अति निपुण उपदेशक, (६६६) स्वयंव्यक्तपुंस्त्रीसुरोत्कृष्टरूपः अपने शरीर में स्वयं पुरुष और स्त्री देवताओं के दिव्यरूपों के प्रदर्शनकारी, (६६७) प्रसूपूतभावाश्रयोत्कर्षवक्ता पवित्र मातृभाव के आश्रय के उत्कर्ष की घोषणा करने वाले, (६६८) भृशं धिक्कृताहंपरिस्फीतभावः अहंकार रूप स्फीतभाव के प्रति अत्यन्त धिक्कार देने वाले ॥१८३॥

स्वयंसुव्यक्तगौराङ्गादिपूर्वजावतारभाः ।
ध्येयाभेदसमापन्नकृतस्वविग्रहार्चनः ॥१८४॥

आशय अनुवाद—उन्होंने उन दिनों के पाश्चात्त्य शिक्षाभिमानी, सनातन शिष्टाचार के प्रति उपेक्षा प्रदर्शनकारी विद्वानों के साथ साक्षात्कार के समय स्वयं प्रणाम, नमस्कार आदि के द्वारा अभिवादन करके वे उनकी उद्दण्डता दूर करते थे, फलस्वरूप वे क्रमशः प्रणाम आदि प्रथा में आस्थाशील हुए थे। इस विषय के प्रति लक्ष्य करके भक्तप्रवर गिरीशचन्द्र घोष ने कहा था—वर्तमान युग में उन्होंने, प्रमाण रूप अस्त्र के द्वारा जगत् की जय की। अतः प्रमाण रूप ब्रह्मास्त्र के प्रयोग से दुर्विनीतों को विनीत करने के विषय में उन्हें अति-निपुण पथ-प्रदर्शक कहा जा सकता है। उनके द्वारा अपने शरीर में विभिन्न देव-देवियों के दिव्य रूप प्रगट किये जाने के कारण भक्तलोग उनमें विभिन्न देव-देवियों के रूपों का दर्शन करके धन्य हुए थे। इस युग में मातृभाव से जगत्कारण की उपासना करना ही श्रेष्ठ साधना है—इस बात की घोषणा कर उन्होंने पवित्र मातृभाव का आश्रय का उत्कर्ष प्रचारित किया था। अहंकारपूर्ण आत्मप्रचार के भाव को वे अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखते थे और अपने लिए कदाचित् ही 'मैं' शब्द का प्रयोग करते थे ॥१८३॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६६९) स्वयंसुव्यक्तगौराङ्गादिपूर्वजावतारभाः गौराङ्गदेव आदि पूर्वज ईश्वरावतारों की ज्ञानज्योति के स्वयं सुप्रकट करने वाले, (६७०) ध्येयाभेदसमापन्नकृतस्वविग्रहार्चनः ध्येय देवता के साथ अभिन्नता ज्ञान से अपने स्थूल शरीर की अर्चना करने वाले ॥१८४॥

आशय अनुवाद—अनेक वर्षों तक साधन करते समय वे महाप्रभु गौराङ्ग-देव आदि पूर्ववर्ती ईश्वरावतारों की ज्ञानज्योति के द्वारा स्वयं मण्डित हुए थे। भवतारिणी देवी की पूजा के समय वे देवी के साथ अपनी एकता का अनुभव करके कभी-कभी देवी का नैवेद्य स्वयं ही ग्रहण करते थे, परवर्ती काल में

घनीभूतपूर्वावतारादिभावो स्वसन्दर्शिताम्बामहेशस्वरूपः ।
सुभुक्तातुरव्याधितापादिप्रकोपः स्वदेहस्फुकुटान्यप्रहारादिचिह्नः ॥१८५॥
पुङ्खानुपुङ्खविषयेक्षणतत्परोऽपि ब्रह्मावलोकनसुवृत्तिकलापयुक्तः ।
नारीनृजीवकुलमानसतत्त्वदर्शी सम्मोहितप्रथितदृप्तमनस्विसङ्घः ॥१८६॥

अपनी निर्विकल्पसमाधिमूर्ति की पूजा करके उन्होंने संसार में अपने चित्र तथा मूर्ति की उपासना की शुभ सूचना की थी ॥१८४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९७१) घनीभूतपूर्वावतारादिभावः पूर्वजात अवतार आदि के घनीभूत भावों को अभिव्यक्त करने वाले, (९७२) स्वसन्दर्शिताम्बामहेशस्वरूपः मथुरानाथ को अम्बा देवी और महेश्वर का स्वस्वरूप में दर्शन कराने वाले, (९७३) सुभुक्तातुरव्याधितापादिकोपः आतुर भक्तों की व्याधि, ताप आदि के प्रकोप का अपने शरीर में विशेष रूप से भोग करने वाले, (९७४) स्वदेहस्फुकुटान्यप्रहारादिचिह्नः अन्य व्यक्ति पर होने वाले प्रहार के चिह्न को अपने शरीर में अभिव्यक्त करने वाले ॥१८५॥

आशय अनुवाद—पूर्वजात अवतारों के असामान्य भाव उनके भीतर घनीभूत और मूर्त हो उठे थे। उन्होंने भक्त मथुरानाथ को अम्बा और महेश्वर का दिव्य उज्ज्वल स्वरूप अपने शरीर में दिखाया था। असीम करुणा से आविष्ट होकर उन्होंने आतुरों और पापियों के व्याधि, ताप आदि के प्रकोप का अपने शरीर में भोग किया था। समष्टिस्थूलशरीराभिमानी विराट् चैतन्य के साथ अभिन्नता बोध के समय कभी-कभी अन्य व्यक्ति के शरीर में हुए प्रहार के चिह्न उनके शरीर में स्पष्ट-रूप से प्रकट होते थे ॥१८५॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९७५) पुङ्खानुपुङ्खविषयेक्षणतत्परः पुङ्खानुपुङ्ख भाव से रूपादि विषय परिदर्शनकुशल, अपि होने पर भी, (९७६) ब्रह्मावलोकनसुवृत्तिकलापयुक्तः ब्रह्मदृष्टि रूप उत्तम मनोवृत्तियुक्त, (९७७)

नीचाग्रगण्य-'रसिक'-प्रकटीकृतात्मा भक्तप्रदर्शितवराभयकालिकाश्रीः ।
लिङ्गाश्रयागणितचित्तविराजमानःपापित्वबोधपरिहारदृढोपदेष्टा ॥१८७॥

नारी-नृ-जीव-कुल-मानस-तत्त्वदर्शी नर, नारी तथा अन्यान्न प्राणियों के मनस्तत्त्वविज्ञानी, (६७८) सम्मोहित-प्रथित-दृप्त-मनस्विसङ्घः प्रसिद्ध, गर्वित मनीषियों के विस्मय-सम्पादक ॥१८६॥

आशय अनुवाद—पुङ्खानुपुङ्ख भाव से अर्थात् सूक्ष्म-भाव से रूपादि विषयों की पर्यालोचना करके वे ब्रह्मभावना रूप उत्तम मनोवृत्तिशाली हुए थे। वे नर-नारी तथा अन्यान्य प्राणियों के मनस्तत्त्व को अच्छी तरह समझते थे। समस्त ज्ञानों के आकर ब्रह्म को अपरोक्ष रूप से हस्तामलक के समान अनुभव करने के कारण प्रायः सभी प्रसिद्ध, गर्बित मनीषी भी उनके संस्पर्श में आकर मुग्ध हो जाते थे ॥१८६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(६७६) नीचाग्रगण्यरसिक-प्रकटीकृतात्मा अत्यन्त नीच कुल में उत्पन्न रसिक के सामने अपना स्वरूप प्रकट करने वाले, (६८०) भक्तप्रदर्शितवराभयकालिकाश्रीः भक्तों को वराभयमूर्तिधारिणी कालिका देवी के रूप में अपना दर्शन कराने वाले, (६८१) लिङ्गाश्रयागणित-चित्तविराजमानः सूक्ष्म देह का आश्रय लेकर अगणित भक्तों के चित्तों में विराजमान, (६८२) पापित्वबोधपरिहारदृढोपदेष्टा 'मैं पापी हूँ' 'मैं पापी हूँ' ऐसी बुद्धि के परित्याग के विषय में दृढ़ उपदेष्टा ॥१८७॥

आशय अनुवाद—चण्डाल तक के मनुष्यों पर प्रेम के कारण उन्होंने सुनीच मेहतरकुल में उत्पन्न 'रसिक' पर कृपा करके उसके देहत्याग के समय अपना दिव्य-रूप दिखाकर उसे मुक्ति का अधिकारी बनाया था। अन्तिम रोग के समय कलकत्ते के श्यामपुकुर मुहल्ले में एक समय काली पूजा की रात्रि में गिरिश आदि भक्त उनमें वराभयदायिनी कालिका देवी की

स्वेच्छावृतासाध्यकठोररोगः कल्पद्रुभावाश्रयचेतनाकृत् ।
नरेन्द्रसंक्रान्तसुदिव्यसम्पन्नरेन्द्रनाथत्वसुघोषकारी ॥१८८॥

अपूर्व श्रीमण्डित मूर्ति का दर्शन कर धन्य हुए थे। उनके पवित्र संस्पर्श में रहकर धन्य हुए भक्तों को सिद्धिलाभ के प्रतिकूल 'मैं पापी हूँ' 'मैं पापी हूँ' ऐसी बुद्धि छोड़ देने के लिए वे उन्हें आग्रह के साथ उपदेश देते थे। ईश्वरावतार होने के कारण वे मानव-लीला समाप्त करने के पूर्व तथा बाद में भी अनेक भक्तों के चित्त तथा सूक्ष्म शरीर में विराजमान रहते थे और अब भी रहते हैं ॥१८७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९८३) स्वेच्छावृतासाध्यकठोररोगः अपनी इच्छा से असाध्य अत्यन्त पीड़ादायक रोग का वरण करने वाले, (९८४) कल्पद्रुभावाश्रयचेतनाकृत् कल्पतरु बनकर भक्तों में चैतन्य दान करने वाले, (९८५) नरेन्द्रसंक्रान्तसुदिव्यसम्पत् नरेन्द्रनाथ के भीतर दिव्य ऐश्वर्य का सञ्चार करने वाले, (९८६) नरेन्द्रनाथत्वसुघोषकारी नरेन्द्रनाथ की सच्ची नरेन्द्रता के विषय में सुस्पष्टरूप से घोषणा करने वाले ॥१८८॥

आशय अनुवाद—वे अनेकों के पाप-ताप अपने शरीर में आकर्षण कर लेने के फलस्वरूप लीला समाप्त करने के पूर्व असाध्य तथा अतिकष्टदायक रोहिणी (कैंसर) रोग से आक्रान्त हुए थे। अन्तिम समय निकट होने पर एक दिन काशीपुर मुहल्ले के बगीचे वाले मकान में उन्होंने कल्पतरु-भाव में आविष्ट होकर अनेक भक्तों को आशीर्वाद देते हुए कहा था—'तुम सबको चैतन्य-लाभ हो।' उनके उस अमोघ आशीर्वाद के फलस्वरूप सभी लोग दिव्य-चैतन्य में प्रतिष्ठित होकर धन्य तथा कृतार्थ हुए थे। नवयुग धर्मचक्र के प्रवर्तन की इच्छा से उन्हों ने नरेन्द्रनाथ के भीतर अपने आध्यत्मिक भाव ऐश्वर्य का सञ्चार करके उन्हें यथार्थ युगनायक के रूप में परिवर्तित किया था।

वृन्दाटवीस्वर्नदिकादुलाली वृन्दारजःपूतसुसिद्धपीठः
कीटाणुकीटोपमजीवतारी स्वाभिन्नशक्तिप्रकटेष्टबीजः ।

साथही सबके सामने उनसे कहा था—"तुझे माँ जगदम्बा के बहुत
करने होंगे।" समवेत भक्तों से—"आज से नरेन्द्र सबका नेता
यह भी उन्होंने कहा था ॥१८८॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९८७) वृन्दाटवीस्वर्नदिकादुलाली वृन्दा
स्थित परम सिद्ध गंगामाई का आदर-प्राप्त, (९८८) वृन्दारजःपूतसु
वृन्दवन के रजः (धूल) के द्वारा पवित्र सुसिद्ध पीठाधीश, (९८९)
कीटोपमजीवतारी कीट से भी छोटे कीट के समान जीवों के उद्धार
इच्छुक, (९९०) स्वाभिन्नशक्तिप्रकटेष्टजीजः अभिन्न शक्ति रूपा सारदा दे
विभिन्न देवताओं के इष्ट बीजमन्त्र प्रदान करने वाले ॥१८९॥

आशय अनुवाद—वृन्दावन तीर्थ में रहते समय वहाँ की परम
गंगामाता के साथ वे अलौकिक वात्सल्य-बन्धन में आबद्ध हुए थे।
समय वह गंगामाई उन्हें आदर के साथ दुलाली कह कर पुकारती
महासिद्धपीठ दक्षिणेश्वर लौट कर उन्होंने वृन्दावन के पवित्र रजः वह
पञ्चवटी आदि स्थानों में छिड़का कर कहा था—"आज से यह
वृन्दावन के समान पवित्र हो गया।" कीट से भी छोटे कीट के स
जीवों के उद्धार के लिए उन्होंने अभिन्न महाशक्तिरूपा श्रीसारदा देवी
विभिन्न देवताओं के कुछ इष्ट बीजमन्त्र देकर कहा था—'देखती हो
लोग अज्ञानान्धकार में कीटों के समान किलबिला रहे हैं।......मैं कि
कर सका हूँ? तुम्हें इससे भी अधिक काम करना होगा। ये सभी
मन्त्र हैं, जिसे जिसे दोगी वे सभी मुक्त हो जायेंगे। अन्तिम समय में
हाथ पकड़ कर उन्हें ले जाऊँगा" ॥१८९॥

सर्वासु विद्यासु निधिस्वरुपः सर्वेषु लोकेषु तमिस्रहैकः।
कीटाणुकीटेष्वपवर्गकारी स्वाभिन्नशक्तिप्रकटेष्टवीजः ॥१८९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ (टि.८७) सर्वासु विद्यासु निधि स्वरुपः - समस्त विद्याओं का आकर स्वरुप (टि.८८) सर्वेषु लोकेषु तमिस्रहैकः - विश्व के समस्त जीवों के हृदयस्थित अज्ञान नाशकारी है जिस प्रकार गहन अन्धकार को नाश करनेवाले भगवान सूर्य है (टि.८९) कीटाणुकीटेष्वपवर्गकारी - कीट से भी छोटे कीट के समान जीवों को उद्धार करने वाले (टि.९०) स्वाभिन्न शक्तिप्रकटेष्टवीजः - अभिन्नशक्तिरुपा सारदा देवी को विभिन्न देवताओं के इष्ट वीज मन्त्र प्रदान करने वाले ॥१८९॥

आशय अनुवाद - वे लौकिक और पारलौकिक सभी विद्या में पारंगत थे। वे समस्त जीवों के हृदय स्थित अज्ञाननाशकारी भगवान सूर्यस्वरुप है। कीट से भी छोटे कीट के समान जीवों के उद्धार करने के लिये उन्होंने अभिन्न शक्तिरुपा श्री सारदा देवी को विभिन्न देवताओं के कुछ इष्ट वीज मन्त्र देकर कहा था "देखती हो न? लोग अज्ञानरुपी अन्धकार में कीड़ों के समान बिलबिला रहे हैं। ... मैं कितना कितना कर सका हूँ? तुम्हें इससे भी अधिक काम करना होगा। ये सभी सिद्ध मन्त्र है जिसे जिसे दोगी सभी मुक्त हो जायेंगे। अन्तिम समय में मैं हाथ पकड़ कर उन्हें ले जाऊंगा। ॥१८९॥

पाठान्तर

वृन्दाटवीस्वर्नदिकादुलाली वृन्दारजः पूतससिद्धपीठः।
कीटाणुकीटोपमजीवतारी स्वाभिन्नशक्तिप्रकटेष्टबीजः
॥१८९।

विश्वद्वन्द्वनिवारको विश्वमङ्गलकारकः ।
विश्वातिगो विश्वहर्ता विश्वकीर्तिश्च विश्वराट् ॥१९०॥
विश्ववेदान्तधर्मज्ञो विश्वसत्कार्यदर्शकः ।
सन्दीपो/विश्वभ्रातृत्वसाधकः विश्वधर्मप्रकाशकः ।
विश्वधर्मप्रकाशकः ॐ नमः ॥१९१॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९९१) विश्वद्वन्द्वनिवारकः (समस्त विश्व के द्वन्द्वों का निवारण करने वाले), (९९२) विश्वमङ्गलकारकः विश्व के मंगलकारक, (९९३) विश्वातिगः विश्व को व्याप्त करके भी वे दसों दिशाओं में अनन्त, (९९४) विश्वहर्ता विश्व के पाप-ताप हरने वाले, (९९५) विश्वकीर्तिः समस्त विश्व में जिनकी कीर्ति परिव्याप्त है, च तथा (९९६) विश्वराट् विश्व में सर्वत्र विराजमान ॥१९०॥

आशय अनुवाद—निज साधन के प्रभाव से सर्वधर्म की मौलिक एकता प्रदर्शन द्वारा जिन्होंने अनेक शताब्दियों से प्रचलित विभिन्न धर्मावलम्बियों के विरोध तथा परस्पर के प्रति हीन-भावना रूप द्वन्द्वों को बराबर के लिए प्रशमित करके विश्व-मानवों का स्थायी तथा यथार्थ कल्याण-साधन किया है। धर्मभूमि भारत में युगों से अनेक साधकों, सिद्ध पुरुषों तथा अवतारों ने अवतीर्ण होकर विशिष्ट सिद्धान्त का स्थापन तथा मार्गविशेष का निर्देश दिया है, किन्तु श्रीरामकृष्ण देव ने एक ही जीवन में सभी मतों तथा पथों की सत्यता का प्रतिपादन करके सभी का अतिक्रमण कर कह दिया है—"जितने मत हैं, उतने ही पथ भी हैं"। अपने इस उदार कर्म के द्वारा उन्होंने विभिन्न धर्मावलम्बियों के हृदयस्थ संकुचित भाव तथा परस्पर द्वेष-जनित पाप-तापों को बराबर के लिए हर लिया है। इस कारण आज समग्र विश्व उनकी कीर्ति से उद्भासित है और वे अनन्य पुरुष के रूप से विश्ववासी के हृदयों में पूजित हो रहे हैं ॥१९०॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—(९९७) विश्ववेदान्तधर्मज्ञः विश्व के सभी धर्मों के सिद्धान्त के मर्मज्ञ, (९९८) विश्वसत्कार्यदर्शकः विश्व के सभी सत् कार्यों के प्रदर्शनकारी, (९९९) विश्वभ्रातृत्वसाधकः विश्व के सभी मनुष्यों में भ्रातृत्व स्थापनकारी, (१०००) विश्वधर्मप्रकाशकः विश्वधर्म-

लीलासंवारसंखिन्नाशेषस्वभक्तपार्षदः ।
भूभारग्लानिसंहारिश्रीरामकृष्ण एव सः ॥१९२॥

प्रकाशकः ॐ नमः विश्व के सभी धर्मों की सत्यता के प्रकाशकारी, (द्विरुक्ति ग्रन्थ-समाप्ति-ज्ञापक है। ओंकार मंगलसूचक, नमः नमस्कार-विधिद्योतक हैं) ॥१९१॥

आशय अनुवाद—संसार के सभी धर्मों का एकमात्र लक्ष्य है—ईश्वर-लाभ तथा उसके साधन त्याग, वैराग्य, तितिक्षा, सत्य, तपस्या आदि सभी धर्मों की भित्तिभूमि के वे मर्मज्ञ थे। इस चरम लक्ष्य के प्रति समकालीन मानवों को प्रोत्साहित करके तथा सभी को उस लक्ष्य तक पहुँचने का मार्ग-निर्देश करके वे वर्तमान विश्व के श्रेष्ठ शुभ कर्म का अनुष्ठान कर गये हैं।

एक ही परम पिता परमेश्वर की सन्तान मनुष्य अपने स्वरूप की विस्मृति तथा भौगोलिक और साम्प्रदायिक विभेद की विभ्रान्ति के कारण जिस हिंसा और विद्वेष को उत्पन्न कर रहे थे श्रीरामकृष्ण देव के उदार तथा सर्वधर्मसमन्वय रूप सत्य के प्रचार के फलस्वरूप वह विदूरित होता जा रहा है और सारी मनुष्य-जाति क्रमशः भ्रातृत्व-बन्धन में आबद्ध होती जा रही है। यही विश्वमानवता-सम्बन्धी श्रीरामकृष्ण का श्रेष्ठ अवदान है। सभी धर्म सत्य हैं और मानवजाति तथा विभिन्न धर्मों के भेद मिथ्या हैं—यही विश्वधर्म और यही विश्वमानवता है। श्रीरामकृष्ण इसी विश्वधर्म के प्रतीक तथा उद्गाता थे। इसी कारण वे समस्त मनुष्य जाति के नमस्य हैं ॥१९१॥

अन्वय और शब्दार्थ—लीलासंवारसंखिन्नाशेषस्वभक्तपार्षदः अपनी नरलीला संवरण के द्वारा अगणित भक्तों तथा पार्षदों को शोकसागर में निमज्जन करने वाले; सः वह, एव ही, भूभारग्लानिसंहारिश्रीरामकृष्णः पृथ्वी का पापभार तथा धर्मग्लानि का विनाश करने वाले श्रीरामकृष्ण ही थे ॥१९२॥

श्रीरामकृष्णदेवस्य लोककल्याण-कारिणः ।
स्तोत्रं सहस्रनामाख्यमेतन्निगदितं शुभम् ।।१६३।।
लीलानुक्रमिकं त्वेतन्न सर्वत्रोपवर्णितम् ।
इति-नेति-प्रसङ्गेन भक्त्युत्कर्षः समीप्सितः ।।१६४।।

आशय अनुवाद—उन्होंने अपनी अभिनव-नर-लीला-संवरण के द्वारा अगणित भक्तों तथा पार्षदवृन्दों के ही नहीं, समस्त मानवों को शोक-सागर में निमग्न कर दिया था। वे ही वर्तमान संकटमय युग में पृथ्वी के पाप-भार तथा धर्मग्लानि के विनाशक श्रीरामकृष्ण रूप में इस धराधाम में अवतरित हुए थे। वे ही वर्तमान संकटमय युग में पृथ्वी के पापभार तथा धर्मग्लानि के विनाशक श्रीराकृष्ण रूप में इस धराधाम में अवतारित हुए थे। वे ही भूभार तथा धर्मग्लानि को हटा सकते हैं और कोई नहीं ।।१६२।।

हरिः ॐ तत्सत् ।

अन्वय तथा शब्दार्थ—लोककल्याणकारिणः लोगों का कल्याण करने वाले, श्रीरामकृष्णदेवस्य श्रीरामकृष्ण देव के, एतत् यह, शुभम् मंगलजनक, सहस्रनामाख्यम् सहस्रनाम रूप आख्यायुक्त, स्तोत्रम् स्तव, हि वाक्यलंकार में, निगदितं विशेष रूप से वर्णित हुआ ।।१६३।।

आशय अनुवाद—नव युग के आदर्श की स्थापना के द्वारा समस्त विश्ववासियों के परम-कल्याण-साधक श्रीरामकृष्ण देव का यह श्रवण-मंगल सहस्र-नाम-स्तोत्र विशेष रूप से वर्णित हुआ ।।१६३।।

अन्वय तथा शब्दार्थ—एतत् यह, तु किन्तु, सर्वत्र (प्रथम से अन्त तक) सभी स्थानों में, लीलानुक्रमिकं लीला के क्रमानुसार, उपवर्णितम् विशेष रूप से वर्णित, न नहीं हुआ है, इति-नेति-प्रसंगेन (वे) इस प्रकार हैं या इस प्रकार नहीं हैं, इस प्रकार के प्रसंग के द्वारा, भक्त्युत्कर्षः भक्ति का उत्कर्ष, समीप्सितः सम्यक् रूप से अभिलषित ।।१६४।।

यो वै पठेन्नरो नित्यं शृणुयाच्छ्रावयेदथ ।
गायेद्वा भावमाश्रित्य श्रद्धाभक्ति-समन्वितः ॥१९५॥
न तस्य दुष्कृतं किञ्चिल्लेशतोऽपि स्थितिं व्रजेत् ।
जित्वा पुण्यकृतां लोकान् शश्वच्छान्तिं स चाप्नुयात् ॥१९६॥

आशय अनुवाद—श्रीरामकृष्ण के इस सहस्रनामाख्य स्तोत्र में प्रथम से अन्त तक ऊनकी समग्र लीलाओं का क्रमानुसार उत्तम रूप से वर्णन करना कठिन है। अतः उनकी इतिवाचक और नेतिवाचक कुछ लीलाओं में तथा गुणादि के स्मरण से उनकी भक्ति तथा उसका उत्कर्ष-लाभ ही इस सहस्रनामस्तोत्र-रचना का लक्ष्य है, क्योंकि वहीं भक्त-जनों का अभीष्ट है। उनकी दिव्य-लीला, भाव तथा गुणावली का विशेष रूप से स्मरण-मनन करना ही परम श्रेयस्कर है, वह सर्वसम्मत है। अतः क्रमहानि को दोष अथवा प्रत्यवाय का कारण नहीं कहा जा सकता ॥१९४॥

अन्वय तथा शब्दार्थ——यः जो, नरः मनुष्य, श्रद्धाभक्तिसमन्वितः श्रद्धा-भक्तियुक्त (हो कर), भावम् एकाग्रभाव, आश्रित्य आश्रय करके, नित्यम् प्रतिदिन, वै निश्चय, पठेत् पढ़ेगा, शृणुयात् सुनेगा, अथ अथवा, श्रावयेत् सुनायेगा, वा या, गायेत् गायेगा, तस्य उसका, हि अवश्य ही, किञ्चित् कुछ भी, दुष्कृतम् पाप, लेशतः लेशमात्र, अपि भी, न नहीं, स्थितिर्व्रजेत् रह पायेगा, सः वह, पुण्यकृताम् पुण्यवानों के, लोकान् लोकों को, जित्वा विजय करके, शश्वत् शाश्वत (नित्य), शान्तिम् शान्ति, च पादपूरक आप्नुयात् प्राप्त करेगा ॥१९५-१९६॥

आशय अनुवाद—जो व्यक्ति श्रद्धा-भक्ति-युक्त होकर एकाग्र भाव से प्रतिदिन इस श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्र को नियम से पढ़ेगा, सुनेगा, सुनायेगा,

त/ त्रेत्रायां यश्च रामो हि श्रीकृष्णो द्वापरे स्मृतः ।
तयोरैक्येन जातः स रामकृष्णः कलौ युगे ॥१९७॥

तस्यैशापूर्वभासो निखिलनरकुल-प्रार्थिताशेषकीर्तेः
पुंसो लोकत्तरस्य ह्यमलशिशुमतेराजनिप्रौढ़कालम् ।
श्च/ दिव्याचारादरो वै चरितपरिचयो नूनमत्यन्तसारौ
सन्दिग्धे क्लिन्नकाले प्रकटमदयुते सर्वलोकामयघ्नौ ॥१९८॥

या गायेगा उसमें लेशमात्र भी पाप नहीं रहेगा। वह व्यक्ति भगवान श्रीरामकृष्ण देव की कृपा से पुण्यवानों के अभीष्ट लोकों की विजय करके नित्य शान्ति का अधिकारी होगा ॥१९५-१९६॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—यः जो, हि पादपूरण में, त्रेतायाम् त्रेता युग में, रामः श्रीरामचन्द्र, च तथा, द्वापरे द्वापर युग में, श्रीकृष्णः श्रीकृष्ण, (इस नाम से) स्मृतः स्मरणपूर्वक कीर्तित, सः वे, कलौ युगे इस कलियुग में, तयोः उन दोनों अवतारों के ऐक्येन एकत्रित भाव से, रामकृष्णः श्रीरामकृष्ण, जातः जन्मे थे ॥१९७॥

आशय अनुवाद—आदिअन्तहीन जो परम पुरुष त्रेतायुग में श्रीरामचन्द्र तथा द्वापरयुग में श्रीकृष्ण इस नाम से साधु-भक्तों के द्वारा स्मरण किये जाते हुए तथा श्रद्धा के साथ कीर्तित होते थे, उन्होंने ही इस वर्तमान कलियुग में राम और कृष्ण अवतार-युगल के ऐक्य-भाव का आश्रय करके नवीन युग-धर्म स्थापित करने के लिए श्रीराम-कृष्ण इस पुण्य नाम से रूप धारण किया था ॥१९७॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—ऐशापूर्वभासः ईश्वरीय अपूर्व दीप्तिमय, निखिल-नरकुलप्रार्थिताशेषकीर्तेः समस्त मानव जाति के द्वारा प्रार्थित तथा अनन्त कीर्तिमान्, आजनिप्रौढकालम् जन्म से प्रौढ़ काल तक, **हि यथार्थ में ही,**

परिपूज्यात्मनश्चित्रं प्रपूज्यः स्यां गृहे गृहे ।
स्वयमघोषयद्देवो यत्तत् सत्यफलं वचः ।।१६६।।

अमलशिशुमतेः सरल शिशु की तरह बुद्धियुक्त, तस्य उन, लोकोत्तरस्य अलौकिक, पुंसः पुरुषका, दिव्याचारादरः दिव्य आचरण का समादर, चरित्र-परिचयः चरित्र का परिचय, वै वाक्यलंकार में, प्रकटमदयुते उत्कृष्ट मत्तता-पूर्ण, सन्दिग्धे संदेहसमाकुलः क्लिन्नकाले पापमलिन कलियुग में, नूनम् निश्चय ही, अत्यन्तसारौ अत्यन्त फलदायक, सर्वलोकामयघ्नौ समस्त मनुष्यों के भवव्याधि नाशकारी ।।१६८।।

आशय अनुवाद—अपूर्व ईश्वरीय दीप्तिमय तथा अनन्त कीर्तिमान होने के कारण वे समस्त मुमुक्षु मनुष्यों के अत्यन्त प्रार्थना के धन थे। जन्म से प्रौढकाल तक यथार्थ में ही सरलशिशुबुद्धियुक्त होने के कारण वे एक परमाश्चर्यमय मनुष्य थे, उस अलौकिक परम पुरुष के दिव्याचरण के प्रति एकान्त समादर तथा उनके महिमामय चरित्र का परिचय पाकर सभी को श्रद्धा के साथ उनका ध्यान अवश्य करना चाहिए। उत्कटमत्ततापरिपूर्ण सन्देहसंकुल पाप-मलिन इस कलियुग में उनके परम पावन भागवत जीवन के स्वल्प मात्रा में भी अनुशीलन तथा अनुसरण के निःसन्देह तत्त्वपिपसुओं का भवरोगविनष्ट होगा और उन्हें परम शान्तिलाभ होगा। विवेकानन्द आदि श्रीरामकृष्ण के पार्षदों का यही सुचिन्तित अभिमत है ।।१६८।।

अन्वय तथा शब्दार्थ—असौ उन, देवः देवता, आत्मनः अपने, चित्रम् चित्रकी, परिपूज्य उत्तम रूप से पूजा करके, यत् जिसकी, स्वयम् स्वयं ही, अघोषयत् घोषणा की थी, गृहे-गृहे घर-घर में, प्रपूज्यः उत्तम रूप से पूजार्ह (भविष्यामि हूँगा), तत् वह, वचः वाक्य, सत्यफलम् सत्यफलदायक होता है ।।१६६।।

इत्थम्भूताभिधानाय चानुक्ताशेषवाचिने ।
सर्वथावाच्यरूपाय रामकृष्णाय ते नमः ॥२००॥

हरिः ॐ तत् सत् । इति शम् ।

श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्रम् समाप्तम् ।

इति साहित्याचार्य-एम०-ए० इत्युपाधिक-प्राध्यापक-भण्डारकरोपाह्वेन त्र्यम्बकशर्मणा तथा सप्ततीर्थ-एम० ए० विरुदभाजा-अध्यापक-श्रीपाँचुगोपाल-वन्द्योपाध्यायेन च विरचितं श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्रम् ।

इति शम् ।

आशय अनुवाद---किसी समय देवमानव श्रीरामकृष्ण ने भावावेश में फूल, चन्दन, आदि से अपने ही चित्र की पूजा करके बाद में कहा था—"समय आ रहा है जब घर-घर में यहाँ की (अर्थात् पट आदि पर प्रतिफलित मेरी मूर्ति की) पूजा होगी। उनका वह वाक्य सत्य तथा अमोघ फलप्रद हुआ है। आज यथार्थ में ही भारत तथा अन्यान्य अनेक देशों में देवालयों और अनेक गृहों में अनेक भक्त उनकी मूर्ति की श्रद्धापूर्ण पूजा करके अपने को धन्य समझ रहे हैं ॥१९९॥

अन्वय तथा शब्दार्थ—इत्थम्भूताभिधानाय इस प्रकारका नामयुक्त, अनुक्ताशेषवाचिने अकथित नामधारी, च तथा, सर्वथावाच्यरूपाय सब प्रकार से अनिर्वचनीयस्वरूप, रामकृष्णाय श्रीरामकृष्ण देव को, ते तुम्हें, नमः नमस्कार है ॥२००॥

हरि ॐ तत् सत्—मांगलिक ब्रह्मस्वरूपकथन—इति शम् ।

आशय अनुवाद— इस प्रकार सहस्रनामयुक्त तथापि जिनके नाम असंख्य या अनुक्त हैं तथा जिनके नामों की संख्या का निर्णय करना असम्भव है,

बल्कि जिनका स्वरूप अनिर्वचनीय है, उन जगत्पूज्य परम पुरुष श्रीरामकृष्ण देव के उद्देश्य से (बार बार) प्रणाम करता हूँ ॥२००॥

हरि ॐ तत् सत्—मांगलिक ब्रह्मप्रतीक मंत्र है ।

इति शम् ।

इस प्रकार अध्यापक भण्डारकर उपनामक श्रीत्र्यम्बक शर्मा साहित्याचार्य, एम० ए० तथा अध्यापक श्रीपाँचुगोपाल वन्द्योपाध्याय सप्ततीर्थ एम० ए० महोदयों के द्वारा विरचित श्रीरामकृष्ण-सहस्रनामस्तोत्र समाप्त ।

---

* आदितः शतसंख्यकाः श्लोकाः श्रीत्र्यम्बकात्मराम भण्डारकरेण शेषाश्च श्रीपाँचुगोपाल-वन्द्योपाध्यायेन विरचिता इति विज्ञातव्यम् ।

—प्रकाशकः ।

श्रीरामकृष्णसहस्रनामार्चना

१ ॐ गदाधराय नमः
२ ॐ 'गदाई'-नामकाय नमः
३ ॐ दुलालाभिधानाय नमः
४ ॐ रामकृष्णाय नमः
५ ॐ गयाविष्णूद्भवाय नमः
६ ॐ भव्याय नमः
७ ॐ बालरूपधारिणे नमः
८ ॐ कामारपुकुरानंदाय नमः
९ ॐ मातृक्रोड़शोभनाय नमः
१० ॐ सर्वेष्टाय नमः
११ ॐ सुन्दरकायाय नमः
१२ ॐ कोमलांगाय नमः
१३ ॐ विभूतिमते नमः
१४ ॐ स्मिताधराय नमः
१५ ॐ विश्वप्रियाय नमः
१६ ॐ मधुरमोहनाय नमः
१७ ॐ सद्ब्राह्मणकुलोद्भवाय नमः
१८ ॐ जनचित्तहराय नमः
१९ ॐ आनन्दनिधये नमः
२० ॐ सर्वानन्ददात्रे नमः
२१ ॐ बाललीलाचपलाय नमः
२२ ॐ दिव्यलीला प्रकटनाय नमः
२३ ॐ सर्वशान्तिकराय नमः
२४ ॐ सर्वसिद्धिदात्रे नमः
२५ ॐ सर्वेश्वराय नमः
२६ ॐ अनधीतवेदाय नमः
२७ ॐ अपराविद्यापराङ्मुखाय नमः
२८ ॐ अनुभूतचैतन्याय नमः
२९ ॐ अद्वैतसाधकाय नमः
३० ॐ अद्वैततत्त्वबोधाय नमः
३१ ॐ अदृष्टपूर्वतपोधनाय नमः
३२ ॐ अन्तःप्रविष्टविबुधाय नमः
३३ ॐ असम्प्रज्ञातसमाधिमतेनमः
३४ ॐ अशेषकृच्छ्रव्रताय नमः
३५ ॐ अखण्डसच्चिदानन्दरूपाय नमः
३६. ॐ अवलोकितसारथिकृष्णाय नमः
३७ ॐ अगणितदिव्यदर्शनाय नमः
३८ ॐ अपारमहिम्ने नमः
३९ ॐ अच्युतच्युते नमः
४० ॐ अवतारवरिष्ठाय नमः
४१ ॐ अघमोचनाय नमः
४२ ॐ अपारज्ञानाय नमः
४३ ॐ अज्ञपण्डितसमदर्शिने नमः
४४ ॐ अंगप्रलीनगौरांगाय नमः
४५ ॐ अस्पृश्योद्धारकाय नमः
४६ ॐ अपूर्वसमन्वयविधायिने नमः
४७ ॐ अपूर्वसमन्वयाचार्याय नमः

४८ ॐ अभयदात्रे नमः
४९ ॐ अज्ञेयाय नमः
५० ॐ अद्वितीयाय नमः
५१ ॐ अरूपाय नमः
५२ ॐ अमितगुणशालिने नमः
५३ ॐ अनन्तमूर्तये नमः
५४ ॐ अनादिरूपाय नमः
५५ ॐ अतिसूक्ष्माय नमः
५६ ॐ अविनाशिने नमः
५७ ॐ अगतिकगतिकाय नमः
५८ ॐ अभिलषितविधात्रे नमः
५९ ॐ अमृतस्वरूपाय नमः
६० ॐ अद्वयतत्त्वाय नमः
६१ ॐ अजस्वरूपाय नमः
६२ ॐ अनाथनाथाय नमः
६३ ॐ अमितवीर्याय नमः
६४ ॐ अद्भुताय नमः
६५ ॐ अखण्डाय नमः
६६ ॐ अजरामराय नमः
६७ ॐ अनादये नमः
६८ ॐ अनन्ताय नमः
६९ ॐ अनन्तशक्तये नमः
७० ॐ अव्यक्ताय नमः
७१ ॐ अज्ञेयाय नमः
७२ ॐ अज्ञानहारिणे नमः
७३ ॐ अखिलाभयदायकाय नमः
७४ ॐ अखिलेश्वराय नमः
७५ ॐ अनाशक्ताय नमः
७६ ॐ अतुलाय नमः
७७ ॐ अनपेक्षाय नमः
७८ ॐ अप्रमत्ताय नमः
७९ ॐ अविज्ञाताय नयः
८० ॐ अनुद्विग्नये नमः
८१ ॐ अमलप्रज्ञाय नमः
८२ ॐ अमृतसम्भवाय नमः
८३ ॐ अव्यक्ताय नमः
८४ ॐ अजेयाय नमः
८५ ॐ अहंशून्याय नमः
८६ ॐ अनन्तरूपाय नमः
८७ ॐ अखिलशास्त्रविदे नमः
८८ ॐ अव्यक्तरूपाय नमः
८९ ॐ अगाधसत्त्वाय नमः
९० ॐ अमितवीर्याय नमः
९१ ॐ अवाङ्मनसगोचराय नमः
९२ ॐ अतुलाय नमः
९३ ॐ अहेतुककृपासिन्धवे नमः
९४ ॐ अभिमानविमर्दकाय नमः
९५ ॐ अपूर्वाय नमः
९६ ॐ अस्मराय नमः
९७ ॐ अतुलप्रभाय नमः
९८ ॐ अनीशाय नमः
९९ ॐ अचलाय नमः
१०० ॐ अद्वयबोधाय नमः
१०१ ॐ अप्राकृतवपुषे नमः

१०२ ॐ अवतारिणे नमः
१०३ ॐ अलातशान्तिप्रदाय नमः
१०४ ॐ अद्भुतप्रबोधकाय नमः
१०५ ॐ अद्भुतकीर्तये नमः
१०६ ॐ अकिञ्चनाय नमः
१०७ ॐ अतिक्रान्तकुलाचाराय नमः
१०८ ॐ अचलप्रतिष्ठाय नमः
१०९ ॐ अहंकारविमर्दकाय नमः
११० ॐ अमानिने नमः
१११ ॐ अकालाय नमः
११२ ॐ अखिलबेदान्तसाधकाय नमः
११३ ॐ अमृतधाराय नमः
११४ ॐ अव्ययाय नमः
११५ ॐ आधेयाय नमः
११६ ॐ आदिदेवाय नमः
११७ ॐ आदर्शजीवनाय नमः
११८ ॐ आनन्दासनसिद्धाय नमः
११९ ॐ आप्तकामाय नमः
१२० ॐ आत्मारामाय नमः
१२१ ॐ आबाल्यशास्त्रमर्मज्ञाय नमः
१२२ ॐ आत्मतृप्ताय नमः
१२३ ॐ आदिदेवाय नमः
१२४ ॐ आनन्दस्वरूपाय नमः
१२५ ॐ आजानुबाहवे नमः
१२६ ॐ आबालबृद्धवनितातारकायनमः
१२७ ॐ उदारचरिताय नमः
१२८ ॐ ऊरुक्रमाय नमः
१२९ ॐ उर्ध्वरेतसे नमः
१३० ॐ एकान्तभावप्रियाय नमः
१३१ ॐ एकेश्वराय नमः
१३२ ॐ एकानेकरूपाय नमः
१३३ ॐ इष्टाय नमः
१३४ ॐ इस्लामखृष्टीयधर्मसाधकाय नमः
१३५ ॐ ईश्वरप्रापकाय नमः
१३६ ॐ ईशार्पितमनोबुद्धये नमः
१३७ ॐ ईश्वराय नमः
१३८ ॐ ईड्याय नमः
१३९ ॐ ईशावताराय नमः
१४० ॐ उदारधिये नमः
१४१ ॐ उदासीनाय नमः
१४२ ॐ ऋतस्वरूपाय नमः
१४३ ॐ ओं-स्वरूपाय नमः
१४४ ॐ ओंकारवेद्याय नमः
१४५ ॐ ह्रींस्वरूपाय नमः
१४६ ॐ कंठधृतरघुवरमाल्याय नमः
१४७ ॐ कामारपुकुररत्नाय नमः
१४८ ॐ कृतमृन्मयचिन्मयाय नमः
१४९ ॐ कंठच्छेदार्थधृतखड्गाय नमः
१५० ॐ कालीपूजकाय नमः
१५१ ॐ कृष्णस्वरूपाय नमः

१५२ ॐ कृतिने नमः
१५३ ॐ कालकामिनीरूपसाक्षात्कारिणे नमः
१५४ ॐ कुंडलिनीनिद्राभंजकाय नमः
१५५ ॐ करामलकीकृतसमाधये नमः
१५६ ॐ कृपामयाय नमः
१५७ ॐ कृपासिन्धवे नमः
१५८ ॐ कारणाय नमः
१५९ ॐ करुणेक्षणाय नमः
१६० ॐ कालीरूपाय नमः
१६१ ॐ ~~कर्णधाराय~~ करुणाकराय नमः
१६२ ॐ कर्त्रे नमः
१६३ ॐ कारणकारणाय नमः
१६४ ॐ करुणासागराय नमः
१६५ ॐ कालीनिवासाय नमः
१६६ ॐ करुणाधराय नमः
१६७ ॐ कामवन्धनशून्याय नमः
१६८ ॐ कलिबन्धनकृन्ताय नमः
१६९ ॐ कठोरकर्मकृते नमः
१७० ॐ करुणावरुणालयाय नमः
१७१ ॐ कृपाकटाक्षपावनाय नमः
१७२ ॐ कामकांचनास्पृष्टमानसाय नमः
१७३ ॐ कलुषविनाशिने नमः
१७४ ॐ कल्पशाखिने नमः
१७५ ॐ कल्याणकर्मकृते नमः
१७६ ॐ कृष्णावताराय नमः
१७७ ॐ करुणानिधये नमः
१७८ ॐ करुणाम्भोनिधये नमः
१७९ ॐ कुलधर्मबोधकाय नमः
१८० ॐ कर्मपाशमोचनाय नमः
१८१ ॐ कारुण्यमूर्तये नमः
१८२ ॐ कलिकल्मषनाशिने नमः
१८३ ॐ कपालमोचनाय नमः
१८४ ॐ कल्याणबीजाय नमः
१८५ ॐ करुणानिधानाय नमः
१८६ ॐ कालपाशमोचनाय नमः
१८७ ॐ कृष्णकालीरूपाय नमः
१८८ ॐ करुणावताराय नमः
१८९ ॐ क्षुधितसुभोजकाय नमः
१९० ॐ क्षमावते नमः
१९१ ॐ क्षुत्पिपासाविवर्जिताय नमः
१९२ ॐ गुणातीताय नमः
१९३ ॐ गुणाकराय नमः
१९४ ॐ गुणधाम्ने नमः
१९५ ॐ गुणधराय नमः
१९६ ॐ गुणाम्धये नमः
१९७ ॐ गतिदायकाय नमः
१९८ ॐ गीतप्रियाय नमः
१९९ ॐ सदयद्भाषणाय नमः
२०० ॐ गीतवाद्यनृत्यपटवे नमः

२०१ ॐ गङ्गाभक्तिपरायणाय नमः
२०२ ॐ गोपीभावसाधकाय नमः
२०३ ॐ गुप्तावताराय नमः
२०४ ॐ गोलक विहारिणे नमः
२०५ ॐ गौरांगवताराय नमः
२०६ ॐ गोवर्धनाद्रिसमारूढ़ाय नमः
२०७ ॐ गुणमयायाय नमः
२०८ ॐ गयाधामप्रभवे नमः
२०९ ॐ गतव्यथाय नमः
२१० ॐ गुरुमहाराजाय नमः
२११ ॐ गुणजिते नमः
२१२ ॐ गिरिशस्तुताय नमः
२१३ ॐ गुरुवे नमः
२१४ ॐ गतिहीनरक्षकाय नमः
२१५ ॐ गुणेज्याय नमः
२१६ ॐ गगनसदृशाय नमः
२१७ ॐ ज्ञानयोगप्रतिष्ठाय नमः
२१८ ॐ ज्ञानदात्रे नमः
२१९ ॐ नयाय नमः
२२० ॐ ज्ञात्रे नमः
२२१ ॐ ज्ञानरूपाय नमः
२२२ ॐ ज्ञावदानावतीर्णाय नमः
२२३ ॐ ज्ञानमार्गप्रदीपाय नमः
२२४ ॐ ज्ञानमूर्तये नमः
२२५ ॐ ज्ञानप्रकाशाय नमः
२२६ ॐ ज्ञानसूर्याय नमः
२२७ ॐ ज्ञानाञ्जनप्रदाय नमः
२२८ ॐ ज्ञानप्रदीपाय नमः
२२९ ॐ ज्ञानदाय नमः
२३० ॐ ज्ञानजनकाय नमः
२३१ ॐ ज्ञानिश्रेष्ठाय नमः
२३२ ॐ ज्ञानोद्भासकाय नमः
२३३ ॐ ज्ञानकारणाय नमः
२३४ ॐ ज्ञानाज्ञानपाराय नमः
२३५ ॐ चित्रांकनपटवे नमः
१३६ ॐ चन्द्राननाय नमः
२३७ ॐ चतुराश्रमपूजार्हाय नमः
२३८ ॐ चतुर्वर्गफ़लप्रदाय नमः
२३९ ॐ चतुर्वेदसंस्तावकाय नमः
२४० ॐ चतुर्युगन्धराय नमः
२४१ ॐ चतुःषष्ठितन्त्रसाधकाय नमः
२४२ ॐ चैतन्यसंकीर्तनदलप्रेक्षकाय नमः
१४३ ॐ चित्स्वरूपाय नमः
२४४ ॐ चिरसहचराय नमः
२४५ ॐ चतुराश्रमिणे नमः
२४६ ॐ चित्तसंशयनाशकाय नमः
२४७ ॐ चिदानन्दघनाय नमः
२४८ ॐ चक्रिणे नमः
२४९ ॐ चिन्तामणये नमः
२५० ॐ चिद्घनाय नमः
२५१ ॐ चिदम्बराय नमः

२५२ ॐ छोटभट्राज्प्रथारूढ़ाय नमः
२५३ ॐ जितपंडिताय नमः
२५४ ॐ जातशिवावेशाय नमः
२५५ ॐ जगन्मातृदर्शकाय नमः
२५६ ॐ ज्योतिर्मयदेहाय नमः
२५७ ॐ जगन्मातृबालिकारूप-दर्शिने नमः
२५८ ॐ जगदम्बासमादिष्टाय नमः
२५९ ॐ जीवदु:खासहिष्णवे नमः
२६० ॐ जिज्ञासूपदेशकाय नमः
२६१ ॐ जितलोभाय नमः
२६२ ॐ जितशशधरकान्तये नमः
२६३ ॐ ज्योतिषांज्योतिषे नमः
२६४ ॐ जननमरणविनाशाय नमः
२६५ ॐ जितसंगदोषाय नमः
२६६ ॐ जितरागद्वेषाय नमः
२६७ ॐ जयशीलाय नमः
२६८ ॐ जृम्भितयुगेश्वराय नमः
२६९ ॐ जगद्गतये नमः
२७० ॐ जगदीशाय नमः
२७१ ॐ जपागम्याय नमः
२७२ ॐ जिष्णवे नमः
२७३ ॐ जनगणोद्धारकाय नमः
२७४ ॐ जगदेकगम्याय नमः
२७५ ॐ जनदु:खनिवारकाय नमः
२७६ ॐ जगद्वन्दनाय नमः
२७७ ॐ जगदात्मने नमः
२७८ ॐ जगद्गुरवे नमः
२७९ ॐ जगत्कल्याणचिकीर्षवे नमः
२८० ॐ ज्योतिर्लीनाय नमः
२८१ ॐ जगज्जीवनाय नमः
१८२ ॐ जितकामकांचनाय नमः
२८३ ॐ जगद्भूषणाय नमः
२८४ ॐ जीवकल्याणकारिणे नमः
२८५ ॐ जगदात्मने नमः
२८६ ॐ जगन्नाथाय नमः
२८७ ॐ जड़चित्तोद्भासकाय नमः
२८८ ॐ जगद्वन्द्यपदारविन्दाय नमः
२८९ ॐ त्यक्तक्षुत्पिपासाय नमः
२९० ॐ तितिक्षापरायणाय नमः
२९१ ॐ तृणीकृतधनोपहाराय नमः
२९२ ॐ तन्मयपूजकाय नमः
२९३ ॐ तन्त्रपारगाय नमः
२९४ ॐ तीर्थभ्रमणतत्पराय नमः
२९५ ॐ तीर्थप्रियाय नमः
२९६ ॐ तीर्थस्वरूपाय नमः
२९७ ॐ तीर्थसंस्थापकाय नमः
२९८ ॐ तीर्थयाजकसमादृताय नमः
२९९ ॐ त्रिगुणरहिताय नमः
३०० ॐ त्रिभुवनाकार्षकाय नमः
३०१ ॐ त्यक्तलज्जाघृणाभयाय नमः
३०२ ॐ त्यागिशिरोमणये नमः

३०३ ॐ तक्तैषणायाय नमः
३०४ ॐ तुल्यनिन्दास्तुतये नमः
३०५ ॐ त्यक्तशुभाशुभाय नमः
३०६ ॐ त्यक्तमानापमानाय नमः
३०७ ॐ तपःपरायणाय नमः
३०८ ॐ त्रिकालातीताय नमः
३०९ ॐ त्रितापहराय नमः
३१० ॐ त्रिलोकपालकाय नमः
३११ ॐ त्रिगुणातीताय नमः
३१२ ॐ तत्त्वमस्यादिलक्ष्याय नमः
३१३ ॐ त्रिपुटीशून्याय नमः
३१४ ॐ त्रिगुणात्मने नमः
३१५ ॐ त्रयीमयाय नमः
३१६ ॐ तत्त्वबोधकाय नमः
३१७ ॐ देवीगृहीतनैवेद्याय नमः
३१८ ॐ दृढव्रताय नमः वुद्धये
३१९ ॐ देवमाल्यभूषिताय नमः
३२० ॐ दास्यभक्तिपरायणाय नमः
३२१ ॐ दृष्टज्योतिःसागराय नमः
३२२ ॐ दरिद्रनारायणसेवकाय नमः
३२३ ॐ देवीविरहसन्तापतये नमः
३२४ ॐ दृष्टश्यामारूपाय नमः
३२५ ॐ दृढव्रताय नमः
३२६ ॐ दिव्यप्रेमोन्मत्ताय नमः
३२७ ॐ दिव्यदेहाय नमः
३२८ ॐ दरिद्रदुःखसन्तप्ताय नमः
३२९ ॐ दृष्टतारकमन्त्रदाय नमः
३३० ॐ दृष्टज्योतिर्मयपुरुषाय नमः
३३१ ॐ दृष्टगोपालकृष्णाय नमः
३३२ ॐ देवस्वरूपाय नमः
३३३ ॐ दान्ताय नमः
३३४ ॐ दूरितदलनाय नमः
३३५ ॐ दीनबन्धवे नमः
३३६ ॐ दयाघनाय नमः
३३७ ॐ दिगम्बराय नमः
३३८ ॐ द्वेषशून्याय नमः
३३९ ॐ दिव्यकृतये नमः
३४० ॐ दिव्यमुखमण्डलाय नमः
३४१ ॐ दयामयाय नमः
३४२ ॐ दिव्यलक्षणाय नमः
३४३ ॐ दममण्डनाय नमः
३४४ ॐ दारिद्र्यदहनाय नमः
३४५ ॐ दुर्जनभर्त्सकाय नमः
३४६ ॐ दुर्मतिवारणाय नमः
३४७ ॐ देशिकेन्द्राय नमः
३४८ ॐ द्वन्द्वातीताय नमः
३४९ ॐ दिग्वसनाय नयः
३५० ॐ देहज्ञानरहिताय नमः
३५१ ॐ दिव्यज्ञानाय नमः
३५२ ॐ दिव्याचारिणे नमः
३५३ ॐ द्विजश्रेष्ठाय नमः

३५४ ॐ धात्रीसम्पूजिताय नमः
३५५ ॐ धार्मिकाय नमः
३५६ ॐ धर्मतत्वज्ञाय नमः
३५७ ॐ 'धनी'गृहीतभिक्षान्नाय नमः
३५८ ॐ ध्यानसिद्धाय नमः
३५९ ॐ ध्यानरूपाय नमः
३६० ॐ ध्येयाय नमः
३६१ ॐ धृतसहजसमाधये नमः
३६२ ॐ धृतनरविग्रहाय नमः
३६३ ॐ धर्मस्थापकाय नमः
३६४ ॐ ध्यानगम्याय नमः
३६५ ॐ धर्मविध्याचारनिष्ठाय नमः
३६६ ॐ धरादेवाय नमः
३६७ ॐ नारीप्रतिष्ठितदिव्यज्ञानाय नमः
३६८ ॐ नानाधर्म साधकाय नमः
३६९ ॐ नेतिनेतिसाधकाय नमः
३७० ॐ नरेन्द्रसंक्रान्ताध्यात्मशक्तये नमः
३७१ ॐ नरदेवाय नमः
३७२ ॐ निर्विकाराय नमः
३७३ ॐ नैष्कर्मसिद्धाय नमः
३७४ ॐ निर्भराय नमः
३७५ ॐ नित्याय नमः
३७६ ॐ निर्वासनाय नमः
३७७ ॐ निर्विकल्पाय नमः
३७८ ॐ निरञ्जनाय नमः
३७९ ॐ निरन्तराय नमः
३८० ॐ निखिलमाधुर्याय नमः
३८१ ॐ निर्गुणाय नमः
३८२ ॐ निष्क्रियाय नमः
३८३ ॐ नृत्यप्रियाय नमः
३८४ ॐ नरदुःखवारणाय नमः
३८५ ॐ निर्मानिमोहाय नमः
३८६ ॐ निरीहाय नमः
३८७ ॐ निष्पापाय नमः
३८८ ॐ निष्कामकर्मयोगिने नमः
३८९ ॐ निखिलावतंसाय नमः
३९० ॐ नायकाधिराजाय नमः
३९१ ॐ नरनाथाय नमः
३९२ ॐ नानावतारमूर्तये नमः
३९३ ॐ निष्प्रपञ्चाय नमः
३९४ ॐ निरहङ्काराय नमः
३९५ ॐ प्रमोदात्मने नमः
३९६ ॐ प्रसूप्रियाय नमः
३९७ ॐ परमसुन्दराय नमः
३९८ ॐ प्रियदक्षिणेश्वराय नमः
३९९ ॐ पितृप्रियाय नमः
४०० ॐ प्रियदर्शनाय नमः

४०१ ॐ परविद्याबहुमानाय नमः
४०२ ॐ प्रेक्षितधूर्जटये नमः
४०३ ॐ प्रतिमानुभूतचेतनाय नमः
४०४ ॐ पत्नीसमारोपितमातृभावाय नमः
४०५ ॐ प्रेमाश्रुसम्बलाय नमः
४०६ ॐ पूजितदुर्गताय नमः
४०७ ॐ पूजारूपाय नम
४०८ ॐ पूज्याय नमः
४०९ ॐ पूजकाय नमः
४१० ॐ पाशमोचनाय नमः
४११ ॐ प्राणस्वरूपाय नमः
४१२ ॐ पाशमुक्ताय नमः
४१३ ॐ पराय नमः
४१४ ॐ प्रभुत्वबोधरहिताय नमः
४१५ ॐ प्राणरूपाय नमः
४१६ ॐ पितृरूपाय नमः
४१७ ॐ परमानन्ददायकाय नमः
४१८ ॐ प्राणेशाय नमः
४१९ ॐ प्रेमात्मने नमः
४२० ॐ प्रेमदात्रे नम
४२१ ॐ प्रशान्ताय ननः
४२२ ॐ प्रकृतिविकृतिशून्याय नमः
४२३ ॐ प्रणयगलितचित्ताय नमः
४२४ ॐ पूर्णरूपाय नमः
४२५ ॐ परमशरणाय नमः
४२६ ॐ पराचर्याय नमः
४२७ ॐ प्रकृतेः पराय नमः
४२८ ॐ परदुःखकातराय नमः
४२९ ॐ परमपुरुषार्थ नमः
४३० ॐ प्रेमदृष्टये नमऽ
४३१ ॐ परमतत्त्वविदे नमः
४३२ ॐ प्रेमरत्नाय नमः
४३३ ॐ परमानन्दरूपिणे नमः
४३४ ॐ पूर्णाय नमः
४३५ ॐ परमशुद्धाय नलः
४३६ ॐ प्रेमाब्धये नम.
४३७ ॐ प्रेमाधीनाय नमः
४३८ ॐ पूर्णब्रह्मणे नमः
४३९ ॐ प्राणस्वरूपाय नमः
४४० ॐ परमपित्रे नम.
४४१ ॐ प्राणकान्तये नमः
४४२ ॐ प्रेमवारिस्वरूपाय नमः
४४३ ॐ प्रेमविभूतये नमः
४४४ ॐ प्रेमधनाय नमः
४४५ ॐ प्रेभक्तिदात्रे नमः
४४६ ॐ परात्पराय नमः
४४७ ॐ परमानन्ददात्रे नमः
४४८ ॐ परब्रह्मणे नमः
४४९ ॐ प्राणारामाय नमः
४५० ॐ प्रजापतये नमः
४५१ ॐ परात्पराय नमः

४५२ ॐ प्रेमस्वरूपाय नमः
४५३ ॐ प्रेमविह्वलाय नमः
४५४ ॐ प्रमत्तपूजकाय नमः
४५५ ॐ पाशमुक्ताय नमः
४५६ ॐ पतितपावनाय नमः
४५७ ॐ पुराणपुरुषाय नमः
४५८ ॐ पूर्णावताराय नमः
४५९ ॐ पुरुषोत्तमाय नमः
४६० ॐ पतितोद्धारकाय नमः
४६१ ॐ पापहारिणे नमः
४६२ ॐ प्रेमम न्दाकिन्यै नमः
४६३ ॐ प्रभवे नमः
४६४ ॐ प्राणसखाय नमः
४६५ ॐ परिव्राजकवन्दिताय नमः
४६६ ॐ परेश्वराय नमः
४६७ ॐ पूर्णज्ञानिने नमः
४६८ ॐ पूर्णशक्तये नमः
४६९ ॐ पूर्णभक्तये नमः
४७० ॐ पूर्णयोगिने नमः
४७१ ॐ पूर्णकर्मिणे नमः
४७२ ॐ पूर्णयोगप्रकाशाय नमः
४७३ ॐ परमाय नमः
४७४ ॐ प्रार्थनार्हाय नमः
४७५ ॐ पापहारिणे नमः
४७६ ॐ परमपवित्राय नमः
४७७ ॐ प्रेमोन्मादाय नमः

४७८ ॐ प्राणकान्ताय नमः
४७९ ॐ प्रभविष्णवे नमः
४८० ॐ परमहितसाधकाय नमः
४८१ ॐ परहंसाय नमः
४८२ ॐ परधनाय नमः
४८३ ॐ प्राणधनाय नमः
४८४ ॐ प्राणारामाय नमः
४८५ ॐ प्रपन्नार्तिहराय नमः
४८६ ॐ प्रपन्नार्ण नमः
४८७ ॐ परमभागवताय नमः
४८८ ॐ प्रेमविह्व ाय नमः
४८९ ॐ प्रेमाश्रुसम्बलाय नमः
४९० ॐ परसेव्याय नमः
४९१ ॐ परमम ङ्गलाय नमः
४९२ ॐ परमार्थशालिने नमः
४९३ ॐ परमार्थसाधकाय नमः
४९४ ॐ परमार्थपराय नमः
४९५ ॐ पण्डितमूर्खसमदयाय नमः
४९६ ॐ विज्ञतपात्र नमः
४९७ ॐ बाल्याशेषसमाधिमते नमः
४९८ ॐ वैराग्यभावनाय नमः
४९९ ॐ बुद्धावतारश्रद्धधानाय नमः
५०० ॐ वीक्षितमोहनी मूर्तये नमः
५०१ ॐ बालगोपालवीक्षकाय नमः
५०२ ॐ वि सितमहाभावाय नमः
५०३ ॐ विश्वतोमुखाय नमः

५०४ ॐ विश्वतश्चक्षुषे नमः
५०५ ॐ विश्वतोहस्तये नमः ा
५०६ ॐ विश्वये नमः पे
५०७ ॐ विश्वनाभये नमः ा
५०८ ॐ विश्वेबुद्धये नमः
५०९ ॐ वेदपारंगाय नमः
५१० ॐ वेदागम्याय नमः
५११ ॐ वाच्यवाचवचनस्वरूपाय नमः क
५१२ ॐ विश्वेश्वरभावाविष्टाय नमः
५१३ ॐ वृन्दावनविहारिणे नमः
५१४ ॐ विणाश्रवणसमाधिमते नमः ी
५१५ ॐ विमलान्तराय नमः
५१६ ॐ विश्वपूजिताय नमः
५१७ ॐ विश्वपालकाय नमः
५१८ ॐ विश्वकीर्तये नमः
५१९ ॐ वेदमूर्तये नमः
५२० ॐ विश्वधात्रे नमः
५२१ ॐ विश्वस्रष्ट्रे नमः
५२२ ॐ विभवे नमः
५२३ ॐ विराजे नमः विरजसे
५२४ ॐ वांछाकल्पतरवे नमः
५२५ ॐ विहितेश्वरदर्शनाय नमः
५२६ ॐ विशेश्वराय नमः श्वे
५२७ ॐ विश्वगुरवे नमः
५२८ ॐ विश्ववीजाय नमः

५२९ ॐ विवेकप्रदाय नमः
५३० ॐ वरेण्याय नमः विज्ञानमयाय
५३१ ॐ वैष्णवाय नमः
५३२ ॐ विष्णवे नमः
५३३ ॐ वेदज्ञाय नमः
५३४ ॐ वेदवित्तमाय नमः
५३५ ॐ वृद्धश्रवसे नमः
५३६ ॐ विश्वपतये नमः
५३७ ॐ वासनावीजभर्जकाय नमः
५३८ ॐ विश्ववेदसे नमः
५३९ ॐ विश्वात्मने नमः
५४० ॐ विधात्रे नमः
५४१ ॐ विमलपरमहंसाय नमः
५४२ ॐ विश्वधर्मप्रतीकाय नमः
५४३ ॐ विश्वरूपाय नमः
५४४ ॐ विपन्निवारकाय नमः विघ्नविनाशकाय
५४५ ॐ विश्वभ्रातृत्वसाधकाय नमः
५४६ ॐ ब्रह्माविष्णुहरातिगाय नमः
५४७ ॐ ब्राह्मणचण्डालभेदरहिताय नमः
५४८ ॐ बुद्धिसाक्षिणे नमः
५४९ ॐ बहुकृते नमः
५५० ॐ ब्रह्मज्योतिषे नमः
५५१ ॐ बाह्यसंवेदनशून्याय नमः
५५२ ॐ ब्रह्मशक्त्यैक्यभावनाय नमः
५५३ ॐ विनिवृत्तकामाय नमः

५५४ ॐ व्यक्तकारुण्याय नमः
५५५ ॐ वीतरागगतये नमः
५५६ ॐ ब्रह्मस्तुत्याय नमः
५५७ ॐ ब्रह्माविष्णुहराधिवासाय नमः
५५८ ॐ ब्रह्माण्डानुस्यूताय नमः
५५९ ॐ ब्रह्मार्चनार्हाय नमः
५६० ॐ ब्रह्मार्चिताय नमः
५६१ ॐ ब्रह्मलीनबुद्धये नमः
५६२ ॐ बुधाबुधभेदबोधाय नमः T
५६३ ॐ विशालबुद्धये नमः
५६४ ॐ विधात्रे नमः ग
५६५ ॐ विशालमूर्तये नमः
५६६ ॐ विज्ञानघनाय नमः
५६७ ॐ विरिञ्चये नमः
५६८ ॐ विशुद्धसत्त्वाय नमः
५६९ ॐ विशालवक्षसे नमः
५७० ॐ विश्वव्यापिने नमः
५७१ ॐ विश्वम्भराय नमः
५७२ ॐ विविधलोकचारिणे नमः
५७३ ॐ विश्वप्रसृतकीर्तये नमः
५७४ ॐ विश्वकल्याणकृते नमः
५७५ ॐ विपत्तिवारकाय नमः
५७६ ॐ वरेण्याय नमः
५७७ ॐ बिश्वप्रभवे नमः
५७८ ॐ 'विवेक'पूजिताय नमः
५७९ ॐ विवेकोद्बोधकाय नमः
५८० ॐ विदेहमुक्ताय नमः
५८१ ॐ विश्वपावनाय नमः
५८२ ॐ विरूपाक्षये नमः
५८३ ॐ विशुद्धसत्त्वाय नमः
५८४ ॐ वेदातीताय नमः
५८५ ॐ विस्मृतसंसृतये नमः
५८६ ॐ 'भवतारिणी'-पूजकाय नमः
५८७ ॐ भावमुखस्थितये नमः
५८८ ॐ भवस्थितिपराय नमः
५८९ ॐ भावरूपाय नमः
५९० ॐ भावातीताय नमः
५९१ ॐ भक्तिदात्रे नमः
५९२ ॐ भक्तिमार्गप्रदर्शकाय नमः
५९३ ॐ भगवते नमः
५९४ ॐ भावसागराय नमः
५९५ ॐ भवबन्धनखण्डनाय नमः
५९६ ॐ भक्तेश्वराय नमः पूजिताय
५९७ ॐ भवसागरतारणाय नमः
५९८ ॐ भक्तहृदयरञ्जनाय नमः
५९९ ॐ भक्तपालकाय नमः
६०० ॐ भवकर्णधाराय नमः ज्ञानमयाय
६०१ ॐ भक्तिमूर्तये नमः
६०२ ॐ भास्वराय नमः
६०३ ॐ भक्तनायकाय नमः
६०४ ॐ भूताधिवासाय नमः घ

६०५ ॐ भुवनार्चनीयाय नम:
६०६ ॐ भूभारहरणाय नम:
६०७ ॐ भवभयापहारिणे नम:
६०८ ॐ भक्तेश्वराय नम:
६०९ ॐ भक्ताभयदात्रे नम:
६१० ॐ भक्तप्रियाय नम:
६११ ॐ भक्तपरिवृत्ताय नम:
६१२ ॐ भक्तिविलासाय नम:
६१३ ॐ भक्तबान्धवाय नम:
६१४ ॐ भक्ततारणाय नम:
६१५ ॐ भक्तप्रभवे नम:
६१६ ॐ भक्तार्चिताय नम:
६१७ ॐ भक्तहृदयवासिने नम:
६१८ ॐ भक्ताभयदात्रे नम:
६१९ ॐ भ्रमान्धकारनिवर्तकाय नम:
६२० ॐ भवेशाय नम:
६२१ ॐ भवरोगहराय नम:
६२२ ॐ भवान्तकाय नम:
६२३ ॐ भावमयाय नम:
६२४ ॐ भक्ताधीनाय नम:
६२५ ॐ भवेश्वराय नम:
६२६ ॐ भववैद्याय नम:
६२७ ॐ भूभारहारिणे नम:
६२८ ॐ भुवनपावनाय नम:
६२९ ॐ भवरोगशमनाय नम:
६३० ॐ भेदनाशिने नम:
६३१ ॐ भक्तविमोहनाय नम:
६३२ ॐ भक्तियोगसाधकाय नम:
६३३ ॐ भेदशून्याय नम:
६३४ ॐ भक्तिमूर्तये नम:
६३५ ॐ भूतेशाय नम:
६३६ ॐ भवदु:खहराय नम:
६३७ ॐ भूरिदात्रे नम:
६३८ ॐ भक्तविलासिने नम:
६३९ ॐ भवजलभेलकाय नम:
६४० ॐ भर्त्रे नम:
६४१ ॐ मनोमदखण्डनाय नम:
६४२ ॐ मूर्तिनिर्माणविश्रुताय नम:
६४३ ॐ मधुरबाल्यलीलाय नम:
३४४ ॐ माधुर्यभावाय नम:
६४५ ॐ मनुजकल्याणाय नम:
६४६ ॐ मातृपूजकाय नम:
६४७ ॐ महाभक्ताय नम:
६४८ ॐ महाशक्तये नम:
६४९ ॐ महायोगस्वरूपाय नम:
६५० ॐ महामतये नम:
६५१ ॐ महात्यागिने नम:
६५२ ॐ महायोगिने नम:
६५३ ॐ मधुरार्पितसम्पत्त्यागिने नम:
६५४ ॐ मातृरूपाय नम।
६५५ ॐ मुक्तिदाय नम:
६५६ ॐ मुक्ताय नम:

६५७ ॐ मनस्पतये नमः
६५८ ॐ मतिमलहारिणे नमः
६५९ ॐ मोहमेघापसारिणे नमः
६६० ॐ महाज्ञाननिधये नमः
६६१ ॐ महापुरुषाय नमः
६६२ ॐ ममत्वहीनाय नमः
६६३ ॐ मित्रामित्रसमदृशे नमः
६६४ ॐ महेशाय नमः
६६५ ॐ मायाश्रयाय नमः
६६६ ॐ मोक्षहेतवे नमः
६६७ ॐ मोक्षदाय नमः
६६८ ॐ महात्मने नमः
६६९ ॐ मनोहराय नमः
६७० ॐ मोक्षरूपाय नमः
६७१ ॐ मायातीताय नमः
६७२ ॐ महादेवाय नमः
६७३ ॐ मंगलाय नमः
६७४ ॐ मोहनाय नमः
६७५ ॐ मायाधीशाय नमः
६७६ ॐ मानवतारणाय नमः
६७७ ॐ महाभावस्वरूपाय नमः
६७८ ॐ मर्त्यामृताय नमः
६७९ ॐ मनोवचनैकाधाराय नमः
६८० ॐ मातृभक्ताय नमः
६८१ ॐ महैश्वर्यशालिने नमः
६८२ ॐ मायामुग्धाभयदाय नमः
६८३ ॐ मोहङ्कशाय नमः
६८४ ॐ महाभावमण्डिताय नमः
६८५ ॐ मधुरभावसिद्धाय नमः
६८६ ॐ महाभावप्रमत्ताय नमः
६८७ ॐ महाभयवारिणे नमः
६८८ ॐ माधूर्यघनमूर्तये नमः
६८९ ॐ महायोगेश्वराय नमः
६९० ॐ मूर्तिपूजारहस्यज्ञाय नमः
६९१ ॐ मान्याय नम
६९२ ॐ मायापाशविवर्जिताय नमः
६९३ ॐ मायामुग्धजीवतारकाय नमः
६९४ ॐ 'माकाली'-स्वरूपाय नमः
६९५ ॐ मतिवर्धनाय नमः
६९६ ॐ मानसातीताय नमः
६९७ ॐ मनोमदविखण्डनाय नमः
६९८ ॐ महामोहविनाशाय नमः
६९९ ॐ मदनमोहनाय नमः
७०० ॐ महातापसाय नमः
७०१ ॐ महाकालाय नमः
७०२ ॐ मधुरतमाय नमः
७०३ ॐ मन्मथशासनाय नमः
७०४ ॐ मोहमुद्गराय नमः
७०५ ॐ मानदाय नमः
७०६ ॐ महादृताय नमः
७०७ ॐ यतिसेवापराय नमः
७०८ ॐ यतिमानसरंजनाय नमः

७०९ ॐ योगसाधकप्रवराय नम।
७१० ॐ यतिजनरंजनाय नमः
७११ ॐ योगवित्तमाय नमः
७१२ ॐ योगरहस्यज्ञाय नमः
७१३ ॐ योगिध्यानगम्याय नमः
७१४ ॐ योगदाय नमः
७१५ ॐ यमिने नमः
७१६ ॐ युगकर्त्रे नमः
७१७ ॐ युगादर्शाय नमः
७१८ ॐ यत्यादर्शाय नमः
७१९ ॐ युगस्थितये नमः
७२० ॐ यतिध्येयाय नमः
७२१ ॐ युगेश्वराय नमः
७२२ ॐ योगारूढाय नमः
७२३ ॐ यतीश्वराय नमः
७२४ ॐ मायाधृतवपुषे नमः
७२५ ॐ युगावताराय नमः
७२६ ॐ योगेशाय नमः
७२७ ॐ योगागम्याय नमः
७२८ ॐ यतिप्राणाय नमः
७२९ ॐ युगप्रवर्तकाय नमः
७३० ॐ योगिने नमः
७३१ ॐ युगाचार्याय नमः
७३२ ॐ युगेश्वराय नमः
७३३ ॐ योगासनस्थिताय नमः
७३४ ॐ यतिप्रभवे नमः
७३५ ॐ योगिगम्यस्वरूपाय नमः
७३६ ॐ योगमूर्तये नमः
७३७ ॐ योगसहायकाय नमः
७३८ ॐ रतिपतिगंजनाय नमः
७३९ ॐ रिपुचयमर्दनाय नमः
७४० ॐ रामस्वरूपाय नमः
७४१ ॐ रूपाकराय मनः
७४२ ॐ रंगनाथाय नमः
७४३ ॐ रसराजाय नमः
७४४ ॐ रामकृष्णयुग्मावताराय नमः
७४५ ॐ रसतमाय नमः
७४६ ॐ रसिकप्रवराय नमः
७४७ ॐ रागादिशून्याय नमः
७४८ ॐ रंगात्मने नमः
७४९ ॐ रंगकारणाय नमः
७५० ॐ रंगकारिणे नमः
७५१ ॐ राघवम्मन्याय नमः
७५२ ॐ रामात्मने नमः
७५३ ॐ रिपुसूदननाय नमः
७५४ ॐ रसात्मकाय नमः
७५५ ॐ रामरूपधारिणे नमः
७५६ ॐ लोकपावनाय नमः
७५७ ॐ लोकप्रियाय नमः
७५८ ॐ लोकनाथाय नमः
७५९ ॐ लोकशिक्षकाय नमः
७६० ॐ लोकानुग्रहकारिणे नमः

७६१ ॐ लब्धयोगविभूतये नमः
७६२ ॐ लीलाविग्रहधराय नमः
७६३ ॐ लीलापराय नमः
७६४ ॐ लोकोत्तरपुरुषाय नमः
७६५ ॐ लीलामयाय नमः
७६६ ॐ लक्ष्मीप्रियाय नमः
७६७ ॐ शक्त्यागाराय नमः
७६८ ॐ शूद्रार्चिताय नमः
७६९ ॐ श्यामादर्शनव्याकुलाय नमः
७७० ॐ श्यामारात्रिकप्रियाय नमः
७७१ ॐ श्यामाध्यानपराय नमः
७७२ ॐ शान्ताय नमः
७७३ ॐ श्यामागतप्राणाय नमः
७७४ ॐ श्यामान्यस्तात्मभावाय नमः
७७५ ॐ श्यामावलोकाश्रुपाताय नमः
७७६ ॐ श्यामैकपरायणाय नमः
७७७ ॐ श्यामावेशकारकाय नमः
७७८ ॐ श्रीगौरांगासनरूढ़ाय नमः
७७९ ॐ 'शिख'धर्मतत्त्वविदे नमः
७८० ॐ श्रुतिसंस्तुतये नमः
७८१ ॐ शीतातपोदासीनाय नमः
७८२ ॐ शुद्धिदाय नमः
७८३ ॐ शक्ताय नमः
७८४ ॐ शिवाय नमः
७८५ ॐ ~~शक्तिरूपाय~~ नमः मते
७८६ ॐ ~~क्रश या~~ नमः शङ्कराय
७८७ ॐ शक्तिदाय नमः
७८८ ॐ शुक्लाम्बराय नमः
७८९ ॐ शान्तिसुखदाय नमः
७९० ॐ श्रुतिसारविदे नमः
७९१ ॐ शिशुमतये नमः
७९२ ॐ शक्तिसिन्धुतरंगाय नमः
७९३ ॐ शान्तिदानावतीर्णाय नमः
७९४ ॐ शमनदमनकारिणे नमः
७९५ ॐ शान्तिवारिधिस्वरूपाय नमः
७९६ ॐ शुद्धबुद्धिप्रदात्रे नमः
७९७ ॐ शुद्ध~~भक्तये~~ नमः वृद्धये
७९८ ॐ शुद्धबोधस्वरूपाय नमः
७९९ ॐ शुभाकांक्षिणे नमः
८०० ॐ शुभकृते नमः
८०१ ॐ शुभदाय नमः
८०२ ॐ शुचये नमः
८०३ ॐ शुभनाम्ने नमः
८०४ ॐ शुभागाराय नमः
८०५ ॐ शुभाशिषे नमः
८०६ ॐ शिवदर्शनाय नमः
८०७ ॐ शुभाविने नमः
८०८ ॐ 'श्रीजी'-नामकाय नमः
८०९ ॐ शरण्याय नमः
८१० ॐ शोभितक्षौणये नमः
८११ ॐ शान्तादिभावसाधकाय नमः
८१२ ॐ श्यामश्यामाशिवगीतपटवे नमः

८१३ ॐ शिवार्पितमनसे नमः
८१४ ॐ शुभ्राय नमः
८१५ ॐ शिवमयाय नमः
८१६ ॐ शान्तमूर्तये नमः
८१७ ॐ शरणागतपालकाय नमः
८१८ ॐ शान्तिदाय नमः
८१९ ॐ शमभण्डनाय नमः
८२० ॐ शोकहारिणे नमः
८२१ ॐ शोभनांगाय नमः
८२२ ॐ शक्तिरूपाय नमः
८२३ ॐ श्रवणमंगलाय नमः
८२४ ॐ शिवकालीस्वरूपाय नमः
८२५ ॐ शान्तधर्मद्वन्द्वाय नमः
८२६ ॐ शान्तिसंस्थापकाय नमः
८२७ ॐ शुद्धभक्तये नमः
८२८ ॐ शमादिषट्सम्पत्तिमते नमः
८२९ ॐ श्रुतिधराय नमः
८३० ॐ शमनशासकाय नमः
८३१ ॐ षण्मासनिर्निमेषाय नमः
८३२ ॐ सुखाब्धये नमः
८३३ ॐ सुरवन्दिताय नमः
८३४ ॐ सदाधाराय नम
८३५ ॐ सर्वसन्तापहारिणे नमः
८३६ ॐ सुचारुवाचे नमः
८३७ ॐ सुधामधुरनाम्ने नमः
८३८ ॐ समाकृष्टजनाय नमः
८३९ ॐ सुमधुरस्वराय नम
८४० ॐ सुतीक्ष्णधिये नमः
८४१ ॐ सुवेणीबद्धकुन्तलाय नमः
८४२ ॐ सत्यव्रताय नमः
८४३ ॐ संसारासारतादर्शिने नमः
८४४ ॐ सदाशिवसमाविष्टाय नमः
८४५ ॐ संकीर्तननृत्यपराय नमः
८४६ ॐ समाराधितषोड़शीकाय नमः
८४७ ॐ सर्वदेवदेवीस्वरूपाय नमः
८४८ ॐ साधकचक्रवर्तिने नमः
८४९ ॐ सर्वत्रदृष्टवासुदेवाय नमः
८५० ॐ सम्पादितविरजोमूर्तये नमः
८५१ ॐ सख्यभावसाधकाय नमः
८५२ ॐ सन्दृष्टषोड़शीमूर्तये नमः
८५३ ॐ स्वीकृतब्राह्मणीगुरवे नमः
८५४ ॐ सर्वधर्मप्रियाय नमः
८५५ ॐ सांगविलीनराधिकाय नमः स्व
८५६ ॐ साक्षात्कृताम्बिकाय नमः
८५७ ॐ सन्दृष्टरामसौमित्रये नमः
८५८ ॐ सीतारूपसाक्षात्कारिणे नमः
८५९ ॐ सर्वतीर्थस्वरूपाय नमः
८६० ॐ संदृष्टदैवताय नमः
८६१ ॐ सुधीन्द्रसेविताय नमः
८६२ ॐ स्वांगविलीनविश्वेश्वराय नमः

८६३ ॐ साक्षात्कृतस्वर्णकाशीधाम्ने नमः
८६४ ॐ सन्देहनाशकाय नमः
८६५ ॐ स्पर्शमत्रसमाधिदात्रे नमः
८६६ ॐ सर्वधर्मसमर्थकाय नमः
८६७ ॐ स्मतृकल्मषनाशकाय नमः
८६८ ॐ सदाशुचये नमः
८६९ ॐ सर्वजातिकृपापराय नमः
८७० ॐ सत्यात्मने नमः
८७१ ॐ सत्यविग्रहाय नमः
८७२ ॐ सत्यपरायणाय नमः
८७३ ॐ सर्वतोभद्राय नमः
८७४ ॐ सर्वशक्तये नमः
८७५ ॐ सद्‌बुद्धिदाय नमः
८७६ ॐ सर्वाधाराय नम
८७७ ॐ स्थितिरूपाय नमः
८७८ ॐ स्वात्मपतये नमः
८७९ ॐ सदानन्दाय नमः
८८० ॐ साधुमित्राय नमः
८८१ ॐ सत्स्वरूपाय नमः
८८२ ॐ सनातनाय नम
८८३ ॐ सम्प्रदायविहीनाय नमः
८८४ ॐ सम्प्रदायानुगताय नमः
८८५ ॐ सर्वांगाय नमः
८८६ ॐ सर्वसाक्षिणे नमः
८८७ ॐ सर्वकल्याणकारिणे नमः
८८८ ॐ सच्चिदानन्दमूर्तये नमः
८८९ ॐ सर्वशक्तिदात्रे नमः
८९० ॐ सर्वभावस्वरूपाय नमः
८९१ ॐ सिद्धकामाय नमः
८९२ ॐ सृष्टिकर्त्रे नमः
८९३ ॐ स्वल्पाक्षरज्ञानिने नमः
८९४ ॐ संकीर्तनविस्मृतात्मनेनमः
८९५ ॐ सर्वसन्देहवारणाय नमः
८९६ ॐ साकारनिराकाराय नमः
८९७ ॐ सनातनाय नमः
८९८ ॐ संस्कृतिसमन्वयाचार्याय नमः
८९९ ॐ स्थितप्रज्ञाय नमः
९०० ॐ समाधिस्थाय नमः
९०१ ॐ सर्वाय नमः
९०२ ॐ सर्वविदे नमः
९०३ ॐ सर्वयोनये नमः
९०४ ॐ स्वयम्भवे मः
९०५ ॐ सर्वमयाय नमः
९०६ ॐ सर्वधर्मसरित्सिन्धवे नमः
९०७ ॐ सद्भक्तहृदयाश्रयाय नमः
९०८ ॐ सद्बुद्धिदाय नमः
९०९ ॐ समदृष्टये नमः
९१० ॐ सुधामयाय नमः
९११ ॐ सर्वसहाय नमः
९१२ ॐ सर्वघटाधिरूपाय नमः
९१३ ॐ सदाप्रफुल्लाय नमः

६१४ ॐ सत्यधृतधे नमः
६१५ ॐ सत्स्वरूपाय नमः
६१६ ॐ सर्वरसज्ञाय नमः
६१७ ॐ स्वयम्प्रकाशाय नमः
६१८ ॐ सुखदाय नमः
६१९ ॐ स्निग्धाय नमः
६२० ॐ साक्षिस्वरूपाय नमः
६२१ ॐ सज्जनपूजिताय नमः
६२२ ॐ सर्वस्वामिने नमः
६२३ ॐ सृष्टिरूपाय नमः
६२४ ॐ सर्वधर्मस्वरूपाय नमः
६२५ ॐ सर्वार्पितप्रेम्णे नमः
६२६ ॐ सदानन्दपुरुषाय नमः
६२७ ॐ साम्यमैत्रीदिव्यदूताय नमः
६२८ ॐ सर्वधर्ममयाय नमः
६२९ ॐ सर्वभावमयाय नमः
६३० ॐ सत्कार्यतत्पराय नमः
६३१ ॐ सच्चित्रूपाय नमः
६३२ ॐ सर्वसन्तापहारकाय नमः
६३३ ॐ सर्वज्ञाय नमः
६३४ ॐ सद्गुरवे नमः
६३५ ॐ सर्वसम्प्रदायाधिनायकाय नमः
६३६ ॐ स्मरारये नमः
६३७ ॐ स्थिररूपाय नमः
६३८ ॐ स्वामिने नमः
६३९ ॐ सिद्धयोगिने नमः
६४० ॐ स्वाभिमानविमर्दकायनमः
६४१ ॐ समाधिमण्डनाय नमः
६४२ ॐ सर्वविदे नमः
६४३ ॐ सुखसागराय नमः
६४४ ॐ स्वधामराजमानाय नमः
६४५ ॐ स्मृतिधराय नमः
६४६ ॐ संश्रुतानाहतध्वनये नम.
६४७ ॐ सदानन्दाय नमः
६४८ ॐ स्मरहराय नमः
६४९ ॐ सर्वधर्मस्वरूपाय नमः
६५० ॐ सिद्धसङ्कल्पाय नमः
६५१ ॐ सर्वमंगलाय नमः
६५२ ॐ 'सारदा'सेविताय नमः
६५३ ॐ 'सारदा'जीविताय नमः
६५४ ॐ सर्वार्थसाधकाय नमः
६५५ ॐ सर्वोपाधिवर्जिताय नमः
६५६ ॐ सर्वज्ञाय नमः
६५७ ॐ संशयध्वान्तविनाशाय नमः
६५८ ॐ सर्वद्वन्द्वसहिष्णवे नमः
६५९ ॐ स्त्रीपुरुषसमकृपाय नमः
६६० ॐ सकलाय नमः
६६१ ॐ सर्दवर्णाश्रमितारिणे नमः
६६२ ॐ सूरये नसः
६६३ ॐ 'हृदय'वरदाय नमः
६६४ ॐ हठयोगसिद्धाय नमः

९६५ ॐ हृदयकमलासीनाय नमः
९६६ ॐ हृत्कन्दरतमोहराय नमः
९६७ ॐ हेमकान्तये नमः
९६८ ॐ हरिहरात्मने नमः
९६९ ॐ हृदयेश्वराय नमः
९७० ॐ हृदयरञ्जनाय नमः
९७१ ॐ हृदयग्रन्थिभेदकाय नमः
९७२ ॐ कथामृतप्रवर्षिणे नमः
९७३ ॐ धर्मग्लानिविदूरकाय नमः
९७४ ॐ अपूर्वसत्यनिष्ठाय नमः
९७५ ॐ धर्ममेघसमाधिमते नमः
९७६ ॐ अवाधितज्ञानाय नमः
९७७ ॐ स्वेच्छावृतासाध्यरोगाय नमः
९७८ ॐ निन्दिताहंभावाय नमः
९७९ ॐ त्रिपुटीलयकारिणे नमः
९८० ॐ रासमणीष्टसाधकाय नम
९८१ ॐ ब्रह्मरसनिमज्जकाय नमः
९८२ ॐ गुरुगणापूर्तिवारकाय नमः
९८३ ॐ प्रमाणपुरुषाय नमः
९८४ ॐ जीवशिववादिने नमः
९८५ ॐ उदारधर्माध्ववर्दशिने नमः
९८६ ॐ परमगुरवे नमः
९८७ ॐ परापरगुरवे नमः
९८८ ॐ परमेष्ठिगुरवे नमः
९८९ ॐ त्यागैश्वर्याय नमः
९९० ॐ त्यगगमण्डनाय नमः
९९१ ॐ धर्मद्वन्द्वनिवारकाय नमः
९९२ ॐ धर्मसंघाधिनायकाय नमः
९९३ ॐ मातृभावोद्बोधकाय नमः
९९४ ॐ मातृनामसम्बलाय नमः
९९५ ॐ द्वैताद्वैतमार्गचारिणे नमः
९९६ ॐ प्रणामयोगाचाराय नमः
९९७ ॐ विश्वराजे नमः
९९८ ॐ महातेजसे नमः
९९९ ॐ महाचेतसे नमः
१००० ॐ विश्वधर्मप्रकाशकाय नमः
विश्वधर्मप्रकाशकाय नमः
१००१ ॐ ज्ञानसुधाकराय नमः
१००२ ॐ अमृतरसधाराय नमः
१००३ ॐ उपरतिमण्डनाय नमः
१००४ ॐ नित्यानन्दप्रदाय नमः
१००५ ॐ निर्विकल्पसमाधिदाय नमः
१००६ ॐ दिव्यरसप्रसूतये नमः
१००७ ॐ रसमयाय नमः
१००८ ॐ अखण्डविलीनाय नमः

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

इति अध्यापक श्रीपाँचुगोपालवन्द्योपाध्याय-एम. ए. तर्कतीर्थ-विरचित
श्रीरामकृष्णसहस्रनामार्चना समाप्ता ।

संक्षिप्त पूजन का क्रम

(१) आसन पर बैठा कर देवता को प्रणाम, (२) आचमन, (३) गन्ध-पुष्पादि का अर्चन, (४) सूर्यार्घ्य-दान, (५) सामान्यार्घ्य (देवीजी के पूजन के समय निम्नमुख त्रिकोण मण्डल रचना कर्तव्य है। (६) द्वारदेवता का पूजन, इसके बाद ही विग्रह का स्नान। (७) विघ्नापसारण, (८) भूतापसारण, (९) भूमिशुद्धि, (१०) आसनशुद्धि, देवीजी के पूजन के समय निम्नमुख त्रिकोण की बिधि है, (११) गुर्वादि-प्रणाम, (१२) करशुद्धि, (१३) पुष्पशुद्धि, (१४) तालत्रय, (१५) दशदिग्बन्धन, (१६) अपने को आग की दीवार से घिरे रहने का चिन्तन, (१७) गुरुओं की पूजा और संक्षिप्त भूतशुद्धि, (१८) व्यापक न्यास और जीवन्यास, (१९) मातृकान्यास, (२०) प्राणायाम (उन उन देवताओं के मन्त्रों से, (२१) ऋष्यादिन्यास, (२२) करन्यास, (२३) अंगन्यास, (२४) ध्यान (कूर्ममुद्रामें फूल लेकर), (२५) मानसपूजा, (२६) विशेषार्घ्य-स्थापन (देवीजी के पूजन में निम्नमुख त्रिकोण), (२७) पीठदेवताओं की पूजा, (२८) पुनर्ध्यान, (२९) पंचोपचारों, दशोपचारों या षोड़शोपचारों के द्वारा पूजन, (३०) पुष्पाञ्जलि-प्रदान (३१) जप-समर्पण; (३२) स्तोत्रादिका पाठ, आत्मसमर्पण तथा साष्टांग प्रणाम।

यहाँ यह विशेष है कि—(१) एक ही आसन पर बैठकर विभिन्न देव-देवियों यथा ˚वाणेश्वर, ˚गोपाल, ˚महावीर, ˚कालीमाता, श्रीरामकृष्ण, श्री सारदा देवी, स्वामीजी आदि का पूजन करना चाहें तो आचमन तथा सामान्यार्घ्य से लेकर कराङ्गन्यास तक अलग-अलग बार-बार करने की आवश्यकता नहीं है। नित्यपूजा में जीवन्यास तथा ऋष्यादिन्यास करने का प्रयोजन नहीं है, (२) वाणलिङ्ग-शिव के ऊपर सभी देवदेवियों की पूजा करने की विधि है। (३) पंचोपचार—गन्ध, पुष्प, (वेलपत्ती, तुलसीपत्ती

तथा माला), धूप, दीप, नैवेद्य (पानीय, आचमनीय तथा ताम्बूल), प्रणाम। (४) दशोपचार - पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नानीय, गन्ध, पुष्प, (बेलपत्ती, तुलसीपत्ती तथा माला) धूप, दीप, नैवेद्य (पानीय, आचमनीय, ताम्बूल। प्रणाम।

श्रीरामकृष्णदेवजी की नित्यपूजाविधि—

नित्यपूजा का श्रेष्ठ समय पूर्वाह्ण (८ से ६ बजे के भीतर)। नहाने के बाद शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजास्थान में जाकर सिंहासन में प्रतिष्ठित पट या मूर्ति के सामने पूर्वमुख या उत्तर मुख होकर आसन में बैठकर देवता के उद्देश्य में प्रणाम, बाद में आचमन करना चाहिये।

आचमन-विधि—दाहिने हाथ के गोकर्णाकार करतल में अंगुष्ठा के मूलदेश में एक उर्द की दाल डूबनै लायक जल लेकर ॐ विष्णुः ॐ विष्णुः ॐ विष्णुः मन्त्र पाठकर तीन बार उस जल का पान करना चाहिये। हर एक बार उतनी मात्रा में ही जल लेना चाहिये। बाद में हाथ धोकर दाहिने हाथ के अंगूठे के मूलदेश द्वारा दक्षिण और वाम क्रम से मिलित ओष्ठाधर का दो बार मार्जन करना चाहिये। बाद में तर्जनी, मध्यमा और अनामिका के सम्मिलित अग्रभागों के द्वारा ओष्ठाधर का स्पर्श करना चाहिये और अंगूठे और तर्जनी से नासापुटद्वय का स्पर्श करना चाहिये। इसके बाद अंगूठे और अनामिका के द्वारा आँखों और कानों का स्पर्श करना चाहिये। बाद में अंगूठे और कनिष्ठा के अग्रभागों से नाभिदेश का स्पर्श करना चाहिये। इसके बाद हाथ धोकर करतल के द्वारा वक्षस्थल का स्पर्श करना चाहिये। बाद में समस्त अंगुलियों के अग्रभागों द्वारा मस्तक और बाहुमूल का स्पर्श करना चाहिये। बाद में विष्णुस्मरणमूलक मन्त्र का पाठ करना चाहिये—"ॐ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततम्।" इसके बाद हाथ जोड़कर ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यान्तरः शुचिः॥ ॐ सर्वमंगल-

मंगल्यं वरेण्यं वरदं शुभम् । नारायणं नमस्कृत्य सर्वकर्माणि कारयेत् ॥" इस मन्त्र का पाठ करके देवता के उद्देश्य से प्रणाम करना चाहिये ।

इसके बाद 'एतेभ्यो गन्धपुष्पादिभ्यो नमः' मन्त्र से गन्धपुष्पादि की अर्चना करनी चाहिये । तीन बार पूर्वोक्त मन्त्र से गन्ध-पुष्पादि के ऊपर जल प्रोक्षण करना चाहिये । बाद में सूर्यार्घ्यदान—*

सूर्यार्घ्यदान की विधि—अर्घ्यपात्र में अर्घ्य सजाकर निम्नोक्त मन्त्र पाठ करना चाहिये—"ॐ नमो विवस्वते ब्रह्मन् भास्वते विष्णुतेजसे जगत्सवित्रे शुचये सवित्रे कर्मदायिने पषोऽर्घ्यः ॐ श्रीसूर्याय नमः" बाद में ताम्रपात्र में उस अर्घ्य को डालकर सूर्य को प्रणाम करना चाहिये । "ॐ जवाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् । ध्वान्तारिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ।"

सामान्यार्घ्य-स्थापन—आसन के सामने जमीन में जल के द्वारा पहले एक ऊर्ध्वमुख त्रिकोण अंकन करना चाहिये, उसके बाहर एक वृत्त, उसके बाहर एक चतुष्कोण मण्डल अंकन करना चाहिये । उसके ऊपर "एते गन्धपुष्पे ॐ आधारशक्तये नमः, ...ॐ कूर्माय नमः, ...ॐ अनन्ताय नम, ...ॐ पृथिव्यै नमः, ...ॐ प्रकृत्यै नमः" मन्त्रों से गन्धपुष्पों के द्वारा पूजन करना जाहिये । बाद में 'अस्त्रायं फट्' मन्त्र से अर्घ्यपात्र को धोकर पहले किये हुए त्रिकोण पर रखकर 'नमः' मन्त्र से अर्घ्यपात्र को तीन भाग जल से पूर्ण करना चाहिये । बाद में 'ॐ' मन्त्र से उसमें गन्ध-पुष्प-तुलसीपत्र डालकर वेलपत्र, त्रिपत्र दूर्वा, चावल तथा गन्ध पुष्पों के द्वारा अर्घ्य बनाकर अर्घ्यपात्र के अग्रभाग में रखकर पश्चात् जलशुद्धि करनी चाहिये ।

जलशुद्धि—दाहिने हाथ में अंकुशमुद्रा के द्वारा अर्घ्यपात्र का जलस्पर्शकर के "ॐ गंगे च जमुने चैव गोदावरि सरस्वति नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु;' मन्त्र से सूर्यमण्डल से तीर्थों का आवाहन

* दाहिना हाथ फैलाकर जल छिड़कने को प्रोक्षण कहा जाता है ।

करके 'वं' मन्त्र से धेनुमुद्रा दिखाकर तथा 'हुँ' मन्त्र से अवगुण्ठनी मुद्रा दिखाकर मत्स्यमुद्रा के द्वारा अर्घ्यपात्र के जल का आच्छादन करके 'ॐ' मन्त्र का दस-बार जप करके उस जल के द्वारा द्वारदेश में तीन-बार अभ्युक्षण के पश्चात् "एते गन्धपुष्पे ॐ द्वारदेवताभ्यो नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ वास्तुपुरुषाय नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ ब्रह्मणे नमः" मन्त्र से पूजन करना चाहिये। इसके बाद पट या विग्रह का स्नान कराना चाहिये।

बाद में ऐं मूल मन्त्र में दिव्यदृष्टि के द्वारा 'दिव्य विघ्न, अस्त्राय फट्' मन्त्र से अन्तरीक्ष में जल के द्वारा अभ्युक्षण कर के 'अन्तरीक्ष-विघ्न और बायें पैर के गुल्फ से जमीन में तीन बार आघात करके भूमिविघ्न का अपसारण करना चाहिये।* इसके बाद बायें हाथ में थोड़ासा चावल लेकर 'अस्त्राय फट्' मन्त्र का ७ बार जप करके "ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया"—मन्त्र पाठ करके नाराच मुद्रा के द्वारा उन चावलों को चारों ओर बिखेर देना चाहिये। इसके बाद दाहिने हाथ में थोड़ा जल लेकर "ॐ रक्ष रक्ष हूँ फट् स्वाहा" मन्त्र से मुट्ठी के भीतर से निकाले हुए जल से भूमि का शोधन करना चाहिये।

आसन शुद्धिः—आसन के नीचे जल के द्वारा ऊर्ध्वमुख त्रिकोण मण्डल बनाकर गन्धपुष्पों के द्वारा पूजन करना चाहिये—"एते गन्धपुष्पे ॐ ह्रीं आधारशक्तये कमलासनाय नमः।" बाद में आसन स्पर्श करके "अस्य आसनमन्त्रस्य मेरुपृष्ठ-ऋषिः, सुतलं छन्दः कूर्मो देवता, आसनोपवेशने विनियोगः" कहकर हाथ जोड़ करके "ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता। त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।" इस मन्त्र का पाठ करके कृताञ्जलि होकर वामकर्ण में ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ परमगुरुभ्यो नमः, ॐ परापरगुरुभ्यो नमः, ॐ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः, दक्षिणकर्णे ॐ गणेशाय नमः, ऊर्ध्वे ॐ ब्रह्मणे नमः पीछे की ओर ॐ क्षेत्रपालाय नमः,

* काशी में पदाघात करना निषिद्ध है अतः वाम हस्त के द्वारा जमीन में आघात करना ही प्राचीनों का अभिमत है।

अधः ॐ अनन्ताय नमः, सामने ॐ ऐं सर्वदेवदेवी-स्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से प्रणाम करना चाहिये।

करशुद्धिः—एक सचन्दन पुष्प को हाथ में लेकर 'ऐं रं अस्त्राय फट्' मन्त्र से दोनों हथेलियों के द्वारा पीस और सूँघ कर 'हेंसौ' मन्त्र से बायीं तरफ फेंक देना चाहिये।

पुष्पशुद्धि—पुष्पों के ऊपर दाहिना हाथ रखकर "ॐ पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पसम्भवे। पुष्पचयावकीर्णे च हुँ फट् स्वाहा" इस मन्त्र का पाठ करना चाहिये।

इसके बाद 'फट्' मन्त्र से ऊर्ध्व अधः में तालत्रय देकर और दस दिशाओं में चुट्की देकर दिग्बन्धन करके 'रं' मन्त्र से अपने चारों ओर जलधारा देकर अपने को आग की दीवारों से घिरा हुआ हूँ, ऐसा चिन्तन करना चाहिये।

गुर्वादिकी पूजा—हर एक बार हाथ में गन्धपुष्प लेकर—'एते गन्धपुष्पे ॐ गुरुभ्यो नमः, ॐ गणेशाय नमः, ॐ शिवादि-पंचदेवताभ्यो नमः, ॐ इन्द्रादिदशदिक्पालेभ्योनमः, ॐ आदित्यादि-नवग्रहेभ्यो नमः, ॐ दशावतारेभ्यो नमः, ॐ दशमहाविद्याभ्यो नमः, ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः, ॐ सर्वाभ्यो देवीभ्यो नमः—मन्त्रों से पूजन करना चाहिये।

संक्षिप्त भूतशुद्धिः—नीचे लिखे हुए मन्त्र पाठपूर्वक इष्टदेव का चिन्तन कर लेने से ही भूतशुद्धि होती है। 'ॐ मूलशृंगाटाच्छिरः सुषुम्नापथेन जीवः शिवं परमशिवपदे योजयामि स्वाहा, ॐ यं लिंगशरीरं शोषय शोषय स्वाहा, ॐ रं संकोचशरीरं दह दह स्वाहा, ॐ परम-शिवपदे सुषुम्नापथेन मूलशृंगाटकमुल्लसोल्लस ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल सोऽहं हंसः स्वाहा।'

व्यापकन्यासः—मूल मन्त्र जप करते हुए दोनों हाथ फैलाकर मस्तक से लेकर दोनों पैर तक अंगुलियों के द्वारा स्पर्श करके पुन उसी तरह विपरीत क्रम से पैर से मस्तक तक तीन बार, पाँच बार, सात बार, या नव बार हाथ संचालन करना चाहिये।

जीवन्यासः—वक्षःस्थल में हाथ रखकर ॐ आं ह्रीं कों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंस श्रीरामकृष्णदेवतायाः प्राणा, इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं ... जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं ... सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। बाद में अपने को देवतामय चिन्तन करना चाहिये।

मातृकान्यासः—(हाथ जोड़कर) अस्य मातृकामन्त्रस्य ब्रह्म ऋषिर्गायत्रीं छन्दो देवीमातृका सरस्वतीदेवता, हलो वीजानि, स्वर्श शक्तयः, अव्यक्तं कीलकं सर्वाभीष्टसिद्धये लिपिन्यासे विनियोगः। तत्त्वमुद्रया शिरसि ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः, मुखे ॐ गायत्री-छन्दसे नमः, हृदि ॐ मातृका-सरस्वत्यै देवतायै नमः, मूलाधारे ॐ हलेभ्यो बीजेभ्यो नमः, पादयोः ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः, सर्वांगे ॐ अव्यक्तकीलकाय नमः। बाद में प्राणायाम* करके ऋष्यादिन्यास, करन्यास और अंगन्यास करना चाहिये।

---

* आसन पर सीधे बैठकर दाहिने हाथ के अंगूठे से दाहिनी नाक बन्द करके मूलमन्त्री (ऐं) चार बार मन से जप करते हुए बाईं नाक से धीरे-धीरे हवा लेनी चाहिए (यही पूरक है)। बाद में उस हाथ की अनामिका और कनिष्ठा के द्वारा बायीं नाक को रोध करके तथा श्वास रोककर सोलह बार मूलमन्त्र का जप करना चाहिये—(यही कुम्भक है)। इसके बाद अंगूठे को अलग कर आठ बार जप करते हुए दाहिनी नाक से धीरे-धीरे वायु को छोड़ना चाहिए (यही रेचक है)। इसी तरह से लगातार फिर से दाहिनी नाक से प्रारम्भ करके क्रम से पूरक, कुम्भक तथा रेचक करना चाहिये। बाद में फिर से बायीं नाक से प्रारम्भ करके पूरक, कुम्भक तथा रेचक करना चाहिये। इस प्रकार से तीन बार पूरक, कुम्भक तथा रेचक के द्वारा एक 'प्राणायाम' होता है। जो लोग समर्थ या इच्छुक हों वे ८।३२।१६ अथवा १६।६४।३२ संख्यामें भी पूर्वोक्त रीति से प्राणायाम कर सकते हैं।

ऋष्यादिन्यास* :—शिरसि 'ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः', मुखे 'ॐ गायत्री छन्दसे नमः', हृदि 'ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः।'

करन्यास—'ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः' मन्त्र से दोनों हाथों की तर्जनी के द्वारा दानों अंगूठों को स्पर्श करें। 'रां तर्जनीभ्यां स्वाहा' मन्त्र से दोनों अंगूठों के द्वारा दानों तर्जनियों को, 'मं मध्यमाभ्यां वषट्' मन्त्र से दानों अंगूठों के द्वारा मध्यमा, 'कृं अनामिकाभ्यां हुँ' मन्त्र से दानों अंगूठों के द्वारा दोनों अनामिका, 'ष्णां कनिष्ठाभ्यां वषट्' मन्त्र से दानों अंगूठों के द्वारा दानों कनिष्ठाओं को और 'ॐ ऐं रामकृष्णकरतलपृष्ठाभ्यामस्त्राय फट्' मन्त्र से तर्जनी और मध्ममा के द्वारा वाम करतल पर आघात करना चाहिये।

अंगन्यासः—'ऐं हृदयाय नमः' मन्त्र से तर्जन्यादि तीन अंगुलियों के द्वारा वक्षस्थल का स्पर्श करना चाहिये। 'रां शिरसे स्वाहा' मन्त्र से तर्जनी और मध्यमा के द्वारा मस्तक 'मं शिखायै वषट्' मन्त्र से अंगूठे के अग्रभागद्वारा शिखा, 'कृं कवचाय हूँ' मन्त्र से सारी अंगुलियों के द्वारा विपरीत क्रम से बाहुमूलद्वय तथा 'ष्णां नेत्राभ्यां वौषट् मन्त्र से दाहिने हाथ की तर्जनी, मध्यमा और अनामिका के द्वारा दोनों आँखों तथा नासामूल को स्पर्श करना चाहिये तथा 'ऐं रामकृष्ण-करतल-पृष्ठाभ्यामस्त्राय फट्' मन्त्र से वाम करतल में आघात करना चाहिये।

ध्यान और मानसपूजा—कूर्ममुद्रा से एक फूल लेकर हृदय में ज्योतिर्मय मूर्ति की चिन्ता करते हुए इस ध्यानमन्त्र का पाठ करना चाहिये:—

हृदयकमलमध्ये राजितं निर्विकल्पम्।
सदसदखिलभेदातीतमेकस्वरूपम्।
प्रकृतिविकृतिशून्यं नित्यमानन्दमूर्तिम्।
विमलपरमहंसं रामकृष्णं भजामः॥१॥

---

* बहुतों का यह मत है कि नित्यपूजा में जीवन्यास और ऋष्यादिन्यास करने की आवश्यकता नहीं है।

† यह ध्यानमन्त्र श्रीमत्स्वामी अभेदानन्द महाराज के द्वारा रचित है।

निरुपममतिसूक्ष्मं निष्प्रपंचं निरीहम्
गगनसदृशमीशं सर्वभूताधिवासम् ।
त्रिगुणरहितसच्चिद् ब्रह्मरूपं वरेण्यं
विमलपरमहंसं रामकृष्णं भजामः ॥२॥

इसके बाद उस फूल को अपने मस्तक में देकर श्रीरामकृष्णजी का ध्यान और मानस पूजा करनी चाहिये। मानसपूजा की विधि है—ज्योतिर्मय श्रीरामकृष्णदेवजी को हृदयकमल में आसन देना चाहिये, सहस्रार से निकले हुए अमृतरूपी पाद्य उनके श्रीचरणों में देना चाहिये। मनरूपी अर्घ्य तथा उस अमृत की ही आचमनीय और स्नानीय के रूप में कल्पना करनी चाहिये, आकाशतत्त्व को वस्त्र, पृथिवीतत्त्व को गन्ध, चित्त को पुष्प, प्राण को धूप, तेजस्तत्व का दीप, सुधाम्बुधि को नैवेद्य, अनाहतध्वनि को घण्टा, वायुतत्त्व को चाँवर के रूप में कल्पना करनी चाहिये। बाद में अमाया, अनहंकार, अराग, अमद, अमोह, अदम्भ, अद्वेष, अक्षोभ, अमात्सर्य और अलोभ इन दसप्रकार के फूलों के द्वारा अभ्यन्तर में पूजन करना चाहिये और स्नान, भोगनिवेदन इत्यादि की भावना करके पूजक को कम से कम गुरुके दिये हुए मन्त्र का बारह बार जप करके पूजा में व्रती होना चाहिये।

विशेषार्घ्य-स्थापन — *अपने बायीं तरफ जल से ऊर्ध्वमुख त्रिकोण, उसके ऊपर वृत्त, उसके ऊपर चतुष्कोण-मण्डल बनाकर हर एक बार गन्धपुष्प लेकर 'एते गन्धपुष्पे ॐ आधारशक्तये नमः, ॐ कूर्माय नमः, ॐ अनन्ताय नमः, ॐ पृथिव्यै नमः' मन्त्रों से मण्डल का पूजन करके उसके उपर त्रिपदिका को स्थापन करके 'हूँ फट्' मन्त्र से शंख को धोकर उसके ऊपर स्थापन करना चाहिये। बाद में मूलमन्त्र (ऐं) से तीन बार जल के द्वारा शंख का तीन भाग पूर्ण करना चाहिये तथा गन्ध-पुष्प के द्वारा पूजन करना चाहिये—'ॐ मं वह्निमण्डलाय दशकलात्मने नमः'

* पञ्चोपचार या दशोपचार के पूजन में विशेषार्घ्य की आवश्यकता नहीं होती।

इस मन्त्र के द्वारा त्रिपादिका की, 'ॐ अं अर्कमण्डलाय द्वादशकलात्मने नमः' मन्त्र से शंख को, ॐ ऊं सोममण्डलाय षोड़शकलातमने नमः' मन्त्र से शंखस्थ जल को। बाद में गन्धपुष्प के द्वारा "ॐ श्रीरामकृष्णदेवस्य षड़ंगदेवताभ्यो नमः" मन्त्र से शंखस्थ जल में पूजन करना चाहिये। इसके वाद अर्घ्य सजाकर शंख के अग्रभाग में रखकर अंकुशमुद्रा के द्वारा 'गंगे च यमुने इत्यादि मन्त्र के द्वारा तीर्थोंका आवाहन करना चाहिये। बाद में आवाहन्यादि मुद्राओं के द्वारा देवता को शंखस्थ जल में आवाहन करना चाहिये--'श्रीरामकृष्णदेव इहागच्छ, इहागच्छ, इह तिष्ठ, इह तिष्ठ, इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व, इह सन्निरुद्धस्व, इह सन्निहितो भव, इह सन्निहितो भव'। बाद में हाथ जोड़कर "अत्राधिष्ठानं कुरु, मम पूजां गृहाण।" बाद में 'हूँ' मन्त्र से अवगुण्ठनी मुद्रा, 'वषट्' मन्त्र से गालिनी मुद्रा, 'वौषट् मन्त्र से अर्घ्य का दर्शन और मत्स्यमुद्रा के द्वारा शंख को आच्छादित करके आठ बार मूल मन्त्र का जप करना चाहिये तथा शंख का कुछ जल अर्घ्यपात्र में डालकर उस जल के द्वारा अपने मस्तक में तथा पूजोपकरण में अभ्युक्षण करना चाहिये। (अधोमुख दक्षिण हस्त के द्वारा जल की छिट्टा देने को अभ्युक्षण कहते हैं)। फिर से ध्यानपूर्वक पञ्चोपचार या दशोपचार से पूजन करना चाहिये।

पंचोपचार विधि—गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य। (पानीय, आचमनीय और ताम्बूल) और प्रणाम।

दशोपचार विधि—एतत्पाद्यं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः'। (पाद्य दो बार देना चाहिये) इसी प्रकार एषोऽर्घ्यं... नमः, इदं आचमनीयोदकं ·····नमः, इदं स्नानीयोदकं·····नमः, एष गन्धः ·····नमः, एतत्सचन्दनपुस्पं ·····नमः, एतत्सचन्दन-विल्वपत्रं ·····नमः, एतत्स-

चन्दन तुलसीपत्रं···नमः, एष धूपः···नमः, एष दीपः···नमः एतत्सोपकरण-नैवेद्यं *···नमः, इदं पानीयोदकं···नमः, इदं आचमनीयोदकं···नमः, (इदं पुनराचमनीयोदकं···नमः, एतत्ताम्बूलं नमः ॥†

---

* नैवेद्य या भोग निवेदन विधि—जमीन में त्रिकोण मण्डल के ऊपर किसी आधार के अभाव में फूल-वेलपत्ती रखकर फूल-बेलपत्ती या तुलसीपत्र से युक्त नैवेद्य या अन्नादि देवता के दाहिने, वामभाग में या सामने रखकर, इसके बाद वामहस्त से भूमि स्पर्श करके फूल या त्रिपत्र के द्वारा 'सोपकरण-नैवेद्याय या अन्नाय नमः' मन्त्र से तीन बार जल के द्वारा अभ्युक्षण करना चाहिये (नैवेद्य के साथ आमान्न अथवा घृत रहने पर 'आमान्न या सघृत' इस विशेषण को युक्त करना चाहिये)। बाद में 'ॐ ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम्। ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना' इस मन्त्र का पाठ करना चाहिये। बाद में वं मन्त्र से धेनुमुद्रा, 'हुँ' मन्त्र से अवगुण्ठनी मुद्रा और मत्स्य मुद्रा दिखाकर दाहिने हाथ के ऊपर वामहस्त निम्नाभिमुखी रखकर दस बार मूलमन्त्र जप करना चाहिये। इसके वाद 'ॐ ऐं इदं सोपेकरणनैवेद्यं या अन्न सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः' मन्त्र से जल का प्रोक्षण करना चाहिये। 'ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' मन्त्र से थोड़ा सा जल पानीय पात्र में डाल देना चाहिये। बाद में वामहस्त को उत्तानभाव से रखकर उससे 'ग्रासमुद्रा' दिखाकर दाहिने हाथ से क्रमशः प्राणादि पंचमुद्रा दिखाकर निम्नोक्त मन्त्र पाठ करना चाहिये—"ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा।"

† किसी उपकरण का अभाव होने पर उसके बदले जल, उस उपकरण का उल्लेख करके (जैसे 'पुष्पार्थोदकं) नमः मन्त्र से अर्पण करें।

इसके बाद मूलमन्त्र जप करके तीन बार पुष्पाञ्जलि प्रदान करना चाहिये। यथा "एष सचन्दनपुष्पाञ्जलिः ॐ सांगाय सावरणाय सशक्तिकाय सपार्षदाय सभक्ताय सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीमद्रामकृष्णाय नमः। बाद में मूलमन्त्र जप करके गुह्यातिगुह्यगोता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ।। मन्त्र से गोयोनि मुद्राके द्वारा देवता के दाहिने हाथ में जल समर्पण करना चाहिये। इसके बाद स्तोत्रादि पाठ करके गण्डुष-परिमित जल दाहिने हाथ में लेकर निम्नलिखित मन्त्र

बाद में जप करते करते चिन्ता करनी चाहिये कि निवेदित द्रव्य देवता ने ग्रहण कर लिया है। इसके बाद 'अमृतापिधानमसि स्वाहा' मन्त्र से थोड़ा सा जल देकर पानीय जल, पुनराचमनीय और ताम्बूलादि निवेदन करना चाहिये।

विशेष विधि---अर्घ्य त्रिपत्र, दूर्वा, अक्षत सचन्दन पुष्पों के द्वारा बनाना चानिये, अर्घ्य स्नानीय, धूप और दीप निवेदन करते समय घण्टा बजाना चाहिए। अर्घ्य देवता के मस्तक पर देना होगा, धूप देवता के नासारंध्र में आघ्राण कराना चाहिए, दीपक को देवता की दृष्टि तक देना चाहिए।

आरात्रिक विधि--अर्घ्यपात्र के वामभाग में त्रिकोण मण्डल बनाकर उसके ऊपर दीप को रखकर 'आरात्रिक दीपाय नमः' मन्त्र से तीन बार अर्चना करके मूलमन्त्र दस बार जप करना चाहिये, बाद में आसन के ऊपर दाहिना पैर रख करके खड़ा होकर बायें हाथ से घण्टा बजाते हुए आरात्रिक करना होगा। दीप, कर्पूर दीप, जलपूर्ण शंख, वस्त्र और पुष्प और चँवर के द्वारा आरति करने का नियम है। दीपमाला के द्वारा पैर में ४ बार, नाभि में दो बार, मुखमण्डल में तीन बार, सर्वाङ्ग में ७ बार आरति करने की विधि है।

पाठ करके उस जल को देवता के चरणों में अर्पण करना चाहिये। आत्म-निवेदन का मन्त्र—"मां मदीयं च सकलं श्रीरामकृष्णचरणे समर्पयामि ॐ तत् सत्।" इस मन्त्र का पाठ करके साष्टांग प्रणाम करना चाहिये।

श्रीरामकृष्ण जी का प्रणाम मन्त्र—"ॐ स्थापकाय च धर्मस्य सर्वधर्म-स्वरूपिणे। अवतार-वरिष्ठाय रामकृष्णाय ते नमः।"

श्रीश्री सारदादेवी की नित्यपूजा

श्री श्री ठाकुर जी की पूजा के बाद श्री श्री माता जी का पूजन करना चाहिए, श्री श्री माताजी की चित्र के आर्द्र वस्त्र के द्वारा मार्जन करके शुष्क वस्त्र के द्वारा पोंछ करके चन्दन आदि द्वारा शोभित करके सिंहासन पर रखना चाहिए। पूजा के प्रथम अंश बहुलतया श्री श्री ठाकुर जी की पूजा के समान ही है। आचमन, गन्धपुष्पादि की अर्चना, सूर्यार्घ्यप्रदान, सामान्यार्घ्य और विशेषार्घ्य के त्रिकोण मण्डल निम्नमुख होगा और त्रिकोण मण्डल के बीच में "ह्रीं" लिखना होगा, सामान्यार्घ्य और विशेषार्घ्य के ऊपर आठ बार जप करना होगा। गुर्वादि प्रणाम, करशुद्धि, पुष्पशुद्धि, तालत्रय, दशदिक्-बन्धन, बह्निप्राकार-वेष्टित चिन्तन, गुर्वादि की पूजा, संक्षेप भूतशुद्धि—श्री श्री ठाकुर जी की पूजा के समान

कर्पूर दीप ५ या ७ बार, शङ्ख ९ बार, हर एक तीन बार के बाद शङ्ख का जल थोड़ा सा करके जमीन में गिराना होता है। वस्त्र, पुष्प और चँवर के द्वारा तीन बार आरात्रिक करना पड़ेगा।

(लेकिन बेलुड़मठ में इन नियमों के प्रति विशेष दृष्टि न रखकर, भाव के प्रति विशेष दृष्टि रखी जाती है। देवता की सजीव उपस्थिति जानकर पूजन करना चाहिये और देवता ने पूजन ग्रहण कर लिया है—अन्तर में इस विश्वास को दृढ़ रूप से रखना चाहिये)।

ही है। (एकासन में बैठकर श्रीश्री ठाकुर जी की पूजा करके उसके बाद ही श्रीश्री माताजी की पूजा करना चाहें तो आचमनादि अलग करने की आवश्यकता नहीं है), व्यापकन्यास (ह्रीं मन्त्र से), जीवन्यास (ॐ आं ह्रीं क्रीं··· हंसः अस्याः श्रीसारदादेव्याः प्राणा इह प्राणाः इत्यादि, ॐ आं ह्रीं क्रों वाङ् मनश्चक्षुः श्रोत्र घ्राणप्राणाः इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा)। बाद में मातृकान्यास, प्राणायाम (ह्रीं मन्त्र से) अंगन्यास और करन्यास करते समय ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः इत्यादि क्रम से ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रैं, ह्रौं ह्रः मन्त्र से न्यास करना होगा।

मूलमन्त्र—"ॐ ऐं ह्रीं सर्वदेवदेवीस्वरुपिण्यै श्री सारदादेवै नमः'

गायत्री—"ॐ सारदादेव्यै विद्‌महे महादेव्यै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात् ॐ"।

बाद में कूर्म मुद्रामें एक फूल लेकर ध्यान करना होगा—"ध्यायेत् हृत्पद्मासने आसीनाम् करुणामयीम् स्मिताननां शान्तां देवीं भक्ताभीष्ट-दात्रीम्" भूक्ति-मुक्ति-प्रदायिनीं मातरं नित्यानन्द-करीम् प्रणमामि जगद्धात्रीं धीरां परां सारदाम्॥" बाद में उस फूल को अपने मस्तक में रखकर ज्योतिर्मयी देवी का ध्यान करना होगा। इसके बाद मानसपूजा और विशेषार्घ्य स्थापन। आवाहन्यादि मुद्रा से देवी को इस मन्त्र से जल में आवाहन करना होगा—"श्रीसारदादेवि इहागच्छ इहागच्छ" इत्यादि क्रम से।······इसके बाद पीठ-देवताओं की पूजा—"एते गन्धपुष्पे ॐ पीठदेवताभ्यो नमः, एते गन्धपुष्पे ॐ पीठ-शक्तिभ्यो नमः।"

फिर से ध्यान करके पंचोपचार या दशोपचार से निम्नलिखित मन्त्र से पूजन करना होगा। "ॐ ऐं ह्रीं एतत् पाद्यं सर्वदेवदेवी-स्वरुपिण्यै श्रीसारदादेव्यै नमः" (दो बार) ॐ ऐं ह्रीं एष अर्घ नमः। इदं स्नानीयोदकं ···· नमः"। (स्नान काल में घण्टा बजाना पड़ेगा)। "ॐ ऐं ह्रीं एषः गन्ध···नमः" "ॐ ऐं ह्रीं इदं सचन्दनपुष्पं·····नमः" "ॐ ऐं ह्रीं एतत् सचन्दन-

विल्वपत्रम्······नमः" "ॐ ऐं ह्रीं एषः धूपः······नमः"। "ॐ ऐं ह्रीं एषः दीपः······नमः"। "ॐ ऐं ह्रीं इदं (सघृतसोपकरण) -नैवेद्यं ······नमः"। निवेदन की विधि श्री श्रीठाकुर जी की पूजा के अनुरूप ही है। निवेदन के पहले नैवेद्य के ऊपर आठ बार फट् मन्त्र जप करना होगा)। "ॐ ऐं ह्रीं इदं पानीयोदकं······नमः"। "ॐ ऐं ह्रीं इदं पुनराचमनीयं······नमः"। "ॐ ऐं ह्रीं एतत् ताम्बूलम्······नमः" इसके बाद श्रीसारदा-गायत्री आठ बार पाठ करके मन से प्रार्थना करके इस मन्त्र से तीन बार पुष्पांजलि प्रदान करना होगा—यथा—"एष सचन्दन-पुष्पांजलिः ॐ ऐं ह्रीं सावरणायै स्वपार्षदायै सर्वदेवदेवीस्वरूपिण्यै श्रीसारदा-देव्यै नमः"। बाद में यथाशक्ति इष्ट-मन्त्र का जप करके निम्नलिखित विसर्जन-मन्त्र से देवी के वामहस्त में जल देकर जप विसर्जन करना होगा। मन्त्र—

"ॐ गुह्यातिगुह्य गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृत जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥"

बाद में स्तोत्रादि पाठ, आत्मनिवेदन और साष्टांग प्रणाम करना होगा। सारदादेवी का प्रणाम मन्त्र—

'यथाग्नेर्दाहिकाशक्ति रामकृष्णे स्थिता हि या।
सर्वविद्यास्वरूपां तां सारदां प्रणमाम्यहम् ॥'

इसके बाद स्तोत्रपाठ और प्रणाम करना चाहिये।—

'प्रकृतिं परमां अभयां वरदां नररूपधरां जनतापहराम्।
शरणागतसेवकतोषकरीं, प्रणमामि परां जननीं जगताम् ॥

जननीं सारदां देवीं रामकृष्णं जगद्गुरुम्।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

ॐ सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ।।
शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।

बाद में पहले की तरह आत्मसमर्पण करना होगा—केवल 'स्वरूपाय' के स्थान पर 'स्वरूपायै' और 'रामकृष्ण' के स्थान पर 'श्रीसारदादेवी' का नाम उल्लेख करना चाहिये।

(श्रीश्रीमाताजी की जन्मतिथि पूजा में 'ॐ ह्रीं जगद्धात्र्यै नमः' मन्त्र से श्रीश्रीजगद्धात्री का पूजन करना होगा।

श्रीस्वामीजी की पूजा

स्वामिजी के चित्र को मार्जन इत्यादि करके चन्दन, पुष्प एवं माल्यादि के द्वारा शोभित करके सिंहासन पर स्थापन करके एवं श्री रामकृष्णदेवजी पूजा में जैसा है ठीक वैसा ही आचमन से प्रारम्भ करके संक्षेप भूतशुद्धि तक करके—ॐ मन्त्र से व्यापकन्यास करना होगा। बाद में मातृकान्यास करके ॐ मन्त्र से प्राणायाम करना चाहिए।

करन्यास—'अंगुष्ठाभ्यां नमः, वीं तर्जनीभ्याम् स्वाहा, वुँ मध्यमाभ्यां वषट् वैं अनामिकाभ्यां हूं, वैं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, वः करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्'।

अंगन्यास—'बां हृदयाय नम, बीं शिरसे स्वाहा, बूं शिखायै वषट्, बैं कवचाय हुँ, बौं नेत्राभ्यां बौषट्, बः करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्''।

कूर्ममुद्रा में पुष्प लेकर ध्यानमन्त्र पाठ करना होगा। फूल को मस्तक में देकर ज्योतिर्मय मूर्ति का ध्यान करना होगा। मानसपूजा के बाकी अंश श्रीरामकृष्णदेवजी की पूजा के समान है। केवल विशेषार्घ्य-

स्थापन के समय 'विवेकानन्द इहागच्छ, इहागच्छ' इत्यादि क्रम से आराहन्यादि मुद्रा में देवता को जल में आबाहन करना होगा। बाद में पूर्ववत्पीठ देवताओं की पूजा का विधान है। अनन्तर ध्यान करना होगा। उपचार-निवेदन करना होगा—'ॐ श्रीमद् विवेकानन्दाय नमः' मन्त्र से समस्त उपचार निवेदन करना होगा, यथा—'एतत् पाद्यं ॐ श्रीमद्विवेकानन्दाय नमः' इत्यादि। अनन्तर पुष्पांजलि प्रदान एवं जपसमर्पण करना होगा। 'ॐ गुह्याति गु ह्य···त्वत्प्रसादात् महेश्वर'। 'ॐ श्रीमद् विवेकानन्दाय नमः इत्यादि मन्त्र से जपसमर्पण करना होगा।

अनन्तर स्तोत्रादि पाठ एवं आत्मनिवेदन—'मां मदीयं च सकलं श्रीमद्विवेकानन्द-चरणे समर्पयामि—ॐ तत्सत्'। पाठ करके साष्टांग प्रणत होना पड़ेगा।

स्वामीजी का प्रणाम मन्त्र—

नमः श्रीयतिराजाय विवेकानन्दसूरये।
सच्चित्सुखस्वरूपाय स्वामिने तापहारिणे।'

'अनित्यदृश्येषु विविच्य नित्यं, तस्मिन् समाधत्ते इहास्मलीलया।
विवेकवैराग्यविशुद्धचित्तं, यौऽसौ विवकी तमहं नमामि॥

विवेकजानन्दनिमग्नचित्तं, विवेकदानैकविनोदशीलम्।
विवेकभास्यकमनीयकान्ति, विवेकिनं तं सततं नमामि॥'

वाणेश्वर की पूजा

पहले की तरह नियम के अनुसार आचमन से लेकर द्वारदेवता का पूजन तक समस्त समाप्त करके 'वाणलिंग' का स्नापन कराना होगा, स्नान कराते समय वामहस्त से घण्टा बजाकर वाणेश्वर का स्नानमन्त्र पाठ करना होगा—'ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि पुष्टिवर्धनं, उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय'मामृतात्॥ इदं स्नानीय ऐं वाणेश्वराय शिवाय

नमः।' इस मन्त्र से स्नान कराकर वाणलिंग को यत्न से हाथ में लेकर वाणलिंग और गौरीपट्ट का जल अंगौछे से अच्छी तरह से पोंछ देना चाहिये तथा गौरीपट्ट स्थापन करके वाणलिंग को चन्दनलिप्त करके गन्धपुष्पादि से सजाना होगा।

बाद में विघ्नापसारण से लेकर क्रम से संक्षेप भूतशुद्धि तक करके 'ऐं' मन्त्र से व्यापकन्यास करना होगा।

इसके बाद पहले की तरह मातृकान्यास करके 'ऐं' मन्त्र से प्राणायाम करके अंगन्यास और करन्यास करना होगा।

करन्यास—'ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ऐं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ऐं मध्यमाभ्यां वषट्, ऐं अनामिकाभ्यां हूँ, ऐं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, ऐं करतल-पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।'

अंगन्यास—'ऐं हृदयाय नमः, ऐं शिरसे स्वाहा, ऐं शिखायै वषट्, ऐं कवचाय हूँ, ऐं नेत्रत्रयाय वौषट्, ऐं करतल-पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।'

इसके बाद कूर्ममुद्रामें एक फूल लेकर ध्यान-मन्त्र पाठ करना होगा –

'ऐं प्रमत्तं शक्तिसंयुक्तं वाणाख्यं च महाप्रभम्।
कामवाणान्वितं घोरं संसार-दहनक्षमम्।
शृंगारादिरसोल्लासं वाणाख्यं परमेश्वरम्।
एवं ध्यात्वा वाणलिंगं यजेत्तं परमेश्वरम्।'

इसी प्रकार ध्यान करके बाद में उस फूल को अपने मस्तक में रखकर देवता का ध्यान करना चाहिये। उसके बाद पहले की तरह मानसपूजा और विशेषार्घ्य-स्थापन करना होगा। वाणेश्वर इहागच्छ इहागच्छ इत्यादि क्रम से " वाणेश्वर को शङ्खस्थ जल में आवाहन्यादि मुद्रा दिखाकर आवाहन करना होगा। बाद में शंख का कुछ जल अर्घ्यपात्र में डालकर पूजा के उपकरणों और अपने मस्तक में अभ्युक्षण करके पहले की तरह पीठ-देवताओं का पूजन करना होगा। पुनः ध्यान करके पञ्चोपचार या दसोपचार से पूजन करना होगा।

दसोपचार पूजा—'एतत्वाद्यं ऐं वाणेश्वराय शिवाय नमः' इसी प्रकार से पाद्य अर्घ्यादि का निवेदन करना चाहिये। (विशेष विधि—पाद्य का दो बार निवेदन करना चाहिये, अर्घ्य-स्नानीय-धूप-दीप का निवेदन करते समय घण्टा बजाना पड़ेगा) क्रमशः त्यागार्थ मन्त्र उच्चारण करके समस्त उपचार द्रव्यों को निवेदन करना चाहिये। पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नानीय, गन्धपुष्पादि वाणलिंग के ऊपर ही निवेदन करना होता है)। बाद में 'एते गन्धपुष्पे ॐ गौर्यै नमः' इस मन्त्र से गौरीपट्ट का पूजन करना होगा।

इसके बाद 'एष सचन्दन पुष्पांजलिः ऐं वाणेश्वराय शिवाय नमः' मन्त्र से वाणेश्वर के ऊपर तीन बार पुष्पाञ्जलि देकर यथाशक्ति जप और अपनी इष्ट देवता और वाणेश्वर में अभेद भावना करके तथा पहले की तरह जप समर्पण करना होगा, पश्चात् स्तोत्रादि पाठ और आत्मसमर्पण और साष्टांग प्रणाम करना होगा! प्रणाम मन्त्र—

'ॐ वाणेश्वराय नरकार्णवतारणाय, ज्ञानप्रदाय करुणामयसागराय॥
कर्पूरकुन्द-धवलेन्दु-जटाधराय, दारिद्र्यदुःखदहनाय नमः शिवाय॥
ॐ नमः शिवाय शान्ताय कारणत्रयहेतवे, निवेदयामि चात्मानं त्वं गतिः परमेश्वर।'

इसके बाद दाहिने हाथ की तर्जनी और अंगुष्ठा के योग से दाहिने गण्ड में आघात करके 'व्योम्' 'व्योम' शब्द से पाँच बार गालवाद्य करना होता है। इसके बाद यथासाध्य अष्टांग या पञ्चांग प्रणाम करना चाहिये। विल्वपत्रदान की विधि—शिव के मस्तक में विल्वपत्र चढ़ाना चाहे तो सीधे प्रकार से न देकर उलटेरूप से देना पड़ता है।

शिवरात्रि-पूजाविधि—

नियम के अनुसार आचमनादि से प्रारम्भ करके पूजादि का अनुष्ठान

करना चाहिये। चार पहर में यथाक्रम से दूध, दही, घी तथा शहद के द्वारा शिव को स्नान कराना चाहिये।

प्रथम (पहर) प्रहर में (स्नानमन्त्र) ॐ हौं ईशानाय नमः इदं क्षीरस्नानीयं शिवाय नमः। (गंगाजल के द्वारा) ॐ नमः शिवाय इदं स्नानीयं शिवाय नमः। (अर्घ्यमन्त्र) ॐ शिवरात्रिव्रतं देव पूजाजपपरायणः। करोमि विधिवद्दत्तं गृहाणार्घ्यं महेश्वर॥ ॐ नमः शिवाय एषः अर्घ्यः शिवाय नमः मन्त्र से निवेदन करना होगा और नियमानुसार उपचारादि दान करना होगा। दूसरे पहर में (स्नानमन्त्र) ॐ हौं अघोराय नमः इदं दधिस्नानीयं शिवाय नमः। पुनः गंगाजल के द्वारा पहले की तरह स्नानीय निवेदन करना होगा। (अर्घ्यमन्त्र) ॐ नमः शिवाय शान्ताय सर्वपापहराय च। शिवरात्रौ ददाम्यर्घ्यं प्रसीद उमया सह॥ ॐ नमः शिवाय एषः अर्घ्यः शिवाय नमः मन्त्र से दान करना होगा। तीसरे पहर में (स्नानमन्त्र) ॐ हौं वामदेवाय नमः इदं आज्यस्नानीयं शिवाय नमः। पुनः गंगाजल के द्वारा पहले की तरह स्नान कराना होगा॥ (अर्घ्यमन्त्र) ॐ दुःखदारिद्र्यशोकेन दग्धोऽहं पार्वतीप्रिय। शिवरात्रौ ददाम्यर्घ्यं उमाकान्तं प्रसीद मे। पहले की तरह दान करना होगा। चौथे पहर में (स्नानमन्त्र) ॐ हौं सद्योजाताय नमः इदं मधुस्नानीयं शिवाय नमः। पूर्ववत् गंगाजल के स्नानीय देना होगा। (अर्घ्यमन्त्र)—

ॐ मया कृतान्यनेकानि पापानि हर शंकर।
शिवरात्रौ ददाम्यर्घ्यं उमाकान्त गृहाण मे॥

पूर्ववत् दान करना होगा।

हर एक पहर में पूजा-भोगनिवेदन और आरात्रिक के बाद जप, वन्दना, गालवाद्य स्तवादि पाठ करके आत्मनिवेदन करना होगा॥

श्रीमद्दक्षिणकालिकापूजा

आचमन, गन्धापुष्पादि की अर्चना, सूर्यार्घ्य, सामान्यार्घ्य (अधोमुख

त्रिकोण), द्वारदेवता की पूजा, (इसके बाद पट या विग्रह के स्नान कराने की विधि) विघ्नापसारण, भूतापसारण, भूमिशुद्धि, आसनशुद्धि, गुर्वादि प्रणाम, करशुद्धि, पुष्पशुद्धि, तालत्रय, दिग्बन्धन, वह्निप्राकार-चिन्ता, भूतशुद्धि करके जीवन्यास यथा—ॐ आं ह्रीं……श्रीमद्दक्षिणकालिकायाः प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं…… जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं… सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं…… वाङ्मनश्चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राणाः इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।'

अनन्तर 'क्रीं' मन्त्र से व्यापकन्यास, मातृकान्यास, प्राणायाम 'क्रीं' मन्त्र से। बाद में ऋष्यादिन्यास यथा—(बीज) अस्य मन्त्रस्य महाकाल-भैरव-ऋषिरुष्णिक् छन्दः, श्री दक्षिणकालिका देवता, ह्रीं बीजं, हूँ शक्तिः क्रीं कीलकं, पुरुषार्थ-चतुष्टय-सिद्धये विनियोगः। शिरसि—ॐ महाकाल-भैरवाय ऋषये नमः, मुखे, उष्णिक् छन्दसे नमः, पादयोः—'हूँ शक्तये नमः, सर्वांगे—'क्रीं कीलकाय नमः'

करन्यास—'क्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः, क्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, क्रूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्रैं अनामिकाभ्यां हूँ, क्रौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्रः करतल-पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।'

अंगन्यास—'क्रां हृदयाय नमः, क्रीं शिरसे स्वाहा, क्रूं शिखायै वषट्, क्रैं कवचाय हूँ, क्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्, क्रः करतल-पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।'

उसके बाद ध्यान एवं मानसपूजा।

ध्यान—'शवारूढां महाभीमां घोरद्रंष्टां वरप्रदां।
हास्ययुक्तां त्रिनेत्रां च कपालकर्तृकाकराम्॥
मुक्तकेशीं लोलजिह्वां पिवतीं रुधिरं मुहुः।
चतुर्बाहुयुतां देवीं वराभयकरां स्मरेत्।'

विशेषार्घ्य-स्थापन——निम्नमुख त्रिकोण मण्डल अंकित करना होता है। ॐ मन्त्र से आधार-शक्त्यादि की एवं अर्घ्यपात्र की पूजा पूर्ववत्। आवाहनादि मुद्रा में 'श्रीदक्षिण-कालिके इहागच्छ, इहागच्छ' इत्यादि क्रम से देवी का जल में आवाहन करना होगा एवं मत्स्यमुद्रा के द्वारा आच्छादन करके 'क्रीं' मन्त्र दस वार जप करना होगा। बाद में 'एते गन्धपुष्पे ॐ पीठ देवताभ्यो नमः, 'एते गन्धपुष्पे ॐ पीठ शक्तिभ्यो नमः' मन्त्र से पीठदेवताओं की पूजा करनी होगी।

अनन्तर पुनर्ध्यान एवं पञ्चोपचार या दशोपचार से पूजा करनी होगी। यथा——'एतत् पाद्यं क्रीं श्रीमद्दक्षिण-कालिकायै नमः' इसी प्रकार त्यागार्थ मन्त्र का उच्चारण करके समस्त उपचार निवेदन करना होगा।

तान्त्रिक पूजा के निवेदन करते समय पहले वीजमन्त्र उच्चारण करना होगा एवं समस्त उपचार में नमः मन्त्र का प्रयोग नहीं करना होता। दशोपचार पूजा यथा——वीज एतत् पाद्यं श्रीमद्दक्षिण-कालिकायै नमः (क्रीं) एषः अर्घ्यः श्रीमद्दक्षिण-कालिकायै स्वाहा (वीज) इदं आचमनीयं······ स्वधा। (वीज) इदं स्नानीयं निवेदयामि। (वीज) एषः गन्ध····· नमः (वीज) इदं सचन्दनपुष्पं··· वौषट्। (वीज) इदं सचन्दन विल्वपत्रं वौषट् (वीज) एषः धूपः····· नमः (वीज) एष द्वीपः······नमः (वीज) इदं नैवेद्यं······निवेदयामि। (वीज) इदं पानार्थोदकं···नमः। (वीज) इदं पूनराचमनीयं···स्वधा। (वीज) इदं ताम्बूलं···निवेदयामि। उपचार-दाने सर्वत्र—अग्रे मूलं, पश्चात् उपचार नाम, पश्चात् चतुर्थ्यन्त देवता-नाम तत्पश्चात् त्यागात्मकं वाक्यं प्रयोक्तव्यं। पौराणिक पूजाविधि में उपचार दान काले सर्वत्र 'नमः' मन्त्र का प्रयोग करना होता है।

बाद में पुष्पांजलि प्रदान, जप समर्पण, स्तोत्रादि पाठ, आत्म-निवेदन एवं साष्टांग प्रणाम पूर्व के समान।

प्रणाम मन्त्र—

ॐ सर्वमंगलमंगल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ।।
सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि ।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽतु ते ।।
शरणागत-दीनार्त-परित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्ति-हरे देवि नारायणि नमोऽतु ते ।।

श्रीगोपाल की पूजा

पूर्ववत् आचमन से द्वारदेवता की पूजा तक करके—गोपाल विग्रह को स्नान कराना होगा। 'इदं स्नानीयं क्लीं गोपालाय नमः' इस मन्त्र से स्नानीय जल विग्रह के ऊपर देना है, एवं साथ-साथ घण्टा बजाना होगा। बाद में विग्रह को अच्छी तरह से पोंछकर चन्दन, तुलसी, पुष्प एवं माल्यादि द्वारा सजाना होगा।

बाद में विघ्नापसारण से आरम्भ करके यथाक्रम से संक्षेप में भूतशुद्धि पर्यन्त करके 'क्लीं' मन्त्र से व्यापकन्यास करना होगा, उसके बाद पूर्ववत् मातृकान्यास कर 'क्लीं' मन्त्र से प्राणायाम करके करन्यास अंगन्यास करना होगा।

करन्यास—'क्लां अंगुष्ठाम्यां नमः, क्लीं तर्जनीभ्याम् स्वाहा, क्लूं मध्यमाभ्यां वषट्, क्लैं अनामिकाभ्याम् हूँ, क्लौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, क्लः करतल पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्'।

अंगन्यास—'क्लां हृदयाय नमः, क्लीं शिरसे स्वाहा, क्लूं शिखायै वषट्, क्लैं कवचाय हूँ, क्लौं नेत्राभ्यां वौषट्, क्लः करतल-पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।'

अनन्तर कूर्ममुद्रा में एक फूल लेकर ध्यानमन्त्र पाठ करना होगा— नवीन-नीरदश्यामं नीलेन्दीवर-लोचनम् । वल्लवी-नन्दनं वन्दे कृष्णं गोपालरूपिणम्' । बाद में उस फूल को मस्तक में रखकर ध्यान एवं मानसपूजा करनी होगी। पूजा के बाकी अंश पूर्ववत् ।

विशेषार्घ्य-स्थापन—'गोपाल इहागच्छ इहागच्छ' इत्यादि क्रम से आवाहन्यादि मुद्रा में गोपाल को विशेषार्घ्य के जल में आवाहन करना होगा। बाद में पीठ-देवता की पूजा पूर्ववत् करनी होगी। पुनर्ध्यान एवं पञ्चोपचार या दशोपचार पूजा करनी होगी।

'क्लीं गोपालाय नमः' मन्त्र से सकल उपचार निवेदन करना होगा। अतः पर पुष्पाञ्जलि-प्रदान, जप-समर्पण, स्तोत्रादि-पाठ, आत्म-समर्पण एवं प्रणाम पूर्व की तरह। प्रणाम मन्त्र—

नमो विज्ञानरूपाय परमानन्दरूपिणे ।
कृष्णाय गोपीनाथाय गोविंदाय नमो नमः ॥
नमः कमलनेत्राय नमः कमलमालिने ।
नमः कमलनाभाय कमलापतये नमः ॥'

महावीर की पूजा

आचमन से द्वारदेवता की पूजा पर्यन्त पूर्ववत् करके—पट या विग्रह को स्नान कराना होगा। अतःपर—संक्षेप भूतशुद्धि पर्यन्त पूर्व की तरह। 'हं' मन्त्र से व्यापकन्यास करके मातृकान्यास एवं 'हं' मन्त्र से प्राणायाम करके यथाक्रम से करन्यास एवं अंगन्यास करना होगा।

करन्यास—'हां अंगुष्ठाभ्यां नमः, हीं तर्जनीभ्यां स्वाहा, हूँ मध्यमाभ्यां वषट्, हैं अनामिकाभ्यां हूँ, हौं कनिष्ठाभ्यां वौषट्, हः करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट् ।

अंगन्यास—'हां हृदयाय नमः, हीं शिरसे स्वाहा, हूँ शिखायै वषट्, हैं कवचाय हूँ, हौं नेत्रभ्यां वौषट्, हः करतलपृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट् ।'

अनन्तर कूर्ममुद्रा में एक फूल को लेकर ध्यान करना होगा—'महाशैलं समुत्पाद्य धावन्तं रावणं प्रति, तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट घोर-रावं समुत्सृजन् ।।

लाक्षारागारुणं रौद्रं कालांतक-यमोपमम्, ज्वलदग्नि-लसन्नेत्रं सूर्यकोटि-समप्रभम् । अंगदाद्यै महावीरैर्वेष्ठितं रूद्ररूपिणम् ।।

बाद में पूर्ववत् मानसपूजा एवं विशेषार्घ्यस्थापन। 'हनूमन् इहागच्छ इहागच्छ इस मन्त्र से आवाहन्यादि मुद्रा में देवता को जल में आवाहन करना होगा। अतःपर पीठदेवता की पूजा (पूर्ववत्) एवं फिर ध्यान करके पञ्चोपचार या दशोपचार में पूजा करनी होगी। यथा—एतत् पाद्यं हं हनूमते नमः इत्यादि क्रम से सब उपचार इस त्यापार्थ मन्त्र से निवेदित होगा।

अनन्तर पुष्पांजलि प्रदान, जपसमर्पण, स्तोत्रादि पाठ, आत्म समर्पण एवं साष्टांग प्रणाम। प्रणाममन्त्र—

मनोजवं मारुत तुल्यवेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां बरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं
श्रीरामदूतं शिरसा नमामि ।।

श्री रामकृष्ण जी के षोड़शोपचार पूजा की विधि

आचमन से पुनर्ध्यान पर्यन्त पूर्ववत् करके उसके बाद उपचार निवेदन करना होगा। (१) आसन (२) स्वागत (३) पाद्य (४) अर्घ्य (५) आचमनीय (६) मधुपर्क (७) पुनराचमनीय (८) स्नानीय (९) वस्त्र (१०) आभरण (११) गन्ध (१२) पुष्प (१३) धूप (१४) दीप (१५) नैवेद्य (१६) प्रणाम।

इसके अतिरिक्त जिस जिस द्रव्य जैसे उत्तरीय, विल्वपत्र, तुलसीपत्र, माल्य, पानीय एवं ताम्बूलादि निवेदन करना है—सब ही द्रव्य उपचार अर्चना की विधि से अर्चना करके बाद में निवेदन करना होगा।

प्रति उपचार बायीं तरफ एक पात्र में रखकर बायें हाथ से स्पर्श करके दाहिने हाथ से पुष्प अथवा कुश लेकर उसके द्वारा प्रोक्षण करना होगा (दाहिना हाथ उलटकर) जैसा पहले 'रजतासन' उस आसन को बायें हाथ से स्पर्श करके दक्षिण हाथ से—ॐ बं एतस्मै रजतासनाय नमः' मन्त्र से तीन बार सामान्यार्घ्य के जल द्वारा प्रोक्षण करना होगा। बाद में गन्धपुष्प द्वारा 'एते गन्धपुष्पे ॐ रजतानाय नमः' कहकर गन्धपुष्प से आसन की पूजा करके दूसरा एक फूल लेकर 'एते गन्धपुष्पे एतदधिपतये ॐ विष्णावे नमः' मन्त्र से विष्णु की पूजा करके उस गन्धपुष्प को ताम्रपात्र के ऊपर देना होगा। बाद में पुष्प द्वारा—ॐ एतत् सम्प्रदानाय ॐ ऐं सर्वदेवदेवी-स्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से उस आसन को लेकर सामान्यार्घ्य के जल को छिड़क देना है। इसी को अर्चना कहते हैं। (प्रत्येक उपचार को इसी तरह करके निवेदन करना होगा)। अनन्तर उस आसन को दोनों हाथों में लेकर

ॐ सर्वान्तिर्यामिने देव सर्वबीजमयं परम्।

आत्मस्थाय परं शुद्धमासनं कल्पयास्यहम्॥

इदं रजतासनं ॐ ऐं सर्वदेवदेवी स्वरुपाय श्रीरामकृष्णाय नमः" मन्त्र से आसन निवेदन करना होगा, बाद में बायें हाथ के द्वारा स्पृष्ट आसन को दक्षिण हस्त की अंगुष्ठा एवं तर्जनी के द्वारा उठाकर देवताने ग्रहण किया ऐसी चिता करके उसको देवता के बायीं तरफ स्थापन करना होगा।

बाद में स्वागत—कृताञ्जलिपूट से बोलना होगा—

"ॐ यस्य दर्शनमिच्छन्ति देवाः स्वाभीष्ट सिद्धये।

तस्मै ते परमेशान स्वागतं स्वागतं च मे ॥
कृतार्थानुगृहीतोऽस्मि सफलं जीवितं मम ।
अग्रतो देवदेवेश सुस्वागतमिदं वपुः ॥

ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूप—श्रीरामकृष्ण स्वागतं सुस्वागतं ते" ॥

पाद्य—अर्घ्यपात्र के द्वारा सामान्यार्घ्य का जल लेकर उसमें अगुरु, चन्दन, अपराजिता इत्यादि देकर—आधारोपरि स्थापन करके पूर्ववत् अर्चना करके उस पाद्य को दोनों हाथों में लेकर मन्त्रपाठ करना होगा—

ॐ यद्भक्तिलेशसम्पर्कात् परमानन्दसंप्लवः ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥

एतत् पाद्यं ॐ ऐं सर्वदेवदेवी-स्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः ।" इस मन्त्र का पाठ करके देवताओं के चरणयुगल के उद्देश्य से उस पाद्य को निवेदन करना होगा ।

अर्घ्य—पूर्व स्थापित विशेषार्घ्य दोनों हाथों में लेकर मन्त्र पाठ करना होगा "ॐ तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् । तापत्रयविमोक्षाय तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम् । एषोऽर्घ्यः ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः । इस मन्त्र से देवता के मस्तक पर देना है ।

आचमनीय—अर्घ्यपात्र या अन्य पात्र में समान्यार्घ्य का जल लेकर उसमें कर्पूर, अगुरु इत्यादि देकर पूर्ववत् अर्चना करके उस आचमनीय को दोनों हाथों में लेकर मन्त्रपाठ करना है—

"ॐ देवानामपि देवाय देवानां देवतात्मने ।
आचम्यं कल्पयामीश शुद्धानां शुद्धिहेतवे ।

इदमाचमनीयं ॐ सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः" इस मन्त्र से आचमनीय निवेदन करना होगा ।

मधुपर्क—पूर्ववत् अर्चना करके मधुपर्क दोनों हाथों में लेकर "ॐ सर्व-कल्मषनाशाय परिपूर्णं सुधात्मकम् । मधुपर्कमिमं देव कल्पयामि प्रसीद मे ॥ एष मधुपर्क: ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः" मन्त्र से मधुपर्क निवेदन करना होगा । (मधुपर्क समपरिमाण मधु, घृत, दधि, चीनी कांस्य या रौप्यादि के पात्र में मिलाकर तैयार किया जाता है) ।

पुनराचमनीय—पूर्ववत् अर्चना करके पुनराचमनीय दोनों हाथों में लेकर

"ॐ उच्छिष्टमण्यशुचिर्वा यस्य स्मरणमात्रतः ।
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम् ॥

इदं पुनराचमनीयोदकं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः ॥ मन्त्र से पुनराचमनीयोदक निवेदन करना होगा ।

गन्धतैल की अर्चना करके—

"ॐ स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकनाथ महाशय ।
सर्वलोकेषु शुद्धात्मन् ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥

इदं गन्धतैलं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः"—मन्त्रं से गन्धतैल निवेदन करना होगा ।

स्नानीय—भृगंरादि के पात्र या अर्घ्यपात्र में सुरभि द्रव्य मिश्रित जल लेकर उसमें सचन्दन पुष्प एवं तुलसीपत्र निक्षेप करके पूर्ववत् अर्चनादि करके पाठ करना होगा—

"ॐ इदं सुशीतलं वारि स्वच्छं शुद्धं मनोहरम् ।
स्नानार्थं ते मया भक्त्या कल्पितं प्रतिगृह्यताम् ॥

इदं स्नानीयोदकं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से निवेदन करके वाम हस्त से घण्टा बजाकर निम्नोक्त वैदिक मन्त्र पाठ करना होगा—

"ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
संभूमिं सर्वतोवृत्वा अत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥
ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ॥
होतारं रत्न धातमम् ॥
ॐ ईषे त्वोर्जेत्वा वायवस्थः देवो वः सविताः
प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणे ॥ इत्यादि

वस्त्र की अर्चना करके— ॐ मायाचित्रपटांगाय निजगुह्यरुतेजसे ।
निरावरणविज्ञाय वासस्ते कल्पयाम्यहम् ॥

इदं वस्त्रं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः इस मन्त्र से निवेदन करना होगा ।

उत्तरीय की अर्चना करके—

ॐ यमाश्रित्य महामाया जगत्सन्मोहिनी सदा ।
तस्मै ते परमेशाय कल्पमयाम्युत्तरीयकम् ॥

इदमुत्तरीयकम् ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः इस मन्त्र से उत्तरीय का निवेदन करना होगा ।

आभरण—रजतांगुरीय-स्वर्णांगुरीय अथवा पुष्प-निर्मित आभरण आधारोपरि स्थापन करके पूर्ववत् अर्चना करके पाठ करना होगा—

ॐ स्वभाव-सुन्दरांगाय नाना-शक्त्याश्रयाय ते ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चित ॥

इदं आभरणम् ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से आभरण निवेदन करना होना ।

गन्ध—किसी पात्र या विल्वपत्र में चन्दन, अगरु इत्यादि गन्धद्रव्य एकत्र करके अर्चना पूर्वक पाठ करना होगा—

ॐ परमानन्द-सौरभ्य परिपूर्णदिगन्तरम् ।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वर ।।
शरीरं ते न जानामि चेष्टां नैव च नैव च ।
मया निवेदितान् गन्धान् प्रतिगृह्य विलिप्यताम् ।।

एषः गन्ध ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरुपाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से गन्धद्रव्य निवेदन करना होगा ।

पुष्प की अर्चना करके—

ॐ तुरीयवनसम्पन्नं नानागुणमनोहरम ।
आनन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ।।

'इदं सचन्दन पुष्पं ॐ ऐं सर्व्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः' मन्त्र से निवेदन करके ज्ञानमुद्रा से (तर्जनी एवं अंगुष्ठा के योग से) अर्पण करना होगा ।

विल्वपत्र—माल्य, सचन्दन विल्वपत्र, आधारोपरि रखकर पूर्ववत् अर्चना करके इदं सचन्दनविल्वपत्रमाल्यं ॐ ऐं सर्बदेवदेवी स्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से निवेदन करना होगा ।

ॐ अमृतोद्भवं श्रीयुक्तं महादेवप्रियं सदा ।
पत्रमाल्यं प्रयच्छामि श्रीफलीयं सुरेश्वर ।।

तुलसीपत्र—श्वेत-चन्दन-लिप्त तुलसीपत्र हाथ में लेकर 'ॐ नमस्ते बहुरूपाय विष्णवे परमातमने स्वाहा । इदं सचन्दनतुलसीपत्रं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः'—मन्त्र से विल्वपत्रदान की रीति से निवेदन करना होगा ।

माल्य की अर्चना करके—

'ॐ सूत्रेण ग्रथितं माल्यं नानापुष्पसमन्वितम् ।
मया निवेदितं भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥

इदं सुरभिमाल्यं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः' मन्त्र से माल्य निवेदन करके देवताओं को पहना देना होगा ।

धूप—प्रज्वलित धूपा आधार में स्थापन करके पूर्ववत् अर्चना कर पाठ करना होगा—

"ॐ वनस्पतिरसो दिव्यो गन्धाढ्यः सुमनोहरः ।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

एष धूपः ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः" मन्त्र से घण्टा बजाते-बजाते उस धूप को निवेदन करना होगा ।

दीप—प्रज्वलित दीप की पूर्ववत् अर्चना करके निम्नोक्त मन्त्र पाठ करना होगा—

"ॐ सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
सबाह्याभ्यन्तरज्योति दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

एषः दीपः ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीराकृष्णाय नमः—मन्त्र से निवेदन करना है ।

नैवेद्य की अर्चना करके

"ॐ नैवेद्यं परमं स्वादु शर्करादि-विनिर्मितम् ।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ॥

एतत् नैवेद्यं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः (नैवेद्य-दान की विधि के अनुसार) नैवेद्य निवेदन करना है ।

पानार्थोदक—पूर्ववत् अर्चना करके पाठ करना है—

ॐ समस्तदेवदेवेश सर्वतृप्तिकरं परम् ।
अखण्डानन्दसंपूर्णं गृहाण जलमूत्तमम् ॥

इदं पानार्थोदकंद ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से पानीय जल निवेदन करना होगा ।

पुनराचमनीय—पूर्वोक्त आचमनीय जलदान की रीति के अनुसार निवेदन करना है ।

ताम्बूल की अर्चना करके—

"ॐ तापत्रयहरं दिव्यं कर्पूरादिसुवासितम् ।
मया निवेदितं देव ताम्बूलमिदमुत्तमम् ॥

इदं ताम्बूलं ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः" मन्त्र से ताम्बूल निवेदन करना है ।

पुष्पाञ्जलि की अर्चना करके

"ॐ नानासुगन्धपुष्पाणि यथा कालोद्भवानि च ।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर ॥

एषः संचन्दनपुष्पाञ्जलिः ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः । मन्त्र से तीन बार पुष्पाञ्जलि प्रदान करना होगा । बाद में यथाशक्ति जप करके (अन्यून १०८ बार) यथारीति जप-विसर्जन पूर्वक प्रणाम करना होगा ।

बाद में आवरण पूजा करके—गन्धपुष्प के द्वारा श्रीश्रीठाकुरजी की पूजा करके तीन बार या पाँच बार पुष्पाञ्जलि देना होगा—ॐ ऐं एषः संचन्दनपुष्प-विल्वपत्राञ्जलिः सांगाय सावरणाय सशक्तिकाय सपार्षदाय सर्वदेवदेवी-स्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय नमः ।

प्रणाम—बाद में प्रणाम (साष्टांग प्रणाम ही कर्तव्य है), भोग आरती—उसके बाद यथारीति भोग निवेदन एवं आरती करके होम करना है।

श्रीरामकृष्ण जी की पूजा की संक्षेप तान्त्रिक होम विधि

पहले बालू के द्वारा एक हस्त परिमित चतुष्कोण स्थण्डिल रचना करना होगा। बाद में आचमन, सामान्यार्घ्य स्थापन, आसनशुद्धि एवं प्राणायाम करके मूलमन्त्र से स्थण्डिल वीक्षण करना होगा। बाद में 'फट्' मन्त्र से प्रोक्षण, ऐं मन्त्र से कुश द्वारा ताड़न, हूँ मन्त्र से प्रोक्षण, फट् मन्त्र से ऊर्ध-अर्ध तालत्रय के द्वारा रक्षण, मूलमन्त्र से पुष्पाञ्जलि प्रदान एवं प्रणव से अभ्युक्षण करना होगा।

बाद में स्थण्डिल के वायुकोण में तीन पूर्वाग्ररेखा एवं अग्निकोण में तीन उत्तराग्र रेखा अङ्कित करके—पूर्वाग्र रेखात्रय में "ॐ मुकुन्दाय नमः, ॐ ईशानाय नमः, ॐ पूरन्दराय नमः" मन्त्र से पुष्प द्वारा पूजन करना होगा एवं बाद में उत्तराग्र रेखात्रय में—ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ वैवस्वताय नमः, ॐ इन्दवे नमः, मन्त्र से गन्ध पुष्प के द्वारा पूजन करना होगा।

अनन्तर कुश द्वारा स्थण्डिल के बीच में एक बिन्दु, उसके ऊपर ऊर्धमुख त्रिकोण, उसके बाहर षट्कोण, बाद में गोलाकार यन्त्र एवं अष्टदल पद्म एवं उसके चारो ओर भूपुर अङ्कित करना होगा। यह ही होम की साधारण विधि है। काम की सुविधा के लिए स्थण्डिल के ऊपर पहले से ही उल्लिखित प्रकार यन्त्र अङ्कित किया जा सकता है।

स्थण्डिल की पूजा—गन्ध-पुष्प लेकर—"एते गन्धपुष्पे ॐ ऐं सर्वदेव-देवी-स्वरूप-श्रीरामकृष्णदेवस्य स्थण्डिलाय नमः" मन्त्र से स्थण्डिल की पूजा करनी होगी। उसके बाद स्थण्डिल के ऊपर यथारीति होमकाष्ठ सज्जित करके "ॐ वन्हे योगपीठाय नमः" मन्त्र से गन्ध-पुष्प द्वारा योगपीठ की पूजा करके बाद में "ॐ वामायै नमः, ॐ जेष्ठायै नमः, ॐ रौद्रयै नमः,

ॐ अम्बिकायै नमः" मन्त्र से गन्ध-पुष्प द्वारा चारों ओर पूजन करना होगा।

उसके बाद मूलमन्त्र उच्चारण करके—"ॐ ऐं श्रीरामकृष्णदेवस्य स्थण्डिलाय नमः" मन्त्र से गन्ध-पुष्प के द्वारा स्थण्डिल का पूजन करके—"एते गन्धपुष्पे ॐ आधारशक्त्यादि-पीठदेवताभ्यो नमः" मन्त्र से पीठ-देवता का पूजन करना होगा।

प्रणव के द्वारा होम के द्रव्यसमूह को अभ्यूक्षण करना होता है। बाद में अग्निकोण में "ॐ धर्माय नमः" नैऋतकोण में" ॐ "ज्ञानाय नमः" वायुकोण में "ॐ वैराग्याय नमः ईशानकोण में "ॐ ऐश्वर्याय नमः" मध्य में "ॐ अनन्ताय नमः" मन्त्र से गन्ध-पुष्प द्वारा पूजन करना है।

अनन्तर स्थण्डिल के पूर्वादि क्रमानुसार अष्टदिक् और मध्य भाग में—ॐ पीतायै नमः, ॐ श्वेतायै नमः, ॐ अरुणायै नमः, ॐ कृष्णायै नमः, ॐ धूम्रायै नमः, ॐ तीव्रायै नमः, ॐ स्फूलिंगिन्यं नमः, ॐ रुचिरायै नमः, ॐ ज्वालिन्यै नमः, ॐ रं वन्ह्यासनाय नमः मन्त्र से गन्ध-पुष्पादि के द्वारा पूजा करके वागीश्वरी का ध्यान करना है—ॐ वागीश्वरीमृतुस्नातां नीलेन्दीवरसन्निभाम्। वागीश्वरेण संयुक्तां क्रीड़ाभावसंमन्वितम्। बाद में गन्ध-पुष्प के द्वारा पूजन करना है—

"ॐ ह्रीं एते गन्धपुष्पे वागीश्वर्यै नमः।
ॐ ह्रीं एते गन्धपुष्पे वागीश्वराय नमः॥

विधिवत् अग्नि ग्रहण करके "वौषट्" मन्त्र से अवलोकन करके "फट्" मन्त्र से कुश द्वारा ताड़न, 'फट्' मन्त्र से प्रोक्षण, हूँ मन्त्र से अवगुठंन-मुद्रा प्रदर्शन, वं मन्त्र से धेनूमुद्रा द्वारा अग्निसंस्कार करके रं मन्त्र से थोड़ी-सी अग्नि लेकर हूँ फट् क्रव्यादिभ्यः स्वाहा मन्त्र से नैऋ त कोण में परित्याग करना होगा।

अनन्तर ॐ मन्त्र से दोनों हाथों से अग्नि धारण करके मण्डलोपरि तीन बार दक्षिणावर्त से घूमाकर जानुद्वय भूमिसंलग्न करके विपरीत दिशा से अपनी ओर मण्डल के मध्यस्थल में स्थापन करना होगा। बाद में रं बह्नि-मूर्तये नमः, रं बह्निचैतन्याय नमः—मन्त्रद्वय से गन्धपुष्प द्वारा पूजन करना होगा एवं ॐ चित्पिंगल हनहन दहदह पचपच सर्वज्ञाज्ञापय स्वाहा मन्त्र से ज्वालिनी मुद्रा दिखाकर अग्नि प्रज्वलित करना होगा एवं कर जोड़कर पाठ करना होगा "ॐ अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनं सुवर्णवर्ण-ममलं समिद्धं विश्वतो मुखम्"—कहकर अग्नि की उपासना करनी होगी, उसके बाद कर जोड़कर अग्नि के नामाकरण करना होगा—

"ॐ अग्ने त्वं श्रीरामकृष्ण-नामासि—"—

उसके बाद आवाहनादि पञ्चमुद्रा में अग्नि को आवाहन करना होगा—

ॐ श्रीरामकृष्ण नामाग्ने इहागच्छ, इहागच्छ इह तिष्ठ, इह तिष्ठ इह सन्निधेहि इह सन्निधेहि, इह सन्निरुद्धस्व, इह सन्निरुद्धस्व, इह संमुखीभव, इह संमुखीभव, अत्राधिष्ठानं कुरु, मम पूजां गृहाण। बाद मे "ॐ वैश्वानर जातवेद इहा वह लोहिताक्ष सर्वकर्माणि साधय स्वाहा एष गन्ध श्रीरामकृष्ण-नामाग्नये नमः—मन्त्र से यथाक्रम से पञ्चोपचार में पूजन करना होगा एवं गन्ध-पुष्प के द्वारा अग्नि की पूजा करनी होगी।

अनन्तर—"ॐ अग्नेर्हिरण्मादि सप्त जिह्वाभ्यो नमः

ॐ सहस्रार्चिषे हृदयाय नमः, इत्याद्यग्निषड़ंगेभ्यो नमः"

मन्त्रों के द्वारा गन्ध-पुष्पों से षड़ंग देवता का पूजन करना होगा—

ॐ अग्नये जातवेदसे इत्याद्यष्टमूर्तिभ्यो नमः। इसी मन्त्र से गन्ध-पुष्प द्वारा अष्टमूर्ति का पूजन करना होगा। बाद में "ॐ ब्राह्म्याद्यष्टशक्तिभ्यो नमः, मन्त्र से गन्ध-पुष्प द्वारा अष्टशक्ति का पूजन करना होगा। बाद में पद्माद्यष्टनिधिभ्यो नमः, ॐ इन्द्रादि-लोकपालेभ्यो नमः, ॐ वज्राद्यस्त्रेभ्यो नमः"। मन्त्र से गन्ध-पुष्पादि के द्वारा पूजन करना होगा, अनन्तर स्रुक्

और स्रुव (जिसके द्वारा आहुति दी जाती है) अधोमुख करके अग्नि में तपाना होगा एवं वाये हाथ में लेकर दाहिने हाथ के कुश द्वारा—अग्र, मध्य एवं मूल देश मार्जित करके जल द्वारा प्रोक्षणपूर्वक फिर से अग्नि में गरम या तप्त करके मार्जित कुश को अग्नि में निक्षेप करना है। बाद में उस स्रुक् एवं स्रुव अपने दाहिनी ओर कुश के ऊपर स्थापन करना है। बाद में घी का पात्र कुश के ऊपर रखकर फट् मन्त्र से प्रोक्षण करके उसमें घृत स्थापन करना है, बाद में बीजमन्त्र पाठ पूर्वक उस घृत को वीक्षण, फट् मन्त्र से कुश के द्वारा ताड़न, हुँ मन्त्र से प्रोक्षण फट् मन्त्र से ऊर्ध्वोऽध ताल-त्रय से रक्षण, वं मन्त्र से योनि-मुद्रा प्रदर्शन करना होगा, बाद में घृत अग्नि में गलाकर उसके ऊपर जला हुआ कुशपत्रत्रय हूँ मन्त्र से घूमाकर अग्नि में निक्षेप करना होगा। अनन्तर अर्धहस्तपरिमित कुशपत्रद्वय घृत के ऊपर स्थापन करके घृत को तीन भागों में भाग करना है एवं बायें भाग के घृत को ईड़ा, मध्य भाग को सुषुम्ना एवं दाहिने भाग को पिङ्गला भावना करके होम करना है।

नमः मन्त्र से दक्षिण भाग से घृत लेकर ॐ अग्नये स्वाहा मन्त्र से अग्नि के दाहिने नेत्र में (जहाँ पर अग्नि अल्प मात्रा में जल रही है) आहुति देनी है, बाद में नमः मन्त्र से बायें भाग से घृत लेकर ॐ सोमाय स्वाहा मन्त्र से अग्नि के बायें नेत्र में आहुति देनी है। बाद में नमः मन्त्र से मध्य भाग से घृत लेकर ॐ अग्निसोमाभ्यां स्वाहा मन्त्र से अग्नि के ललाट नेज में आहुति देनी है। फिर से दाहिने भाग से नमः मन्त्र से घृत लेकर ॐ अग्नये स्विष्टिकृते स्वाहा मन्त्र से अग्नि के मुँह में (जहाँ पर अग्नि अधिक जल रहो है) आहुति देनी है।

महाव्याहृति होम—घृत के द्वारा इन चारों मन्त्रों से आहुति देनी है।
(१) ॐ भूः स्वाहा, (२) ॐ भुवः स्वाहा, (३) ॐ स्वः स्वाहा,
(४) ॐ भूर्भुवः स्वाहा।

बाद में ॐ वैश्वानर जातवेद इहावह लोहिताक्ष सर्वकर्माणि साधय स्वाहा मन्त्र से तीन बार आहुति देनी है। यथा——ॐ ऐं सर्वदेवदेवी-स्वरूपाय श्रीरामकृष्णदेवस्य पीठदेवताभ्यो नमः। बाद में उस अग्नि में मूल मन्त्र से ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय स्वाहा मन्त्र से देवताओं के मुँह में २५ बार होम करना है। एवं अपने साथ देवता एवं अग्नि की ऐक्यभावना करके मूल मन्त्र से ११ बार होम करना है।

बाद में "ॐ ऐं श्रीरामकृष्णदेवस्य अंगदेवताभ्यः स्वाहा, ॐ ऐं श्रीरामकृष्णदेवस्य आवरणदेवताभ्यः स्वाहा" मन्त्र से एक-एक आहुति देनी होगी।

उसके बाद सङ्कल्प—अर्घ्य पात्र में हरितकी, कुश, तिल, तुलसी, गन्ध-पुष्प एवं जल लेकर वायें हाथ के ऊपर रखकर दाहिने हाथ के करतल से आच्छादित या ढक करके वीरासन में पूर्व दिशा की ओर मुँह करके बैठ कर बोलना है—

विष्णुरोम् तत् सदद्य अमुके मासि, अमुकराशिस्थे भास्करे, अमुक पक्षे, अमुकतिथौ, अमुकगोत्रः श्रीअमुकः श्रीरामकृष्णप्रीतिकामः श्रीरामकृष्णपूजाकर्मणि ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय स्वाहा इति मन्त्रेण अष्टोत्तरशत—(या अष्टाविंशतिसंख्यक) साज्य विल्वपत्रैः होममहं करिष्ये या करिष्यामि)*

उसके बाद ईशान कोण में अर्घ्यपात्र को उलट कर रखना होगा। एवं बाद में हाथ में आतप तण्डूल लेकर बायें हाथ से घण्टा बजाकर मन्त्र पाठ करते-करते उस चावल को अर्घ्यपात्र के ऊपर देना है, मन्त्र—

---

* सहस्रनाम के द्वारा होम करने के लिए उसके अनुरूप सङ्कल्प करना होगा, सहस्रनामार्चना करने के लिए भी उसी सङ्कल्प यथास्थान में पृथक् रूप से करना होगा। ग्रन्थ के परिशिष्ट में प्रदत्त सहस्र-नाम-अर्चना एवं होम प्रकरण द्रष्टव्य है।

"ॐ इन्द्राद्यानो इत्यादि ॐ यज्जाग्रत दूरमुदैति दैवंम् । तद्‌ सुप्तस्य तथैवैति दूरं गमम् जथातिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।"

उसके बाद हवनीय विल्वपत्र में यथायथ रूप में अभ्युक्षण एवं अर्चना करके पूर्वोक्त मन्त्र से, मृगमुद्रा में एक-एक साज्य विल्व-पत्र ग्रहण करके आहुति प्रदान करनी होगी ।

उसके बाद (१) ॐ ऐं श्रीरामकृष्णदेवस्य अंगदेवताभ्यः स्वाहा ।

(२) ॐ ऐं श्रीरामकृष्णदेवस्य आवरणदेवताभ्यः स्वाहा ।।

मन्त्र से एक-एक आहुति देनी होगी अथवा परिषद गण के नाम से पृथक्-पृथक् आहुति देनी है उसके बाद अन्यान्य (गुरु गणेशादि) पूजित प्रत्येक देवता को एक-एक आहुति प्रदान करनी होगी ।

पूर्णाहुति—पान एवं केले के (या अन्य कोई फल) साथ घृत पूर्ण पात्र (स्रुव) हाथ में लेकर खड़ा होकर निम्न मन्त्र से पूर्णाहुति देनी होगी—

ॐ ऐं सर्वदेवदेवीस्वरूपाय श्रीरामकृष्णाय स्वाहा,

ॐ इतः पूर्वं प्राण-बुद्धि-देह-धर्माधिकारतो जाग्रत्-स्वप्नसुषुप्त्य-वस्थासु मनसा वाचा कर्मणा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत् कृतं यदुक्तं यत् स्मृतं तत् सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा, मां मदीयं च सकलं श्रीरामकृष्णचरणे समर्पये, ॐ तत् सत् ।

इसी समय "ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।
हरि ॐ तत् सत्"—

इस वैदिक मन्त्र का बहुत लोग पाठ करते हैं (पूर्णतालाभ के लिये)

अग्निविसर्जन—संहारमुद्रा में देवता को अग्नि से स्वहृदय में लाकर के क्षमस्व मंत्र से अग्नि विसर्सन करना होगा एवं ॐ अग्ने त्वं समुद्रं गच्छ मन्त्र से अग्नि को दायीं ओर चालित करना होगा। बाद में ॐ पृथ्वि त्वं शीतला भव मत्र से अग्नि के ईशान कोण में दही या दुग्ध (उसके अभाव में जल) निक्षेप करना होगा।

पूर्णपात्र उत्सर्ग—एतस्मै वं पूर्णपात्राय (अथवा पूर्णपात्रामुकल्पाय भोज्याय) नमः, ॐ एतधिपतये देवाय विष्णवे नमः, एतत् सन्प्रदानाय ॐ श्रीरामकृष्णाय नमः, इसी रूप में यथाविधि अर्चना करके निम्न मन्त्र से उत्सर्ग करना होगा। विष्णुरोम् तत्सद्धय अमुके मासि अमुके राशिस्ये भास्करे अमुके पक्षे, अमुके तिथौ, अमुकः गोत्रः श्रीअमुकः कृतैतत् श्रीरामकृष्णे पूजांगी भूत-होमकर्मणः सांगतार्थं इदं पूर्णपात्रं (अथवा पूर्ण-पात्रानु-कल्पं-भोज्यं) श्रीरामकृष्णाय तुभ्यमहं सम्प्रददे (पराये ददानि) कहकर जलविंदू के प्रक्षेप द्वारा उत्तसर्ग करना होगा। इसी समय निम्नोक्त मन्त्र से देवता के उद्देश्य में दक्षिणा दान करना होगा।

दक्षिणा—रजतखण्ड या स्वर्णखण्ड (हरित की या पुष्प) किसी को भी पात्र में स्थापन करके अर्चाना करनी होगी।

ॐ बं एतस्मै काचंनमूल्याय रजतखण्डाय नमः

मन्त्र से तीन दफे प्रोक्षण (उल्टे हाथ से जल छिड़क) करके

ॐ एते गन्धपुष्पे काचंनमूल्याय रजतखण्डाय नमः।

ॐ एते गन्धपुष्पे एतत् सम्प्रदानाय श्रीरामकृष्णाय नमः मन्त्र से पूजा करनी होगी। विष्णुरीम् तत्सदद्य, अमुकमासि अमुकराशिस्ये भास्करे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकगोत्रौः अमुकः श्रीरामकृष्णप्रीति-कामनया कृतैतत् श्रीरामकृष्णपूजा कर्मणः सांगतार्थं दक्षिणामिदं कांचन-

मूल्यं रजतखण्डमर्चितं श्रीविष्णुदैवतं श्रीरामकृष्णाय तुभ्यमहं सम्प्रददे (परार्थे-ददानि) कहकर अर्घ्यजल के विंदु प्रक्षेप के द्वारा निवेदन पूर्वक देवता के उद्देश्य में प्रदान करना होगा।

अच्छिद्रावधारण व वैगुण्यसमाधान—

पहले कर को जोड़कर कहना होगा—

ॐ कृतैतत् कर्माच्छिद्रमस्तु। बाद में दाहिने हाथ में जल लेकर कहना होगा—

ॐ तत्सदद्य कृतेऽस्मिन् कर्मणि यद्वैगुण्यं जातं

तद्दोषप्रशमनाय श्रीविष्णुस्मरणमहं करिष्ये।

एवं 'ॐ विष्णुः अन्ततः दश बार जप करके ॐ तद्विष्णोः परमं पदम् इत्यादि मन्त्र से विष्णु-स्मरण करना होगा।

उसके बाद हाथ में जल लेकर "एतत् कर्मफलं श्रीरामकृष्णाय समर्पित-मस्तु" मन्त्र से देवता को स्मरण करने के उद्देश्य से प्रदान करना होगा एवं कर जोड़ कर पाठ करना होगा—

ॐ प्रीयतां पुण्डरीकाक्षं सर्वयज्ञेश्वरोहरिः।

तस्मिंस्तुष्टे जगत् तुष्टं प्रीणिते प्रीणितं जगत्॥

बाद में देवता को प्रणाम करना होगा एवं स्रुव लग्न भस्म द्वारा तिलक करना होगा।

मन्त्र "ह्रीं क्लीं सर्वशान्तिकरो भव"

उसके बाद कर जोड़ कर क्षमा प्रार्थना करनी होगी—

"ॐ विधिहीनं क्रियाहीनं मन्त्रहीनं यदर्चितम्।

मया निवेदितं भक्त्या परिपूर्णं तदस्तु मे॥

कर्मणा मनसा वाचा त्वत्तो नान्यो गतिर्मम ।
अन्तश्चारेण भूतानां द्रष्टा त्वं परमेश्वर ।।

निम्न मन्त्र से साष्टांग प्रणाम करना होगा —

ॐ निरञ्जनं नित्यमनन्तरूपं भक्तानुकम्पाधृतविग्रहं वै ।
ईशावतारं परमेशमीड्यं तं रामकृष्णं शिरसा नमामि ।। हरि ॐ तत्सत् ।*

अथ श्रीरामकृष्णसहस्रनाम्नां प्रतिनाम्ना श्रीरामकृष्णानामार्चना तथा होमप्रकारः

प्रथमतः शुद्धासन उपविश्य द्विराचम्य (तान्त्रिकरीत्या चेत् तान्त्रिकाचमनं कार्यम्) गुरुं संस्मृत्य गन्धादीन्यभ्यर्च्य सूर्याघ्यं दत्वा स्वस्ति-वाचनं कुर्यात् । विष्णुरोम् तत् सदद्येत्यादि (तन्त्रोक्त रीत्या चेत् राश्युल्लेखः कार्यः) । अमुके मासि, अमुकराशिस्थे भास्करे, अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकगोत्रः श्रीअमुकः श्रीरामकृष्णप्रीतिकामः गणपत्यादि-देवता-पूजा-पूर्वकं यथाशक्त्योपचारैः श्रीरामकृष्ण-पूजा-पूर्वकं श्रीरामकृष्ण-देवस्य सहस्रनाम्नां गदाधरादि-विश्वधर्म-प्रकाशकान्त-प्रतिनामोल्लेख-पूर्वकं अर्चनमहं करिष्ये (परार्थे करिष्यामि) ततः सङ्कल्पसूक्तं पठेत् ।

---

* यहाँ पर संक्षेप में तान्त्रिक होम की पद्धति दी गयी है । मेरे ज्ञान के अनुसार श्रीरामकृष्णमठ एवं मिशन में प्रायः सर्वत्र ही तान्त्रिक रीति के अनुसार होमादि कर्म अनुष्ठित होते रहते हैं । इसकी विशेषता यह है कि तान्त्रिक कर्मादि में जिस देवता की पूजा की जाती है होम के समय भी उसी देवता को ही अग्नि के रूप में कल्पना करके स्थापन एवं होम इत्यादि कार्य अनुष्ठित किया जाता है । परन्तु वैदिक होम में किसी देवता-विशेष को अग्नि के रूप में स्थापन नहीं किया जाता, फिर भी संक्षेप में यजुर्वेदोक्त होम-पद्धति इसी स्थान में पृथक् रूप से सन्निविष्ट किया गया है ।

घटे चेदस्मिन्नेव समये घटस्थापनं कुर्यात् । ततः सामान्यार्घ्यं कृत्वा द्वारदेवताः पूजयेत् । तत आसनशुद्धि-पुष्पशुद्धि-करशुद्धि-माषभक्त-बलिदान-भूतापसारण-गुर्वादि-प्रणाम-भूतशुद्धि-अन्तर्मातृका-बाह्यमातृका-संहार-मातृका-पीठन्यासादीनि कुर्यात् । ततो गणेश-शिवादि-पञ्चदेवता-आदित्यादि-नवग्रह-इन्द्रादिदशदिक्पाल-मत्स्यादि-दशावतारान् यथाशक्त्युपचारैः सम्पूज्य मूलेन प्राणायामत्रयं विधाय ऋष्यादिन्यासं कुर्यात् । ततोऽगंन्यास-करन्यासौ तथा व्यापकन्यासं च कृत्वा ध्यायेत् । ध्यानम्··· ततो मानसोपचारैः संपूज्य विशेषार्घ्यस्थापनं, ततः पीठपूजां कुर्यात् । ततः पुनर्ध्यात्वा घटे चेदावाहनं कुर्यात् । ततः षोड़शोपचारैः पूजयेत् । ततः आवरण-देवताः पूजयेत् । ततो मूलेन पुष्पाञ्जलीन् प्रदाय मूलेन प्राणायामत्रय-ऋष्यादिन्यास-अंगन्यास-करन्यास-कुल्लूका-सेतुप्रभृतीन् जप्त्वा यथाशक्ति-मूलमन्त्रं जपेत् । ततो गुह्यातीति जपं समर्प्य प्राणायामं कृत्वा प्रणमेत् । ततः सहस्रनाम्नां प्रति नामोच्चार्यं "ॐ गदाधराय नमः" इत्यादि-प्रकारेण गन्धपुष्पादिभिः श्रीरामकृष्णं पूजायित्वा भोगोत्सर्गमारात्रिकं च विधाय होमं कुर्यात् । तत्र-वैदिक-रीत्या तान्त्रिक-रीत्या वा सामान्यकुशण्डिकां कृत्वा सङ्कल्पं कुर्यात्––

विष्णुरोमद्येत्यादि-श्रीरामकृष्णस्य सहस्रनाम्नां प्रतिनामोच्चार्य्य श्रीरामकृष्णस्य पूजन-कर्माङ्गीभूत-होम-कर्मणि श्रीरामकृष्ण-प्रीतिकामः सहस्रनाम्नां "ॐ गदाधराय स्वाहा" इत्यादि-प्रकारेण प्रीतिनामोच्चार्य अमुक-द्रव्येण होमकर्माहं करिण्ये । (परार्थे करिष्यामि) । ततो होमं समाप्य मूलेन पूर्णाहुतिं दत्वा दक्षिणादानं शान्त्युदकदानादिकं कर्त्तव्यमिति ।

अथ यजुषां साधारण-होम-प्रयोगः—

कर्ता सुस्नातः सुप्रक्षालितपाणिपादः आचान्तः कर्मस्थानमागत्य वारणादि-यज्ञीय-वृक्षोद्भवासने प्रागग्रान् उदगग्रान् वा त्रीन् कुशान् दत्वा, प्राङ्मुख उपविश्य, वाग्यतः, शुद्धायां भूमौ हस्तमितं चतुरस्रं (सप्तविंशत्यंगुलं

मण्डलं) परिलिख्य, तत्र त्रिभिर्दर्भैः पांसून् आपसार्य, गोमयोदकेन त्रिरुपलिप्य खादिरेण हस्तमात्रेण स्फ्येन कुशेन वा उदक्संस्थाः प्रादेशमात्राः (स्थण्डिल-परिमाणाः) त्रिस्रो रेखाः कृत्वा दक्षिण-हस्तानामिकागुंष्ठाभ्यां यथोल्लिखिताभ्यो रेखाभ्यः पांसून् उद्धृत्य, ऐशान्यां परित्यज्य, स्थण्डिलम् अद्भिरभ्युक्ष्य, आत्मदक्षिणे कांस्यपात्रस्थात् ताम्रपात्रस्यात् नवशरावस्थाद् वा अग्नेर्ज्वलदिन्धनं गृहीत्वा,—"ॐ क्रव्यादमग्निं प्रहिणोमि दूरं, यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः।" इत्यनेन दक्षिण-पश्चिम-कोणे प्रक्षिपेत्। ततः अपरमग्निं गृहीत्वा—"ॐ इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन्" ॥ इत्यनेन आत्माभिमुखं स्थण्डिलमध्ये स्थापयेत्। ततः कृताञ्जलिः पठेत्,—"ॐ सर्वतः पाणिपादान्तः सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः। विस्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु ॥ ततः अग्नेर्दक्षिणस्यां दिशि वारणादि-यज्ञीयदारुनिर्मितं पीठं प्रागग्रकुशैराच्छाद्य ब्रह्मासनार्थं स्थापयेत् ततः पूर्ववृतो ब्रह्मा अग्निं प्रदक्षिणीकृत्य, तत्र गत्वा प्रत्यङ्मुखस्तिष्ठन्,—"ॐ अहे दैधिषव्योदत-स्तिष्ठान्यस्य सदने सीद, योऽस्मत् पाकतरः ॥" इति ब्रह्मासनमीक्षेत। ततस्तस्मात् कुशपत्रमेकं वामहस्ता-नामिकांगुष्ठाभ्यां गृहीत्वा, "ॐ निरस्तः पाप्मा सह तेन वयं दिष्मः।" इत्यनेन दक्षिण-पश्चिम-कोणे प्रक्षिण्य,—"ॐ इदमहं बृहस्पतेः सदसि सीदामि, प्रसूतो देवेन सवित्रा, तदग्नये प्रब्रवीमि, तद् वायवे, तत्पृथिव्यै।" इत्यनेन अग्न्यभिमुखं उपविशेत्। (कुशमयब्रह्मपक्षेऽपि एतेनैव विधिना ब्रह्मस्थापनं कुर्यात्)। ततः अग्नेरुत्तरतः स्तरणभूमिमतीत्य, प्रागग्रकुशैरासनद्वयं कल्पयित्वा, वारणं चमसं वामहस्ते कृत्वा, दक्षिणहस्तोद्धृतपात्रस्थोदकेन पूरयित्वा, पश्चिमासने निधाय, आलभ्य, पूर्वासने स्थापयित्वा, सकृदच्छिन्न-कुशानादाय ईशानादितः प्रागग्रैस्तैस्तैः कुशैरुदक्संस्थं अग्नेः परिस्तरणं कृत्वा अर्थवद् द्रव्याणि द्वन्द्वं प्राक्संस्थानि उदगग्राणि अग्नेरुत्तरतः आसादयेत्। तद् यथा—पवित्रछेदनानि त्रीणि कुशतरुणानि, पवित्रे द्वे, प्रोक्षणीपात्रम्, आज्यस्थाली, सम्मार्ज्जन-कुशास्त्रयः (षट्), उपयमनकुशास्त्रयोदश, समिधस्तिस्रः प्रादेशमात्राः, स्रुवः, आज्यं, पूर्णपात्रञ्चेति। (चरुहोमे विशेषो वक्तव्यः)।

ततः अग्रतः प्रादेशमात्रं विहाय द्वे कुशतरुणे "ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ।" इत्यनेन त्रिभिः कुशतरुणैः प्रच्छिद्य, "ॐ विष्णोर्मनसा पूतेस्थः॥" इत्यनेन अभ्युक्ष्य, प्रोक्षणीपात्रे उत्तराग्रे निधाय, तत्र प्रणीतोदकमासच्य, वामहस्तानामिकांगुष्ठाभ्यां पवित्राग्रं दक्षिणहस्तानामिकांगुष्ठाभ्यां पवित्रमूलं च धृत्वा, पवित्रमध्येन प्रोक्षणीपात्रस्थकियज्जलं द्विरुत्पूय, पवित्रे प्रोक्षण्यां निधाय, दक्षिणहस्तेन प्रोक्षणीपात्रमुत्थाप्य, वामहस्ते कृत्वा, तदुदकं दक्षिणेन पाणिना उच्चाल्य, प्रणीतोदकेन प्रोक्ष्य, प्रोक्षणीभिरद्भिः आसादनक्रमेण एकैकशो द्रव्याणि प्रोक्ष्य, प्रणीताग्न्योरन्तराले प्रोक्षणीपात्रं निधाय, आसादितमाज्यं आज्यस्थाल्यां पश्चादग्ने निहितायां प्रक्षिप्य, अग्नावधिश्रित्य, ज्वलदुल्मूकं प्रदक्षिणं आजस्य समन्तात् भ्रामयेत् (यदि प्रकृते कर्मणि चरुहोमोऽस्ति, तदा अस्मिन्नेव समये वक्ष्यमाणविधिना चरुं श्रपयेत्)। ततो दक्षिणेन पाणिना स्रुवमादाय प्रागग्रम् अधोमुखं अग्नौ तापयित्वा, सव्ये पाणौ कृत्वा, सम्मार्जनकुशानामग्रैः मूलतोऽग्रपर्यन्तं मूलैरग्रतोऽधस्तात् मूलपर्यन्तं संमृज्य, प्रणीतोदकेन अभ्युक्ष्य, पुनः प्रताप्य, उत्तरतो निदध्यात्। (चरुहोमे स्रुचमपि एवं संस्कुर्यात्)। तत आज्यम् उद्वास्य, अग्नेरुत्तरतः स्थापयित्वा, अग्नेः पश्चादानीय,—"ॐ सवितुस्त्वा प्रसव उत् पुनास्यच्छिद्रेण पवित्रेण (वसोः) सूर्यस्य रश्मिभिः (स्वाहा)॥" इत्यनेन पूर्वपवित्रे अग्रे वामहस्तानामिकांगुष्ठाभ्यां मूले च दक्षिणहस्तानामिकांगुष्ठाभ्यां उत्तानपाणिभ्यां गृहीत्वा, तन्मध्येन आज्यं त्रिरुत्पूय, अवलोक्य, तस्मादपद्रव्यं निरस्य, प्रोक्षणीश्च "ॐ सवितुस्त्वा……" इत्यादिना पूर्ववत् पवित्राभ्यामुत्पूय, उपयमनकुशान् दक्षिणेन पाणिना गृहीत्वा, सव्ये निधाय घृताक्ताः समिधः प्रक्षिप्य, प्रोक्षणीपात्रस्थोदकेन सपवित्रेण दक्षिणहस्तगृहीतेन अग्निं ईशानादित उदक्संस्थं पर्युक्षेत्, संस्रवधारणार्थं प्रोक्षणीपात्रं प्रणीताग्न्योर्मध्ये निदध्यात्। ततः स्रुवमादाय, दक्षिणं जानु पातयित्वा, ब्रह्मणा अन्वारब्धः,—"ॐ प्रजापतये स्वाहा" इति मनसा ध्यायन् अविच्छिन्नां घृतधारां दद्यात्, "इदं प्रजापतये" इति देवतोद्देशं कृत्वा संस्रवं पात्रान्तरे स्थापयेत् (प्रक्षिपेत्)। (एवं सर्वत्र)।

"ॐ इन्द्राय स्वाहा" इति मनसा ध्यायन् अविच्छिन्नां घृतधारां दद्यात्; "इदमिन्द्राय" इति देवतोद्देशः। (एतौ आघारौ भवतः)। "ॐ अग्नये स्वाहा" इति अग्नेरुत्तरार्ध-पूर्वार्धे जुहुयात्। "इदमग्नये" इति देवतोद्देशः। "ॐ सोमाय स्वाहा" इति अग्ने दक्षिणार्ध-पूर्वार्धे जुहुयात्; "इदं सोमाय" इति देवतोद्देशः। (एतौ आज्यभागौ भवतः)। इति सर्वसाधारणी कुशण्डिका॥ ततः प्रकृतं कर्म कुर्यात्। यथा—विष्णुरोँ-तत्सदद्येत्यादि श्रीअमुकदेवताप्रीतिकामः अमुकमन्त्रेण इयत्संख्यक-समिद्भिः (अथवा इयत्संख्यकाज्याहुतिभिः) श्रीअमुकदेवता-होममहं करिष्ये। (परार्थे करिष्यामि) इति सङ्कल्प्य, ॐ अग्ने त्वम् अमुकनामासि—इति नाम कृत्वा,— "ॐ पिंगभ्रुश्मश्रुकेशाक्षः, पीनांगजठरोऽरुणः। छागस्थः साक्षसूत्रोऽग्निः सप्तार्चिः शक्तिधारकः॥" इत्यादित्यपुराणीयं ध्यात्वा, ॐ अमुकाग्ने इहागच्छ इत्यादिना आवाह्य, ॐ अमुकाग्नये नमः इति गन्धादिना पूजयेत्। ततः, एताभ्य इयत्संख्यक-साज्यामुकसमिद्भ्यो नमः, एतदधियपतये ॐ विष्णवे नमः, एतत्सम्प्रदानाय ॐ अमुकदेवतायै नमः इत्यर्चयित्वा जुहुयात्; "इदममुक-देवतायै" इति देवतोद्देशः॥ (कर्मविशेषे विशेषो वक्तव्यः) इति प्रकृतं कर्म॥ ततः सर्वकर्मसाधारणं उदीच्यं कर्म कुर्यात्। यथा ब्रह्मणा अन्वारब्धः व्याहृतिभिराज्येन जुहुयात्। ॐ भूः स्वाहा॥ इदमग्नये। इति देवतोद्देशः, ॐ भुवः स्वाहा॥ इद वायवे" इति देवतोद्देशः। ॐ स्वः स्वाहा॥ इद सूर्याय" इति देवतोद्देशः। ततः प्रायश्चित्तहोमं कुर्यात्। विष्णुरोँतत्सत् अद्येत्यादि श्रीअमुकः कृतेऽस्मिन् होमकर्मणि यद् वैगुण्यं जातं तद्दोषप्रशमनाय "त्वन्नोऽग्ने ......" इत्यादिभिः पञ्चभिर्मन्त्रैः प्रायश्चित्तहोममहं करिष्ये। इति सङ्कल्प्य ॐ अग्ने त्वं विधुनामासि—इति नाम कृत्वा, ॐ विध्वग्ने इहागच्छ इत्यादिना आवाह्य, "ॐ विध्वग्नये नमः" इतिगन्धादिभिरभ्यर्च्च्य, ब्रह्मणा अन्वारब्धः। "ॐ त्वन्नोऽग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेड़ो अब यासिसीष्ठाः। यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो, विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा॥ "इदमग्निवरुणाभ्याम्" इति देवतोद्देशः। ॐ स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवति,

नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो, वीहि मृड़ीकं सुहवो न एधि स्वाहा॥ इदं अग्निवरुणाभ्यां'' इति देवतोद्देशः। ॐ अयश्चाग्नेऽस्य नभिशस्तिपाश्च सत्यमि त्वमया असि। अयानो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजं स्वाहा॥ "इदमग्नये" इति देवतोद्देशः। ॐ ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णु, विश्वे मुंचन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ "इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः" इति देवतोद्देशः। ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्म,—दवाधमं विमध्यमं श्रथाय। यथा वयमादित्य व्रते, तवानागसो आदितये स्याम स्वाहा॥ "इदं वरुणाय" इति देवतोद्देशः। ॐ प्रजापतये स्वाहा॥ "इदं प्रजापतये" इति देवतोद्देशः। ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा॥ "इदं अग्नये स्विष्टकृते" इति देवतोद्देशः। ततः आदित्यादिनवग्रहान्, इन्द्रादिदशदिक्पालांश्च स्वैः स्वैर्मन्त्रैर्हुत्वा, प्रत्यक्षदेवता-होमं कुर्यात्। सर्वत्र देवतोद्देशश्च कार्य्यः॥ ततः अग्ने त्वं मृड़नामासि इति नाम कृत्वा, ॐ मृड़ाग्ने इहागच्छ इत्यादिना आवाह्य, ॐ मृड़ाग्नये नमः इति गन्ध-पुष्प-धूपदीपाज्यनैवेद्यसघृतवस्त्र सघृतफल-सघृत-ताम्बूलै-रभ्यर्च्च्य स्रुवपूर्णं संस्रवमादाय, (परार्थे यजमानसहितः) उत्थाय,—ॐ मूर्धानं दिवो-अरतिं पृथिव्या, वैश्वानर-मृत आजातमग्निम्। कविं सम्राज-मतिथिं जनाना, मासन्नापात्रं जनयन्तदेवाः स्वाहा॥ इति जुहुयात्॥ ततः ऐशान्यां दध्यादिकं दत्वा स्रुवेण स्रुचा वा ऐशान्या भस्म आहृत्य, अनामिकया गृहीत्वा, तिलकं कुर्यात्। ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषं इति ललाटे;··· जमदग्ने स्त्र्यायुषं इति कण्ठे,······यद् देवानां त्र्यायुषं इति दक्षिणांसे, ······ तत्तोऽस्तु त्र्यायुषं इति हृदि। ततः स्रुक्स्रुवयोरग्नौ प्रक्षेप इच्छातः कार्यः। ततः ॐ अग्ने त्वं समुद्रं गच्छ—इति अग्निं विसृज्य, आचारात् पृथ्वि त्वं शीतला भव, इति दध्ना परिषिच्य शान्ति कुर्यात् इति॥

मुद्रा प्रकरण

नाराचमुद्रा—दक्षिण तर्जनी के अग्रभाग में अगुष्ठाग्र को योग करके

अन्य अंगुलियों को प्रसारित करके उस मुक्ता-मुक्त हस्त को दायें कन्धे के ऊपर स्थापन करना होगा।

मत्स्यमुद्रा—वायें हाथ के तलदेश को दायें हाथ के पृष्ठ में ठीक समान रूप में मिला कर दोनों हाथों के अंगुठों को दौड़ते हुए मत्स्य के समान चालित करना होगा।

धेनुमुद्रा—बायें हाथ की मध्यमा एवं कनिष्ठा में दायें हाथ की तर्जनी एवं अनामिका एवं बायें हाथ की तर्जनी एवं अनामिका को दायें हाथ की मध्यमा एवं कनिष्ठा के साथ योग करने से धेनुमुद्रा व अमृतीकरण मुद्रा होती है।

कूर्ममुद्रा—उत्तान बायें हाथ की तर्जनी के आगे अधोमुख दायें हाथ की कनिष्ठा के अग्रभाग एवं उस बायें हाथ के अंगुष्ठाग्र के दायें हाथ की तर्जनी के अग्रभाग संयोजित करके दायें हाथ की अंगुष्ठा उन्नत भाव से रखना है। उसके बाद बायें हाथ की मध्यमा अनामिका एवं कनिष्ठाको दायें हाथ के पृष्ठ भाग में स्थापन करना होगा एवं दायें हाथ की मध्यमा एवं अनामिका वायें हाथ कीं तर्जनी एवं अंगुष्ठा के मध्यभाग को अधोमुख करके रखना होगा एवं दायें हाथके पृष्ठ भाग को कुर्मपृष्ठ के अनुसार उन्नत करना होगा। इसी को कूर्ममुद्रा कहते हैं।

गालिनीमुद्रा—दोनों हाथों को परस्पर सम्मुखीन करके दायीं कनिष्ठा का वायी अंगुष्ठा के साथ संयोग करके दायीं तर्जनी, मध्यमा एवं अनामिका के साथ बायीं अनामिका, मध्यमा एवं तर्जनी सरलता के साथ योग करना है।

अंकुशमुद्रा—दायीं मध्यमांगुली को सरलता से प्रसारित करके तर्जनीको किंचित् संकुचित करके उसके मध्यम पर्व में संलग्न करने से ही अंकुशमुद्रा होती है।

गोयोनिमुद्रा—दायें हाथ को शिथिलरूप से मुष्ठिबद्ध करके उत्तान और शिथिल करना होगा।

अवगुण्ठनमुद्रा—बायें हाथ को मुष्ठिबद्ध करके तर्जनी को सीधा अधोमुख से दायीं ओर भ्रामित करना होगा।

अवाहन्यादिपञ्चमुद्रा—(१) दोनों हाथों को उलटकर मिलितरूप में दोनों हाथों के अनामिका के मूल पर्व में अंगुष्ठाग्र योग करके उसी रूप से ऊपर से नीचे की ओर लाने से ही आवाहनी मुद्रा होती है।

(२) आवाहनी मुद्रा के दोनों करतल अधोमुख करने से संस्थापनी मुद्रा होती है।

(३) मुष्टिबद्ध दोनों हाथों को एकत्र करके अंगुष्ठाग्र के द्वारा उन्नत करने से ही सन्निधापनी मुद्रा होती है।

(४) उसी मुद्रा के उभय हाथों की दोनों अंगुष्ठाओं को अंतःप्रविष्ट करके उभय हाथों को मुष्ठिबद्ध करने से सम्बोधनी मुद्रा होती है।

(५) उसी अवस्था में मुष्टिबद्ध दोनों हाथों को उलट देने से सम्मुखीकरनी मुद्रा होती है।

तत्वमुद्रा—दायें हाथ व बाये हाथ को अधोमुख करके अनामिका के अग्रभाग में अंगुष्ठा का योग करने से तत्वमुद्रा होती है।

पुष्पमुद्रा—दायी अंगुष्ठा एवं तर्जनी के अग्रभाग को एकत्र करने से पुष्पमुद्रा होती है।

परमीकरणमुद्रा—अंगुष्ठद्वय को परस्पर ग्रथित करके और सारी अंगुलियों को प्रसारित करना होगा।

प्राणादिपञ्चमुद्रा—(१) दाहिने हाथ की अंगुष्ठा, अनामिका एवं कनिष्ठा के अग्रभाग को योग करने से प्राणमुद्रा होती है, (२) अंगुष्ठा, मध्यमा एवं तर्जनी के योग से अपानमुद्रा, (३) अंगुष्ठा, अनामिका, मध्यमा के योग से व्यान होती है, (४) समस्त अंगुलियों के अग्रभाग के योग से समान मुद्रा। (पञ्चमुद्रा के विभिन्न क्रम हैं)।

ग्रासमुद्रा—बाये हाथ की अंगुलियों को पद्माकार में थोड़ा सा सङ्कोच करना होता है।

चक्रमुद्रा—दाये हाथ के वृद्धागुष्ठ के गर्भ में दाये हाथ की कनिष्ठांगुलियां एवं बाये हाथ के वृद्धागुलियाँ प्रसारित करना होगा। उसके बाद बायीं ओर लेकर परस्पर हाथ की दायें एवं दायें हाथ को बायीं ओर लेकर परस्पर संयोग करना होगा।

ज्वालिनीमुद्रा—दोनों हाथों के मणिबन्ध को संयुक्त करके अंगुलियों को प्रसारित करना होगा, एवं अंगुष्ठा के साथ अंगुष्ठा एवं कनिष्ठा के साथ कनिष्ठा संयुक्त करके करतल के बीच प्रसारित करमा होगा।

भूतिनीमुद्रा—योनिमुद्राबन्धन करके मध्यांगुलिद्वय बन्ध करना होगा एवं उसके अग्रभाग में अगुष्ठाद्वय को संयुक्त करना होगा।

मृगमुद्रा—दायें हाथ की अनामिका, मध्यमा एवं अंगुष्ठा के अग्रभाग परस्पर संयुक्त करके अवशिष्ट अंगुलिद्वय को उन्नत एवं दण्डाकार रखना होगा।

लेलिहानमुद्रा—करतल अधोमुख में रखकर तर्ज्जनी, मध्यमा एवं अनामिका इन तीन अंगुलियों को समान रूप में अधोमुख स्थापन करना है। उसके बाद अनामिका के मूल में बृद्धांगुष्ठा स्थापन करके कनिष्ठांगुलि को दण्डाकार व सरल भाव में रखना है।

संहारमुद्रा—बायें हस्त को अधोमुख रककर उसके ऊपर ऊर्ध्वमुख में दाया हाथ स्थापन करना होगा एवं उभय हस्त की कनिष्ठाओं के साथ कनिठा, अनामा के साथ अनामा, मध्यमा के साथ मध्यमा एवं तर्ज्जनी के साथ तर्ज्जनी को ग्रथित करन। होगा। उसके बाद इस संयुक्त हाथ को परिर्वातत करना होगा एवं तर्ज्जनीद्वय के अग्रभाग के योग से निर्माल्य ग्रहण करके नासा के पास धारण पूर्वक आघ्राण द्वारा देवता को हृदय में स्थापन एवं उस निर्माल्य को विपरीत भाग में हस्त परिवर्तन के द्वारा भूमि में स्थापन करना होगा।

* शुभम् *

परिशिष्ट

श्रीश्रीरामकृष्णाष्टोत्तरशतनामार्चना

१ ॐ गदाधराय नमः
२ ॐ रामकृष्णाय नमः
३ ॐ गयाविष्णूद्भवाय नमः
४ ॐ क्षुदिरामात्मजाय नमः
५ ॐ चन्द्रमणिप्रियाय नमः
६ ॐ निर्गुणाय नमः
७ ॐ नरवराय नमः
८ ॐ मगवेद्याय नमः
९ ॐ अचलाय नमः
१० ॐ स्वरूपाय नमः
११ ॐ ऐं स्वरूपाय नमः
१२ ॐ ह्रीं स्वरूपाय नमः
१३ ॐ करुणाघनाय नमः
१४ ॐ धर्मस्थापकाय नमः
१५ ॐ अवतारवरिष्ठाय नमः
१६ ॐ सर्वधर्मस्वरूपाय नमः
१७ ॐ त्यागीश्वराय नमः
१८ ॐ युगावताराय नमः
१९ ॐ 'श्रीजी'नामकाय नमः
२० ॐ मरणोर्मिविनाशाय नमः
२१ ॐ वेदमूर्तये नमः
२२ ॐ गुरुमहाराजाय नमः
२३ ॐ सनातनपुरुषाय नमः
२४ ॐ अहेतुककरुणामूर्तये नमः
२५ ॐ साम्यमैत्रीदिव्यदूताय नमः
२६ ॐ निरञ्जनाय नमः
२७ ॐ महासमन्वयाचार्याय नमः
२८ ॐ शरणागतवत्सलाय नमः
२९ ॐ पूर्णब्रह्मसनातनाय नमः
३० ॐ सदानन्दपुरुषाय नमः
३१ ॐ पूर्णावताराय नमः
३२ ॐ प्रेमरत्नाय नमः

३३ ॐ सर्वदेवदेवीस्वरूपाय नमः
३४ ॐ कृपामयाय नमः
३५ ॐ कल्पशाखिने नमः
३६ ॐ कपालमोचनाय नमः
३७ ॐ अस्पृश्योद्धारकाय नमः
३८ ॐ गुप्तावताराय नमः
३९ ॐ अपूर्वाय नमः
४० ॐ आदिनाथाय नमः
४१ ॐ ज्ञानदानावतीर्णाय नमः
४२ ॐ ज्ञानमूर्तये नमः
४३ ॐ जृम्भितयुगेश्वराय नमः
४४ ॐ जगन्मातृदर्शकाय नमः
४५ ॐ जनगणोद्धारकाय नमः
४६ ॐ जगन्नाथाय नमः
४७ ॐ तन्त्रपारगाय नमः
४८ ॐ तीर्थस्वरूपाय नमः
४९ ॐ त्यागीशिरोमणये नमः
५० ॐ त्रिपुटीशून्याय नमः
५१ ॐ दुरितदलनाय नमः
५२ ॐ दयाघनाय नमः
५३ ॐ ध्यानसिद्धाय नमः
५४ ॐ नरदुःखवारणाय नमः
५५ ॐ निर्मानमोहाय नमः
५६ ॐ पूर्णब्रह्मणे नमः
५७ ॐ परमपित्रे नमः
५८ ॐ प्राणारामाय नमः
५९ ॐ पुरुषोत्तमाय नमः
६० ॐ पतितोद्धारकाय नमः
६१ ॐ प्राणसखाय नमः
६२ ॐ पूर्णज्ञानिने नमः
६३ ॐ पूर्णशक्तये नमः
६४ ॐ पूर्णभक्ताय नमः
६५ ॐ पूर्णयोगिने नमः
६६ ॐ पूर्णकर्मिणे नमः
६७ ॐ प्राणकान्ताय नमः
६८ ॐ परमहंसाय नमः
६९ ॐ विश्वपूजिताय नमः
७० ॐ विश्वपालकाय नमः
७१ ॐ विश्वकीर्तये नमः
७२ ॐ विश्वधात्रे नमः
७३ ॐ विश्वस्रष्ट्रे नमः
७४ ॐ विभवे नमः
७५ ॐ विरजसे नमः
७६ ॐ विश्वेश्वराय नमः
७७ ॐ विवेकप्रदाय नमः
७८ ॐ वृद्धश्रवसे नमः
७९ ॐ विश्ववेदसे नमः
८० ॐ विश्वधर्मप्रतीकाय नमः
८१ ॐ विश्वकल्याणकृते नमः
८२ ॐ वेदार्चिताय नमः
८३ ॐ भवबन्धनखण्डनाय नमः
८४ ॐ वाञ्छाकल्पतरवे नमः

८५ ॐ भक्तहृदयरञ्जनाय नमः
८६ ॐ भववैद्याय नमः सर्वज्ञाय
८७ ॐ मातृपूजकाय नमः
८८ ॐ युगाचार्याय नमः
८९ ॐ धर्ममेघसमाधिमते नमः
९० ॐ रिपुछयमर्दनाय नमः च
९१ ॐ शान्तधर्मद्वन्द्वशान्ताय नमः
९२ ॐ विश्वधर्मप्रकाशकाय नमः
९३ ॐ साधकचक्रवर्तिने नमः
९४ ॐ सत्यव्रताय नमः
९५ ॐ चिद्घनाय नमः
९६ ॐ सर्वतोभद्राय नमः
९७ ॐ वेदान्तोज्ज्वलभाष्यस्वरूपायनमः
९८ ॐ शारदापतये नमः
९९ ॐ शारदासेविताय नमः
१०० ॐ कथामृतप्रवर्षिणे नमः
१०१ ॐ अपूर्वसत्यनिष्ठाय नमः
१०२ ॐ स्त्रीपुरुषसमकृपाय नमः
१०३ ॐ परमाचार्याय नमः
१०४ ॐ गुरवे नमः
१०५ ॐ परमगुरवे नमः
१०६ ॐ परापरगुरवे नमः
१०७ ॐ परमेष्टिगुरवे नमः
१०८ ॐ अखण्डविलीनाय नमः

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

———

इति शम्।

श्रीश्रीरामकृष्णदेव की अष्टोत्तरशतनामार्चना और सहस्रनामार्चना का संकल्प :—

(१) सामान्य संकल्प का प्रकरण—

पूजा के आसन पर बैठ कर आचमन से शुरू कर स्वस्तिवाचन तक करके उसके बाद संकल्प करना विधेय है। ताम्र-अर्घा में गंगाजल, तिल, कुश, हरितकी, तुलसी, गन्ध-पुष्प इत्यादि रखकर उस पात्र को वाम हाथ में रखकर दक्षिण हस्त द्वारा आच्छादित करने के बाद पूर्व या उत्तर की तरफ मुख करके वीरासन में बैठकर निम्नोक्त संकलपमन्त्र का पाठ करना होगा—

ममोपात्त—समस्त दुरितक्षय द्वारा श्रीश्री शारदा देवी समेत श्रीश्रीरामकृष्ण देव प्रीत्यर्थं 'ॐ गदाधराय नमः' इत्यादि 'ॐ अखण्डविलीनाय नमः' इत्यन्ताष्टोत्तरशतनामार्चनमहं करिष्ये। (परार्थे, करिष्यामि)।

अतःपर सामान्य पूजा-पद्धति के अनुसार श्रीश्रीरामकृष्ण देव की पूजा समापन करके अष्टोत्तरशतनाम के प्रति नाम का उच्चारण करके गन्धपुष्प (अथवा जल, फूल, तुलसी, विल्व-पत्र, अरवा चावल) इत्यादि द्वारा पूजा करना विधेय है।

इसके अनन्तर श्रीश्रीरामकृष्ण देव के आवरण-देवताओं की पूजा करके पुनः श्रीश्री ठाकुर की यथा शक्ति उपचार से पूजा करना चाहिये। इसके बाद पुष्पाञ्जलि प्रदान, प्रणायाम, ऋष्यादिन्यास, अंगन्यास और करन्यास, करके यथा शक्ति मूल मन्त्र (ॐ अथवा ॐ ऐं) का जप करना चाहिए।

यदि भोग राग की कुछ व्यवस्था रहे तो भोग निवेदित करके कर्पूरादि द्वारा निराजन करना कर्तव्य है। अन्त में नमस्कार।

(२) विशेषसंकल्प प्रकरण—

आचमन से शुरू करके स्वस्तिवाचन पर्यन्त समुदय कृत्य समापन करके संकल्प करना उचित है। ताम्र कुशि में गंगा जल, तिल, कुशादि पूर्ववत् लेकर निम्नोक्त संकल्प मन्त्र का पाठ करना होगा—

शुभे शोभने मुहूर्ते आद्य ब्रह्मणो द्वितीय परार्धे श्वेतवाराहकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टविंशतितम् कलियुगे प्रथम पादे जम्बुद्वीपे भारतवर्षे......भरत खण्डे मेरोर्दक्षिण पार्श्वे......शकाब्दे, अस्मिन् वर्तमाने व्यवहारिके प्रभवादि षष्टि संबत्सरां मध्ये......नाम संवत्सरे......अयने......ऋतौ......मासे......पक्षे ......शुभतिथौ......वासरयुल्कायां......नक्षत्रयुक्तायां शुभयोगे-शुभकरर्ण-सकल विशेषण विशिष्टायामस्याम्-शुभतिथौ ममोपात्त समस्त दुरितक्षयद्वारा श्रीश्री शारदा देवी समेत श्रीश्रीरामकृष्ण देव प्रीत्यर्थं श्रीश्रीरामकृष्ण प्रसादेन ज्ञान वैराग्यसिद्ध्यर्थं* 'ॐ गदाधराय नमः इत्यादि 'ॐ विश्वधर्मप्रकाशकाय नमः' इत्यन्त सहस्रनामार्चनमहं करिष्ये। (परार्थे, करिष्यामि)।

अत: पूर्वलिखित पूजा-पद्धति क्रमानुसार सम्पूर्ण पूजा कर्म आदि करने होंगे और सबसे अन्त में अच्छिद्रावधारण और वैगुण्य समाधान करके हाथ जोड़ के क्षमा-प्रार्थना करनी होगी।

बि०द्र०—नित्य-पूजा, पाठ और जप-ध्यान करने के बाद अपने सामर्थ्य के अनुसार समग्र अथवा आंशिक श्रीरामकृष्णसहस्रनामस्तोत्र पाठ विधेय है। श्रीरामकृष्णाष्टोत्तरशतनामार्चना अथवा श्रीरामकृष्णसहस्रनामार्चना के प्रति थोड़े से अंश का भी नित्य पाठ करने पर भगवान् श्रीरामकृष्ण देव के प्रति प्रेम उत्पन्न होगा।

---

* सकाम होने पर निम्नलिखित एक या अधिक संकल्प किया जा सकता है (१) धर्मार्थ काम मोक्ष चतुर्विध फल पुरुषार्थ सिद्धयर्थं (२) ग्रहपीड़ा निवारणार्थं (३) क्षेमधैर्यवीर्यविजयायुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं इत्यादि।

———

शुद्धि-पत्र

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	३	×	ॐ
१	१५	महान	महान्
२	१४	अनुपाद	अनुवाद
२	१७	शरणागत	शरणागतों
१	३	वैष्णवा	वैष्णवा:
३	१४	अधिकतर	अधिकतम
५	६	गदाघर	गदाधर
७	१०	बचन	वचन
८	११	खडन	खण्डन
८	२३	कर सके	कर पा रहे
९	५	नाटकाभिवनय	नाटकाभिनय
१०	५	स्त्रियों के	स्त्रियों की
१	५	जेनजना	जैन जना:
१०	२१	बातें बोलते थे	बातें करते थे
११	१	विशद्ध	विशुद्ध
१२	४	चद्रमणितनूद्भव:	चन्द्रमणितनूद्भव:
१२	१३	शिवजी की साज	शिवजी की वेष-भूषा
१४	१०	उनका	उनके
१४	१३	ऊन्होंने	उन्होंने
१४	१४	ऊन्हें	उन्हें
१४	२०	बानर	वानर
१४	२०	उतर आकर	उतर कर
१४	२१	जोड़े	जोड़कर
१५	१४	आनद	आनन्द
१५	२४	पोतने	लगाने

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६	५	रचित	बनाई हुई
१७	२	नाव कलेवर	नरकलेवर
१७	१६	नये देहधारी	नरदेहधारी
१७	१७	श्रीकृष्ण के	श्रीकृष्ण की
१८	२२	बेसूध	बेसुध
१९	१७	प्रतिमाशाली	प्रतिभाशाली
२०	२५	जगत-जननी	जगत्-जननी
२१	२३	तेजधारबाला	तेजधारवाला
२२	६	पराविद्या	परविद्या
२२	७	उनके	उनका
२३	२२	अवस्यित	अवस्थित
२३	२३	जगत्माता	जगन्माता
२३	२४	लिपे	लिए
२४	४	भद्रमाल्यप्रभूषित:	भद्रमाल्यविभूषित:
२५	२	जटाजूटिशिवेक्षक:	जटाजूटशिवेक्षक:
२५	२२	तन्त्र-साधना के गुरु	तन्त्र साधना के गुरु
२७	१०	विषयो के प्राप्त होने	विषयों को प्राप्त करने
२९	२०	कार्मफलों	कर्मफलों
३१	९	भगवद्भावसमांधि	भगवद्भावसमाधि
३१	२४	अनेक	सभी
३२	१३	देवी के	देवी की
३३	७	कृष्ण के	कृष्ण का
३३	९	रूप के	रूप का
३४	३	'शिख'	'सिख'
३५	१	कालतत्कामिनी	कालसत्कामिनी

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३५	२०	संसार के अन्तरस्थ	शरीर के मूलाधार में सोई हुई सर्पाकार
३६	७	एकन्त	एकान्त
३६	१२	तीर्थों की सेवा करने	तीर्थों का सेवन करने
३७	१	स्वाङ्गसंलीन	स्वाङ्गविलीन
३७	६	भीजन	भोजन
३७	११	लोंगों	लोगों
३७	२१	को	से
३७	२३	ज्यतिर्मय	ज्योतिर्मय
३६	१३	स्मतृ कलुषनाशन	स्मतृ कलुषनाशनः
३६	१५	धर्मों के विरोधों के	धर्मों के विरोधों का
३६	१८	उसे	उन्हें
४१	१	भगवत्सत्प्रसंगोत्थ	श्रीभगवत्प्रसंगोत्थ
४२	३	सत्स्थितिः	संस्थितिः
४२	१७	ऋषि के	ऋषि का
३२	२२	कण्ठ धारण	कण्ठ को दोनों हाथों को फैलाकर पकड़ लिया था
४३	४	षड्वर्ग	षड्रिपु
४४	७	के	का
४५	२०	अनेक प्रकार के	अनेक प्रकार की
४७	११	आयोग्य	अयोग्य
४७	१६	अक्ष्यस्वरूप	अक्षयस्वरूप
४७	२४	सार-धर्म, करुणा के	स्वभाव, करुणा की
४८	६	मधुर	मधुर
४६	६	धर्मधारक:	धर्मधारकः

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४९	१८	कल्याणों	कल्याण
४९	२५	प्रेतीयमान	प्रतीयमान
५०	१०	शर्वशक्तिः	सर्वशक्तिः
५२	३	सदातनः	सनातनः
५२	१८	स्नयं	स्वयं
५४	१	अनितगुणचरित्रोऽनन्तमूर्त्तिः	अमितगुणचरित्रोऽनन्तमूर्तिः
५४	६	संसार-समुद्र का	संसार-समुद्र से
५५	२४	शरजनों को ।	शरणागतजनों का
५६	१	सर्वकल्याणराशिः	सर्वकल्याणराशी
५७	४	सर्वपिश्वातिशायी	सर्वविश्वातिशायी
५७	११	का	के
५७	१७	ब्रह्मी	ब्राह्मी
५७	२०	प्रार्पीजगों के शुभ अभिलाषों की	प्रार्थीजनों की शुभअभिलाषाओं की
५७	२३	अतिक्रमण करके	व्याप्त करके
५९	१२	तपियों	तापियों
५९	१४	आपरमित	अपरमित
६०	१९	असिमबलशाली	असीम बलशाली
६१	१८	ज्ञानस्तरूप	ज्ञानस्वरूप
६२	३	वा	वै
६३	२१	वे	उन्होंने
६४	१३	हो सके	कर सके
६५	६	उन्होंने	वे
६६	१२	जा	का
६७	१२	मरमप्रेमिक	परमप्रेमिक
६७	२३	का	के

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६८	१	सुसन्वयी	सुसमन्वयी
७०	३	ब्रह्मविष्णुहरातिग:	वेदेषु मूर्तभाष्य च
७०	५	स्वरूप्य	स्वरूप
७०	१४	जीव कल्याणकार्य से	जीवकल्याणकार्य में
७०	१५	का पुनरुज्जीवन कर सके थे	को पुनरुज्जीवित कर सके थे
७०, २४(५-६)		निर्विकार थे	और वेदों पर मूर्तभाष्य थे···
७१	११	ब्रह्म और ब्रह्मशक्ति	ब्रह्मशक्ति
७२	२०-२१	सिद्धि प्रयुक्त	सिद्ध
७५	६	के	का
७५	१०	वाक्य-सुधा का	वाक्य-सुधा
७५	१२	वाचनभंगी	बोली (वाणी)
७६	२५	पीपों	पापों
७८	७	चित्तवृत्त	चित्तवृत्ति
७८	२३	कास-कला	कामकला
७९	२२	आदर के व्यक्ति	आदरणीय
८०	१९	द्वन्द्वों के	द्वन्द्वों को
८१	५	का	के
८१	१८-१९	उनके थे	उनका था
८३	२	ऊनविंश	नवदश
८३	११	जीवजगत् के	जीवजगत् में
८३	१४	श्रीरधिका	श्रीराधिका
८३	२४	के	का
८५	९	अपने के समान	अपने समान
८६	१	सत्याश्रय:	सत्यास्त्रयी
८६	११,१२	अविर्भूत, के	अविर्भूत का

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८६	१८,१९	मधुता, मूर्तिस्वरूप	मधुरता, मूर्तस्वरूप
८७	११	भगवन्तत्त्व के	भगवत्तत्त्व का
८७	२२	महत्त्व के	महत्तत्त्व का
८८	७	आकार था	आकर था
८८	१९,२०	के रसों के	में, रसों का
८९	११	रस के	रस का
८९	१७	रासलीला रस का	रासलीला के रस के
८९	१८	दिव्य रसों के	दिव्यरसों का
८९	२३	अमृत का वर्षणकारी	अमृत-वर्षणकारी
९१	२	धर्मज्ञानविदूतकृत्	धर्मग्लानिविदूरकृत्
९१	९	निर्वासनता	वासनारहित होना
९२	१०	धर्मसम्प्रदायों के	धर्मों के सम्प्रदायवालों को
९४	८	सम्यासियों में	संन्यासियों के
९४	१०	युगधर्स	युगधर्म
९४	११	महिमम	महिमामय
९४	२०	मनोरंजनकारी	मनोरंजक
९६	५,१७	के राममणि	का, रासमणि
९७	११	पारवर्ती	परवर्ती सामान्यत:
९७	१६	दीक्षा ...... की थी	वे किसी को भी
९७	१८	के	का
			भावहीन होने का उपदेश नहीं देते थे
९८	१६	विकाश	विकाश
९९	१७	दृढ़संकल्प नवीन	दृढ़संकल्पयुक्त नवीन
१००	१	पूर्वजावतारबा:	पूर्वजातावतारभा:

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१०१	१	घनीभूतपूवविताारा	घनीभूतपूर्वावतारा
१०१	२	स्वदेहस्कुटा	स्वदेहस्फुटा
१०१	६	सूचना की	सूचना दी
१०१	१७	के	की
१०२	१६	चण्डालतक के	चण्डाल तक सभी
१०३	१	कल्पद्रु मावाश्रयचेतनाकृत्	कल्पद्रुम आश्रितचेतनाकृत्
१०४	७	का	के
१०५	१	विश्वद्वन्द्वनिवारक:	विश्वद्वन्द्व निवार को
१०५	४	विश्वभ्रातृत्व साधक:	विश्वभ्रातृत्व साधको
१०५	४	विश्वधर्मप्रकाशक:	विश्वधर्मप्रकाशको
१०७	६	पार्षदवृन्दों के ही नहीं	पार्षदवृन्दों को ही नहीं
१०८	६	ऊनकी	उनकी
१०६	१	त्रेत्रायां	त्रेतायां
१०६	२१	ईश्वरीय अपूर्व	ईश्वरीय भाव से अपूर्व
१११	३	हरि ॐ	हरि: ॐ
१११	५	सप्ततीर्थ	काव्य व्रिशारद, चतुष्तीर्थ
१११	५	एम. ए. विरुदवाजा	एम. ए. (युग्म) विरुदभाजा
१११	१०	उनका	आज उनका
११२	२	के उद्देश्य से	को
११३	१०	सर्वेष्ठाय	सर्वेष्टाय
,,	२७	अपरा	अपर
११४	६३	वीर्याय	शक्तये
,,	७०	अव्यक्ताय	अव्यक्तवाचिने
११४	७३	मय	मय
,,	७४	अखिलेश्वा नम:	अखिलेश्वराय नम:

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११४	७५	शक्ताय	सत्काय
,,	७६	नय:	नम:
,,	८८	अन्यक्त	अव्यक्त
,,	९४	विमर्दकाय	विमर्दकाय
११५	१११	अकालाय	अकलाय
,,	११२	वेदान्त	वेदान्त
,,	११३	अमृतधाराय	अमृताधाराय
,,	११६	देवाय	नाथाय
,,	१२३	दोव	देवाय
,,	१२६	तारकायनम:	तारकाय नम:
११६	१६६	घणाय	घनाय
,,	१६७	बन्धन	बन्धन
,,	१६८	कुन्ताय	कुन्तनाय
११६	१६९	गद्गद्	गद्गद्
११७	२०४	गोलक	गोलोक
,,	२०५	गौरांगवताराय	गौरांगावताराय
,,	२०७	गुणामयायाय	गुणमयाय
,,	२०९	गतव्ययाय	गतव्यथाय
,,	२११	नभ:	नम:
,,	२१२	गिरिश	गिरीश
,,	२१५	गुणेव्याय	गुणेड्याय
११८	२५२	भट्राज	भट्चाज्
,,	२७७	जगदात्मने	जगन्निवासाय
११९	३०३	तत्केषणायाय	त्यक्तैषणाय
,,	३१८	दृढ़ब्रताय	दृढ़बुद्धये

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११६	३१६	देवमाल्यभूषिताय	देवमाल्यविभूषिताय
,,	३२३	सन्तप्तये	सन्तप्ताय
,,	३२४	नमः	नमः
,,	३३४	दूरित	दुरित
११६	३३६	दिव्यकृतये	दिव्याकृतये
,,	३४६	नमः	नमः
१२०	३६४	ध्यानगम्याय	ध्यानागम्याय
,,	३८१	निगुणाय	निर्गुणाय
,,	३८६	नम	नमः
;,	३८३	नम	नमः
१२१	४२१	ननः	नमः
,,	५२६	पराचर्याय	पराचार्याय
,,	४२६	परमपुरुषाव	परमपुरुषाय
,,	४३०	नमःऽः	नमः
,,	४३५	नलः	नमः
,,	४४०	परम	परम
,,	४४१	कान्तये	कान्ताय
,,	४४५	प्रे भक्तिदात्रे	प्रेमभक्तिदात्रे
१२२	४५३	प्रेमविह्वलाय	प्रेममयाय
,,	४६४	परिदाजक	परिव्राजक
,,	४६६	परेश्वराय	परमेश्वराय
,,	४६६	पूर्णभक्तये	पूर्णभक्ताय
१२२	४८१	पर हंसाय	परमहंसाय
,,	४८२	पर धनाय	परमधनाय
१२२	४६०	पर सेव्याय	परमसेव्याय

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२२	४९६	विज्ञतमाव	विज्ञतमाय
,,	५०२	वि सित	विकसित
१२३	५०५	हस्तये	हस्ताय
,,	५११	वाच्यवाचवचन	वाच्यवाचकवचन
,,	५१४	विणाश्रवण	वीणावीवण
,,	५२३	विरजे ननः	विरजसे नमः
,,	५२६	विशेश्वराय	विश्वेश्वराय
,,	५२८	विश्ववीजाय	विश्वबीजाय
,,	५३७	वासनावीज	वासनाबीज
१२४	५६२	वुधावुधभेद	वुधावुधाभेद
,,	५७५	विपत्तिवारकाय	विपन्निवारकाय
,,	५७८	नम ।	नमः
,,	५८२	विरूपाक्षये	विरूपाक्षाय
,,	५९६	भक्तेश्वराय	भक्तपूजिताय
,,	६०४	भूताति	भूताधि
,,	६५३	मधुरार्पित	मथुरार्पित
१२६	६६३	मित्रामित्रे	मित्रामित्र
,,	६९१	नम	नमः
,,	७०७	यत्ति	यति
१२७	७०९	नम ।	नमः
,,	७२१	युगेश्वराय	युगपरमेश्वराय
,,	७२४	मायाधृतवपुषे	यज्ञेश्वराय
१२७	७३९	रिपुचयमर्दनाय	रिपुषण्मर्दनाय
,,	७४१	मनः	नमः
,,	७५१	राघवम्मन्याय	राघवस्वरूपाय

पृष्ठसंख्या	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७५२	७५२	रामात्मन	रामात्मने
,,	७५३	रिपुसूदननाय	रिपुसूदनाय
,,	७८६	ङ्करशया	शंकराय
,,	८०३	शुभनाम्ने	शुद्धबुद्धिस्वरूपिणे
,,	८०६	शिवदर्शनाय	शिवस्वरूपाय
,,	८०७	शुभाविने	शुभनाम्ने
१२६	८४३	नम	नमः
१३०	८६५	स्पर्शमत्र	स्पर्शमात्र
,,	८७२	सत्यपराणाय	सत्यपरायणाय
,,	८७५	सद्दुद्धि	सद्बुद्धि
,,	८७६	सदानन्दाय	सदाचारिणे
,,	८८२	समातनाय	सनातनस्वरूपाय
१३०	८६१	सिद्धकामाय	सिद्धिकामाय
,,	६१२	सर्वघटाधिरूपाय	सर्वघटाधिरूढ़ाय
१३१	६१४	सत्यधृतये	[illegible]धृतये
,,	६२४	सर्वधर्मस्वरूपाय	सवंमंगलस्वरूपाय
,,	६३३	सर्वज्ञाय	सर्वेश्वराय
,,	६३७	स्थितिरूपाय	संहृतिरूपाय
१३२	६६१	सर्दवर्णा	सर्ववर्णा
१३२	६०६	अकाधित	अबाधित
,,	६७७	स्वेच्छावृता	स्वेच्छाकृता
,,	६७६	त्रिपुटालय	त्रिपुटीलय
,,	६८८	परमेष्टि	परमेष्ठि
,,	१००८	अखण्डविलीनाय	अखण्डे विलीनाय
,,		पंचतीर्थ	युग्म, चतुष्तीर्थ, काव्यविशारद